"प्राचीन भारतीय साहित्य एवं कला में अप्सरा का प्रतिबिम्बन"

(प्रारम्भ से बारहवीं शती तक)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
की
डी० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

2002

निर्देशिका
डा० सुनीति पाण्डेय
प्रवक्ता
प्रा० इतिहास, सस्कृति एव
पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद, उ० प्र०

अनुसंधाता
शरदेन्दु नारायण राय
शोध छात्र
प्रा० इतिहास, सस्कृति एव
पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहावाद, उ० प्र०

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

निर्देशिका प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **शरदेन्दु नारायण राय,** शोध छात्र, **प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,** इलाहाबाद विश्व विद्यालय, इलाहाबाद ने **'प्राचीन भारतीय साहित्य एवं कला में अप्सरा का प्रतिबिम्बन'** (प्रारम्भ से लेकर बारहवी शती तक) विषय पर **डी०फिल० उपाधि** हेतु अपना शोध प्रबन्ध मेरे निर्देशन मे, विश्वविद्यालय के नियमानुसार पूर्ण किया है तथा शोध छात्र के रूप मे, इनके व्यक्तिगत अनुशीलन एवं परिश्रम पर आधृत यह शोध प्रबन्ध पूर्णतया मौलिक है।

सुनीति पाण्डेय

डा० सुनीति पाण्डेय

प्रवक्ता

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

इ०वि०वि०, इलाहाबाद

समर्पण

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

मनकामेश्वर भगवान् शिव

एवं

देव तुल्य दादा जी

स्व० वशिष्ठ नारायण राय

के

चरणों में

सादर समर्पित

आभारोक्ति

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का विरचन अनेक अध्येताओ एव विज्ञ पुरुषो की सहायता से ही सम्भव हो सका है। अत: मै शोध अध्ययन से जुड़े उन समस्त महानुभावो के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करना अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हूँ जिनके सहयोग से मैने शोध प्रबन्ध को प्रद्भावित किया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध पूज्यनीया डॉ० सुनीति पाण्डेय, प्रवक्ता, प्राचीन इतिहास सस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इ०वि०वि०, के निर्देशन मे लिखा गया है। मै अपना गौरव और सौभाग्य समझता हूँ कि मुझे ऐसी विदुषी पूज्यनीया के निर्देशन मे कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। उनके प्रति मै अपनी कृतज्ञता किन शब्दो मे ज्ञापित करूँ, क्योकि शब्दो के सामर्थ्य के परे अभिव्यक्ति की समस्या केवल गुरू के लिए ही होती है, और गुरू कृपा से मै मुक्त होना भी नही चाहता। इसलिए केवल इतना ही कहना चाहूँगा कि उनके 'बहुमूल्य समय', 'अमूल्य सहयोग', 'सर्वोच्च निर्देशन', 'अपार स्नेह' एव सानिध्य का प्रतिफल है यह शोध प्रबन्ध। और कुछ कहना परम आदरणीया, देवी सदृश मैडम के प्रति मात्र औपचारिकता ही होगी और गुरू-शिष्य सम्बन्ध कभी औपचारिक होता ही नही है। वस्तुत: इस अनुग्रह के अनुपात मे मेरे शब्द अपर्याप्त है। मेरा विनम्रतापूर्वक आभार तथा कृतज्ञता ज्ञापन एवं शतश: नमन उनके चरणो मे सादर समर्पित है। परम आदरणीया निर्देशिका के प्रति देव इ० जी० के० पाण्डेय का भी मुझ पर सर्वदा स्नेह और अनुकम्पा रहा है। समय-समय पर उनके बहुमूल्य विचारो एव सुझावो से मेरा सदैव मार्गदर्शन होता रहा है। एतदर्थ मै उनका भी विशेष आभारी हूँ।

प्रो० ओमप्रकाश, अध्यक्ष प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इ०वि०वि०, जो भारत के इतिहास जगत के मनीषियो की उस लम्बी और उदात्त परम्परा की एक जीवन्त कडी है तथा जिनके ज्ञानालोक से मै निरन्तर प्रकाश पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा प्राप्त करता रहा हूँ, उनके स्नेहमय मार्गदर्शन मे प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का विरचन किया गया है। साथ ही अपने विभाग के डॉ० आर० पी० त्रिपाठी का मै आभारी हूँ, जिनके प्रोत्साहन,

आशीर्वाद और अनुग्रह से ही इस शोध प्रबन्ध का विरचन किया गया है। साथ ही विभाग की वरिष्ठ प्रवक्ता डा० पुष्पा तिवारी की मेरे ऊपर विशेष अनुकम्पा रही, जिन्होने समय-समय पर मेरा पथ-प्रदर्शन किया। इस शोध प्रबन्ध का प्रणयन डॉ० हर्ष कुमार, डॉ० डी० पी० दूबे जो अपने विभाग मे ही प्रवक्ता है, के स्पष्ट विचारो, सुझावो और उनके असीम ज्ञान तत्वो का प्रतिफल है। ऐसे विराट व्यक्तित्वो को मै किन शब्दो मे और कैसे कृतज्ञता ज्ञापित करूँ ... .. श्रद्धावनत रहूँगा।

जीवन की धारा तो निरुद्देश्य बढ़ी चली जा रही थी, खुद को लक्ष्य से बहुत दूर समझता था, परन्तु इस दिशा मे मेरा मार्गदर्शन कराने वाले प्रेरणास्रोत मेरे प्रतियोगी जीवन के गुरू एवं बड़े भाई डॉ० शोभा सदन कुमार (एम०ए०, बी०एड०, पी-एच०डी०) निदेशक, ला मेरिडीयन कोचिग संस्थान, इलाहाबाद ने मुझे लक्ष्य के निकट ला दिया, उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करने के लिए मेरे शब्दो मे सामर्थ्य तो नही है, पर इतना ही कह सकता हूँ कि यदि उनकी प्रेरणा न मिलती तो मै यह शोध प्रबन्ध लिखने को उत्सुक न होता।

अपने अकथनीय एवं अवर्णनीय योगदान से जिन्होने मुझे इस कार्य मे सहयोग दिया, वह है श्री शिव प्रसाद मिश्र जी, प्रधानाचार्य, श्री रामेश्वर महादेव इण्टर कालेज, क्राइस्ट नगर, वाराणसी। इनके सहयोग से ही सस्कृत श्लोको का अर्थ स्पष्ट हो सका। अत· इस शोध-प्रबन्ध के पूर्ण होने मे उनका अवर्णनीय योगदान है। उनके प्रति मै किन शब्दो मे आभार प्रकट करूँ?

पाषाण के समान जड़ मेरे हृदय मे ज्ञानबीज को अंकुरित कर निरंतर स्नेह धारा से सीचने वाली वात्सल्यमयी माँ श्रीमती आशा राय एवं दिव्य प्रेरणा श्रोत पूज्यनीय पिताजी श्री रवि देव राय (एम०ए०, एल०टी०, डी०एच०ई०), अवकाश प्राप्त, जिला स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सूचना अधिकारी, के चरणो मे मेरा कोटि-कोटि प्रणाम। शिक्षक जन्मजात होता है एवं इस उक्ति को साक्षात् चरितार्थ करते है मेरे पिताजी। उनका अगाध एवं अक्षम मनोबल सदा मेरे साथ है, उनसे अमिट साहस, असीम धैर्य एवं अमूल्य प्रेरणा पाकर ही मैं इस शोध

प्रबन्ध को पूर्ण करने मे सक्षम हो सका हूँ।

मेरे परिवार रूपी संसार के त्रिदेव के समान मेरे तीनो अग्रज भाई डॉ० राघवेन्द्र नारायण राय (एम०एस०, बी०एच०यू०), कौशलेन्द्र नारायण राय (डिप्लोमा इन मैकेनिकल इंजीनियरिंग), ललित नारायण राय (एम०ए०, एल-एल०बी०) तथा लक्ष्मी स्वरूपा मेरी भाभियाँ श्रीमती माया राय, श्रीमती पूनम राय, श्रीमती प्रतिमा राय का अमूल्य सहयोग मेरे साथ रहा है, उनके प्रति कृतज्ञता की अनुभूति मेरी निजी सम्पदा है, किसी भी प्रकार के औपचारिक आभार-प्रकाशन से मै उनके मूल्य की क्षति नही करना चाहता। धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ अपनी धर्मपत्नी श्रीमती पूनम राय को जिन्होने स्वय शोधरत होने के बावजूद अपना अमूल्य समय निकाल कर मेरे कार्यो मे सहयोग करते हुए मेरा प्रोत्साहन करती रही। धन्यवाद प्रेषित करना चाहता हूँ, अपने भतीजो नीरज कुमार राय, अनुराग राय, अशुमान राय को, जिन्होने शोध प्रबन्ध के प्रणयन हेतु सहायक सामग्री उपलब्ध कराने मे मेरी मदद की, जिससे यह कार्य शीघ्रातिशीघ्र सम्पादित किया जा सका है। मै अपने उन सभी स्नेहीजनो एवं शुभाकाक्षियो के प्रति हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी मंगल कामनाओ एवं शुभेच्छाओ का मुझे सदा ही सहारा मिलता रहा है।

सम्पूर्ण प्रयासो के बाद भी मै यह नही समझता कि शोध-प्रबन्ध सर्वथा दोष विहीन है। मुझे आशा ही नही अपितु पूर्ण विश्वास है कि अल्पज्ञता एवं प्रमादवश हुई त्रुटियो के लिए विद्वत्जन मुझे क्षमा करेगे और मेरे प्रयास को सार्थक कर मेरा मनोबल ऊँचा करेगे।

शरदेन्दु नारायण राय

अनुसंधाता

शरदेन्दु नारायण राय

'उर्वशी'

पर क्या बोलूं ? क्या कहूँ ?

भ्रान्ति यह देह-भाव।

मै मनोदेश की वायु व्यग्र, व्याकुल, चंचल,

अवेचत प्राण की प्रभा, चेतना के जल मे

मै रूप रंग-रस-गन्ध-पूर्ण साकार कमल।

मै नही सिन्धु की सुता,

तलातल-अतल-वितल पाताल छोड़,

नीले समुद्र को फोड़ शुभ्र, झलमल फेनाशुक मे प्रदीप्त

नाचती ऊर्मियो के सिर पर

मै नही महातल से निकली।

मै नही गगन की लता

तारको मे पुलकिता फूलती हुई,

मै नही व्योमपुर की बाला

विधु की तनया, चन्द्रिका संग,

पूर्णिमा-सिन्धु की परमोज्ज्वल आभा तरंग,

मै नही किरण के तारो पर झूलती हुई भू पर उतरी।

मै नाम गोत्र से रहित पुष्प,

अम्बर मे उड़ती हुई मुक्त आनन्द शिखा

इतिवृत्त हीन,

सौन्दर्य चेतना की तरंग,

सुर-नर-किन्नर-गन्धर्व नही,

प्रिय। मै केवल अप्सरा

विश्वनर के अतृप्त इच्छा सागर से समुद्भूत ।

जन-जन के मन की मधुर वहिन, प्रत्येक ह्दय की उजियाली,

नारी की मै कल्पना चरम नर के मन मे बसने वाली।

विषधर के फण पर अमृतवर्ति,

उद्धत, अदम्य, बर्बर बल पर

रूपांकुश, क्षीण मृणाल-तार।

मेरे सम्मुख नत हो रहे गजराज मत्त,

केसरी, शरभ, शार्दूल, भूल निज हिस्त्र भाव

गृह-मृग समान निर्विषं, अहिस्त्र बनकर जीते।

मेरी भ्रू-स्मिति को देख चकित, विस्मित, विभोर

शूरमा निमिष खोले अवाक् रह जाते है,

श्लथ हो जाता स्वयमेव शिजिनी का कसाव,

संस्त्रस्त करो से धनुष बाण गिर जाते है।

कामना-वहिन की शिखा मुक्त से अनवरूद्ध,

मै अप्रतिहत मै दुर्निवार,

मै सदा घूमती फिरती हूँ

पवनान्दोलित वारिद-तरंग पर समासीन

नीहार-आवरण मे अम्बर के आर-पार,

उड़ते मेघों को दौड़ बाहुओ मे भरती,

स्वप्नो की प्रतिमाओ का आलिंगन करती।

विस्तीर्ण सिन्धु के बीच शून्य, एकान्त द्वीप,

यह मेरा उर।

देवालय मे देवता नही, केवल मै हूँ।

मेरी प्रतिमा को घेर उठ रही अगुरू-गन्ध,

बज रहा अर्चना मे मेरी मेरा नूपुर

भू-नभ का सब संगीत नाद मेरे निस्सीम प्रणय का है,

सारी कविता जयगान एक मेरी त्रयलोक-विजय का है।

प्रस्तुत काव्य खण्ड रामधारी सिंह 'दिनकर' रचित **'उर्वशी'** खण्ड-काव्य का अंश है। पुरूरवा के पूछने पर उर्वशी स्वयं अपना परिचय देती है। 1972 ई० मे इसी खण्ड-काव्य पर उन्हे ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त है।

उर्वशी पुरूरवा को अपना परिचय देते हुए कहती है कि हे राजन! मै तुमसे क्या कहूँ और क्या उत्तर दूँ। तुम लोग मुझे भौतिक शरीर मात्र समझते हो, जो तुम्हारा भ्रम है। मै तो पुरूष के मनोदेश मे (मानसिक जगत मे) व्यग्र, व्याकुल और चचल होकर, घूमड़ने वाली वायु हूँ, जो उसमे कामनाओ की तरगे पैदा करती रहती है। मै उसके मन के लिए पर्दे मे प्रवाहित जीवन शक्ति की क्रान्ति हूँ और उसकी चेतना के जल मे रूप, रग, रस और गन्ध से परिपूर्ण कमल की साक्षात् मूर्ति हूँ जिससे उसकी सभी इन्द्रियां परितृप्त होती रहती है। मै पृथ्वी के नीचे सातो लोको को छोड़कर नीले समुद्र के गर्भ से उद्भूत होकर श्वेत फेनो के वस्त्र मे प्रकाशित होने वाली समुद्र की कन्या लक्ष्मी नही हूँ जो उनकी लहरो पर थिरकती हुई दिखाई देती है।

उर्वशी पुरूरवा से कहती है कि तारो मे रोमाचित और प्रफुल्लित मे कोई आकाश की लता भी नही हूँ, न आकाश पुर मे निवास करने वाली कोई कन्या ही हूँ। मै चन्द्रमा की पुत्री भी नही हूँ, जो उसकी चांदनी के साथ पृथ्वी पर विचरण करने के लिए उतर आती है और न तो पूर्णिमा के समुद्र मे उठने वाली परम उज्जवल प्रकाश की लहर ही हूँ जो किरणो के तारो पर झूलती हुई पृथ्वी पर उतर आती है। वास्तव मे मै वह पुष्प हूँ जिसका न तो कोई नाम है न ही कोई गोत्र है। मै पुरूष के मन रूपी आकाश मे उठने वाली आनन्द की ज्योति हूँ। मेरा कोई इतिहास भी नही है अर्थात् मै वर्णन का विषय नही हूँ बल्कि पुरूष के मन मे सौन्दर्य की जो चेतना जागती है मै उसी की एक लहर मात्र हूँ। तुम मुझे देवता, मनुष्य, किन्नर और गन्धर्व जाति का भी मत समझना, मै तो विश्व के नर मात्र के हृदय की अतृप्त इच्छाओ के समुद्र मे जन्म लेने वाली अप्सरा हूँ। (अप्सरा = जल से निकली हुई) अर्थात् मै पुरूष की मूर्तिमान अतृप्त कामना मात्र हूँ।

उर्वशी पुरूरवा से कहती है कि राजन। मै प्रत्येक पुरूष के ह्रदय मे जलने वाली कामना की वह आग हूॅ जो पुरूष को जलाती है किन्तु उसे वह जलन भी मीठी लगती है, मै उसके ह्रदय को प्रदीप्त करने वाली प्रकाश की किरण हूॅ। मै नर के मन की वह चरम कल्पना हूॅ जो नारी बनकर सदा उसके मन मे निवास करती रहती है। मै विष से भरे सर्प के फण पर बनी हुई अमृत की बाती हूॅ। यद्यपि मेरे रूप का अकुश कमल तन्तु के समान अत्यन्त क्षीण है किन्तु वह पुरूष की समस्त उदण्ड पाशविक शक्ति को नियंत्रित कर देता है। मेरे सामने मतवाले हाथी भी झुक जाते है और सिंह, शरभ (एक हिंसक पक्षी) तथा व्याघ्र भी अपनी हिंसक प्रवृत्ति को भूलकर अहिसक बनकर घर के पालतू मृग के समान जीवन व्यतीत करने लगते है। बड़े-बड़े शूरवीर योद्धा भी मेरी भौहो की मुस्कान देखकर चकित और तल्लीन हो जाते है तथा आंख खोले अपलक दृष्टि से मुझे देखते रह जाते है। उनके धनुष की खीची हुई डोरी अपने आप ढ़ीली हो जाती है तथा कांपते हुए हाथो से धनुष बाण दोनो गिर जाते है अर्थात् मेरे रूप के गुलाम बन जाते है।

मै पुरूष के ह्रदयाकाश मे निवास करने वाली कामनारूपी अग्नि की वह शिखा हूं जिसका नियंत्रण करना और आगे बढने से रोक सकना असम्भव है। मै उसकी सांसो की वायु पर उड़ने वाले मनोभावो के बादलो पर सवार होकर वासना के कुहरे से ढके हुए उसके ह्रदयाकाश के आर-पार घूमती रहती हूं। मै उसकी कल्पनाओ के उडते हुए मेघखण्डो को अपनी भुजाओ मे समेटकर उनकी बनायी हुई स्वप्नमूर्ति का आलिगन करती रहती हूॅ। जैसे विंस्तृत अगाध जलराशि के बीच पड़े हुए व्यक्ति को एकाकी छोटा सा द्वीप भी आशा और उत्साह से परिपूर्ण कर देता है, उसी प्रकार मेरा ह्रदय भी कामनाओ के समुद्र मे पड़े हुए पुरूष को विश्राम देने वाला बन जाता है। हे राजन् ! संसार के समस्त धर्म और दर्शन की मूल प्रेरणा मै ही हूॅ। यह मन्दिर मे दिखाई देने वाली देव प्रतिमा नही, मेरी प्रतिमा है और वहां उठने वाली धूप की गन्ध देवता के चारो ओर नही बल्कि मेरे ही चारो ओर फैलकर मुझे घेर रही है। मन्दिर की पूजा की बेला मे मेरी ही पूजा हो रही है और उस समय होने

वाली बाजों की ध्वनि वास्तव मे बाजो की स्वर-लहरी नही है वह तो मेरे नूपुरो की मधुर झंकार मात्र है। इस पृथ्वी पर और आकाश मे सगीत की जितनी भी ध्वनियां हो रही है उन सबमे मेरे ही प्रणय की मधुर रागिनी है और कविताएं मेरे इसी तैलोक्य विजय का निरन्तर कीर्तन करती रहती हैं।

विषयानुक्रमणिका

प्रस्तावना

प्र स्तावना

प्रस्तावित शोध प्रबन्ध **"प्राचीन भारतीय इतिहास एवं कला में अप्सरा का प्रतिबिम्बन"** मे ऋग्वैदिक काल से लेकर बारहवी शती तक के विभिन्न साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोतो मे अप्सरा के स्वरूप और उसकी सामाजिक तथा धार्मिक महत्ता का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने का, आलोचनात्मक और समीक्षात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

अप्सरा की व्युत्पत्ति अनेक विद्वानो ने जल कण से मानी है। जिसका अर्थ जल से उत्पन्न प्राणी होता है। वामन शिवराम आप्टे ने संस्कृत हिन्दी शब्द कोश मे बताया है कि 'अप्सरस् (स्त्री) अभ्दय: सरन्ति उद्गच्छन्ति' - अप् + सृ + असुन् ।

निरूक्तकार यास्क ने कहा है कि 'अप्सरा अप्सारिणी अपि वाऽप्स इति रूप नामात्सातेरप्सानीयं भवत्यादर्शनीय व्यापनीयं वा।' अर्थात् अप्सरा जल मे चलती है या (स्त्री) कर्मो मे प्रयुक्त चलती है या गृह कार्यो मे चलती है या रूपवती होती है। अत. अप्सरा जल से उत्पन्न प्राणी ज्ञात होती है। जिसका तात्पर्य जल मे सरण करने वाली स्त्री रूपिणी शक्ति है। निघण्टु ने अपस् का अर्थ रूप भी दिया है अर्थात् अप्सरा का तात्पर्य आरम्भ से जल मे सर्पण करने वाली स्त्री माना जाता है।

अमरकोश मे भी अप्सरा का तात्पर्य जल मे चलने वाली स्त्री बतलाया गया है। इस प्रकार अप्सरा का तात्पर्य जल से उत्पन्न प्राणी ज्ञात होता है।

रामायण मे कहा गया है कि-

अप्सुनिर्मथनादेव रसात् तस्माद् वरस्त्रिय:।

उत्पेतुर्मनुज श्रेष्ठ तस्मादप्सरसोऽभवन् ।। अर्थात् समुद्र का मंथन करने से ही अप् (जल) मे उसके रस से सुन्दरी स्त्रियां उत्पन्न हुई। इसीलिए उन्हे अप्सरा कहा गया। पौराणिक इनसाइक्लोपीडिया मे भी अप्सरा की उत्पत्ति क्षीर सागर के मंथन से बताया गया है।

ऋग्वेद के दो मन्त्रो मे अप्सराओ का निवास स्थान गन्धर्वो के साथ जल में बताया गया है। अथर्ववेद मे भी एक जगह इनका निवास समुद्र बताया गया है। साथ ही ऋग्वेद

के एक स्थल पर इनका निवास परम व्योम बताया गया है, जिसका तात्पर्य कुछ विद्वान इन्द्र का आवास स्वर्ग स्वीकार किये है। अथर्ववेद के एक मन्त्र मे इनका निवास जन-निवास से दूर जल मे या वृक्ष आदि पर बताया गया है।

वैदिक कालीन कुछ सन्दर्भो मे ये सूर्य की किरणे, कुछ मे सुगन्धित वनस्पतियां, कुछ मे अग्नि की सन्तान, कुछ मे आकाशीय नक्षत्र, तो कुछ सन्दर्भो मे मानवी स्त्रियां बतलायी गयी है।

रमाशकर शुक्ल रसाल द्वारा सम्पादित 'भाषा शब्द कोश' जो प्रयाग वि० वि०, 1936 मे प्रकाशित हुआ, मे अप्सर का अर्थ पानी मे रहने वाला जीव, अम्बु कण, वाष्पकण, स्वर्ग की नर्तकी, स्वर्ग की वेश्या जैसे उर्वशी, जो देवराज इन्द्र के दरबार मे नृत्य करती थी। ये कामदेव की सहायिकाएं भी है, देवागना, परी, हूर आदि बताया गया है। इसी प्रकार आचार्य राम चन्द्र वर्मा, द्वारा सम्पा०, लोक भारती प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'प्रामाणिक हिन्दी कोश' मे अप्सरा को स्वर्ग की वेश्या, इन्द्र की सभा मे नाचने वाली देवांगना, परम रूपवती स्त्री, परी आदि बताया गया है।

उपर्युक्त विवेचनो के आधार पर कहा जा सकता है कि अप्सरा जल मे निवास करने वाली प्राणी थी, इसीलिए इसे जल परी, या जलीय पक्षी माना गया, बाद मे इसे नदी देवता माना जाने लगा। उसके बाद इन्हे वनस्पतियो से सम्बन्धित कर, राज सोम से सम्बन्धित कर दिया गया। कालान्तर मे इन्हे सन्तति की देवी के रूप मे माना गया। तदुपरान्त व्योम की निवासी होने के कारण इन्हे इन्द्र के दरबार मे नृत्य संगीत से सम्बन्धित कर दिया गया।

इस शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत अप्सरा के विभिन्न स्वरूपो का कलात्मक और भावात्मक चित्रण किया गया है जो अप्सराओ के देवलोक से लेकर पृथ्वी पर उनके मानवीय प्रारूपो को भी स्पष्ट करता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को पॉच अध्यायो मे विभक्त किया गया है।

प्रथम अध्याय ''वैदिक साहित्य मे अप्सरा का प्रतिबिम्बन'' है। ऋग्वैदिक साहित्य में प्रकृति के प्रारूपो को ईश्वरीय स्वरूप प्रदान करने का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु आर्य और अनार्य वर्ग के आत्मसातीकरण के दौर मे विभिन्न देवी-देवताओ का क्रमशः सामूहीकरण

करते हुए उन्हे देवत्व, अर्द्धदेवत्व स्वरूप प्रदान करने का भी विश्लेषण ऋग्वैदिक साहित्य मे प्राप्त होता है। ऋग्वेद मे ऐसे कई उद्धरण है जिसमे स्त्रियो का एक वर्ग अप्सरा के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि अप्सराएं अपने आप मे स्वतन्त्र थी तथापि इनका विशेष सम्पर्क गन्धर्वो के साथ था। इन अप्सराओ तथा गन्धर्वो का ऐतिहासिक स्वरूप ऋग्वैदिक साहित्य मे स्पष्ट रूप से विदित नही होता है किन्तु उनके विविध क्रिया-कलापो का चित्रण वैदिक साहित्य से स्पष्ट होता है।

ऋग्वैदिक काल मे युद्ध का अधिक महत्व था, अत: युद्ध मे आर्यो को शामिल करने के लिए वीरगति प्राप्त योद्धाओ को स्वर्गलोक तक पहुचाने और स्वर्गलोक मे उनका अभिनन्दन का कार्य अप्सराओ को सौपा गया है। तात्पर्यत· अप्सराएं वे देवकन्याएं प्रतीत होती है जिनका सानिध्य वीरगति प्राप्त योद्धाओ को प्रदान करने का वर्णन प्राप्त होता है।

ऋग्वेद मे अप्सराओ को इन्द्र के निर्देशानुसार कार्य करने वाली देवकन्याओ के रूप मे वर्णित किया गया है। चूंकि इन्द्र आर्यो के जातीय देवता है और उनके दरबार मे अप्सराओ की उपस्थिति, आर्यो के सन्दर्भ मे अप्सरा के महत्व को प्रदर्शित करता है।

वैदिक साहित्य मे अप्सराओ के अनेक नाम मिलते है जिनमे उर्वशी, मेनका, शकुन्तला, सहजन्या, प्रम्लोचा, अनुम्लोचा, विश्वाची, विशेष रूप से उल्लेखनीय है किन्तु इन नामो और वर्णित प्रसंगो के आधार पर यह स्पष्ट नही होता है कि ये प्रकृति या ईश्वर के किस प्रारूप का प्रतिनिधित्व करती है, किन्तु यह अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि अप्सराएं मानवीय स्त्रीरूपा के रूप मे भी वर्णित है। अप्सराएं वैदिक साहित्यो मे दैवीय और मानवीय दोनो रूप धारण करती है, जिस प्रकार इन्द्र आर्यो के जातीय देवलोक के देवता, मानवीय रूप धारण करते है।

ऋग्वेद मे वर्णित उर्वशी-पुरुरवा प्रसंग विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसमे उर्वशी मानवीय स्त्री का प्रतिरूप है और पुरुरवा एक ऐतिहासिक व्यक्ति है। जो यह प्रामाणित करता है कि मानव को अप्सराओ के साथ, देवलोक में देवकन्या के रूप में नहीं बल्कि पृथ्वी पर मानवी स्त्री रूप मे अनेक स्वरूपो के साथ, प्रस्तुत किया गया है।

ऋग्वेद मे अप्सरा नाम का उल्लेख मात्र पाच बार हुआ है और यह पाचो बार अलग-अलग रूपो मे प्रस्तुत की गयी है। उर्वशी-पुरुरवा सवाद मे उर्वशी को सूर्य अन्तरिक्ष मे घूमने वाली के रूप मे प्रस्तुत किया गया है और वशिष्ठ ऋषि से इन पर नियंत्रण स्थापित करने का आग्रह किया गया है। तात्पर्यत· एक तरफ यह संवाद उर्वशी को देवलोक की कन्या के रूप मे वर्णित करता है तो दूसरी तरफ इन्हे ऐतिहासिक पुरुषो के साथ जोड़कर पृथ्वी पर भी निवास करने वाले के रूप मे वर्णित करता है क्योकि उर्वशी एक गन्धर्व कन्या है तथा पुरुरवा एक आर्य संतान का संवाद जिस प्रसंग मे ऋग्वेद मे वर्णित किया गया है उससे यह भी ज्ञात होता है कि दोनो देव न होकर उर्वशी और पुरुरवा ऐतिहासिक व्यक्ति है परन्तु जिन शर्तो के आधार पर उनका विवाह होता है, उससे यह प्रतीत होता है कि यह देवलोक और पृथ्वीलोक के सम्बन्धो का मानवीकरण किया गया है। यद्यपि कई शोध पत्रो और समकालीन साहित्यो मे पुरुरवा को ऐतिहासिक स्थल या व्यक्ति प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है जिसका समीक्षात्मक मूल्यांकन प्रथम अध्याय मे किया गया है।

वैदिक ग्रंथो मे अप्सराओ के सन्दर्भ मे अनेक उल्लेख प्राप्त होते है लेकिन इन उल्लेखो से उनका ऐतिहासिक स्वरूप स्पष्ट नही होता है क्योकि एक तरफ उनका वर्णन देवलोक की कन्या के रूप मे किया गया है तो दूसरी तरफ इनके स्वरूपो को पृथ्वी पर भी उपस्थित किया गया है तथा दोनो लोको मे ही इन्हे विवाह करने का अधिकार प्रदान किया गया है किन्तु इनके स्थायी पति के रूप मे व्याख्या नही मिलती जिससे यह प्रतीत होता है कि वैदिक काल मे आर्य समाज की स्त्रियो का यह प्रतिनिधित्व नहीं करती है क्योकि आर्य समाज मे स्त्रियो के स्थायी पति रखने की प्रथा थी और विवाह-विच्छेद की कोई अवधारणा नही थी। अप्सराओं को अपने पति को चुनने का अधिकार प्रदान कर आर्य कालीन स्त्रियो की स्वतन्त्रता को प्रतीकात्मक रूप प्रदान किया गया है किन्तु अपनी इच्छानुसार पति बदलने का अधिकार आर्य-प्रवृत्ति से मेल नही खाता है। अत: शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है कि पुरुरवा-उर्वशी संवाद किस प्रकार से आर्य समाज की विचारधारा को प्रस्तुत करता है।

ऋग्वेद मे जहॉ 'उर्वशर नाम्नि' अप्सरा का उल्लेख है तो उत्तरवैदिक साहित्यो मे अप्सराओ के कई नाम प्रकाश मे आते है, जैसे शुक्ल यजुर्वेद मे उर्वशी और मेनका का वर्णन है तो शतपथ ब्राह्मण मे उर्वशी और शकुन्तला का नाम आया है। शतपथ ब्राह्मण मे अप्सराएं जलीय पक्षी या जल परी के रूप मे भी वर्णित की गयी है। अथर्ववेद मे इनका निवास जलो मे होता है अर्थात् अप्सराओ का कोई ऐतिहासिक स्वरूप नही है, यह बराबर परिवर्तित होता रहता है। उत्तरवैदिक साहित्य मे अप्सराओ के प्रणय का उपभोग करने का अधिकार गन्धर्वो तथा मनुष्यो दोनो को दिया गया है। तात्पर्यत· ये देवलोक मे भी मान्य है और पृथ्वी लोक पर भी क्रियाशील है। अथर्ववेद से स्पष्ट होता है कि वैवाहिक जीवन सुखद होने के लिए अप्सराओ से प्रार्थना भी की गयी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अप्सराए मानवीय स्त्री होने के साथ-साथ दैवीय रूप मे भी प्रतिष्ठित है।

द्वितीय अध्याय "महाकाव्यो एवं पुराणो मे अप्सरा का प्रतिबिम्बन" है। इस अध्याय मे महाभारत, रामायण एवं पुराणो से प्राप्त सामग्री के आधार पर अप्सराओ के रूप, स्वरूप, कार्य-व्यवसाय एवं चरित्र का मूल्यांकन किया गया है। महाभारत मे अप्सराओ का पूर्णरूपेण दैवीकरण कर दिया गया है। इन्हे कश्यप और प्राधा की संतान बताया गया है। महाभारत मे अनेक ऐसे प्रसंग मिलते है जब इन्द्र की आज्ञा से अप्सराओ ने तपस्वियो की तपस्या भंग किया है। महाभारत के अन्य प्रसंगो मे अप्सराओ का उल्लेख देवराज इन्द्र की सभा मे नर्तकी के रूप मे वर्णित किया गया है। इन्द्र की सभा मे नित्य देवी-देवताओ की उपस्थिति होती थी और उर्वशी, रम्भा इत्यादि अप्सराएं नृत्य और गीत से उनका मनोरंजन करती थी। महाभारत मे ऐसा वर्णन भी प्राप्त हुआ है कि अर्जुन के इन्द्रलोक मे पहुंचने पर उर्वशी कामासक्त होकर उनके पास पहुंचती है तथा अर्जुन द्वारा इन्कार करने पर उन्हें शाप देकर लौट जाती है, यह अप्सराओ की शक्ति का परिचायक है। पाण्डवो की वनवास काल मे भी अप्सराओ की उपस्थिति का वर्णन है। अत: महाभारत से प्राप्त अप्सरा विषयक तथ्यो का विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

रामायण के एक प्रसंग से ज्ञात होता है कि अप्सराओं की उत्पत्ति समुद्र मंथन से हुई

थी किन्तु देवो और दानवो दोनो के द्वारा उन्हे पत्नी रूप मे स्वीकार नही किये जाने के कारण ये सर्वसाधारण के लिए सुलभ हो गयी परन्तु देवता भी यदा-कदा उनके साथ रमण के लिए उत्सुक थे। महाकाव्यो मे अप्सराएं अपनी सुन्दरता के लिए प्रशसित की गयी है। रामायण मे वर्णित किया गया है कि भारद्वाज आश्रम मे अत्यत सुन्दरी अप्सराएं उपलब्ध थी, उन्हे देखकर भरत के सैनिक अयोध्या वापस नही लौटना चाहते थे। यह भी वर्णित है कि राजाओ के स्वागत और मनोरजन के लिए अप्सराओ का आह्वान किया जाता था। सक्षेप मे अप्सराओ का मुख्य कार्य मनुष्यो का मनोरंजन करना था। रामायण मे अप्सराओ से सम्बन्धित तीन प्रसंग अति उल्लेखनीय है–

प्रथम मेनका द्वारा विश्वामित्र का तपोभंग।

द्वितीय विश्वामित्र द्वारा रम्भा का शाप दिया जाना।

तृतीय रावण द्वारा रम्भा का शील हरण।

इन तीनो प्रसंगो का विश्लेषण ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इस शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत किया गया है।

पुराणो मे यक्ष, राक्षस, किन्नर, गन्धर्व, अप्सरा आदि का जो उल्लेख मिलता है वह स्पष्टत: आर्येतर जातियो के अस्तित्व की सूचना देता है। प्राचीन जातियो मे गन्धर्वो और अप्सराओ का प्रभाव भारतीय संस्कृति पर विशेष रूप से पड़ा। इनकी वैवाहिक परम्परा भारतीय विवाहो मे गन्धर्व नाम से प्रसिद्ध है। अप्सराओ के विषय मे पुराणो मे जिस विषय स्वरूप का स्पष्टीकरण किया गया है वह गन्धर्वो के साथ उनके साहचर्य का परिचायक है। विष्णु, वायु, मत्स्य तथा ब्राह्मण पुराणो के अनुसार गन्धर्व और अप्सराओ का साहचर्य सुमेरू पर्वत पर होता था। गन्धर्वो के साथ उनके सहंवास का विस्तृत विवरण पुराणो मे उपलब्ध है। पुराणो मे जहॉ कही नृत्य आदि का अंकन है वहाँ नर्तकी के रूप मे अप्सराओ का उल्लेख मिलता है। भागवत् पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण के अवतार के समय अप्सराएं नृत्य कर रही थी। पुराणो का विश्लेषण अप्सराओं को विभिन्न स्वरूपों मे प्रतिबिम्बित करता है क्योकि एक तरफ उन्हे सहवास और नृत्य शैली मे पारंगत घोषित किया गया है तो दूसरी

तरफ उन्हे अत्यंत पवित्र माना गया है जिन्हे धार्मिक कृत्यो मे भाग लेने के लिए उनका आह्वान किया गया है। यह विश्लेषण पृथ्वी लोक और देव लोक मे अप्सराओ की महत्ता का विश्लेषण करता है।

तृतीय अध्याय "मौर्य काल से लेकर गुप्तोत्तर कालीन साहित्य मे अप्सरा का प्रतिबिम्बन" है।

इस काल के प्रमुख साहित्यो मे बौद्ध-जैन साहित्य, पतंजलि का महाभाष्य, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, एवं कालिदास के महाकाव्यो की गणना की जाती है। बौद्ध पाली ग्रन्थो से स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज मे अनेक देवी-देवताओ के साथ लोक धर्म के अन्तर्गत जडपूजा प्रचलित थी। वृक्षो को देवता, अप्सरा, नाग आदि का निवास स्थान मानकर लोग संतान, यश, धन आदि की प्राप्ति के लिए वृक्षोपसना करते थे। यह उद्धरण इस काल मे भी अप्सराओ की शक्ति रूप मे उपस्थिति का परिचायक है। अप्सराओ के रूप, स्वरूप, गुण एवं कृत्य का विस्तृत वर्णन 'ललित विस्तर' मे प्राप्त होता है। कहा गया है कि कामदेव ने अपनी कन्याओ को बोधिसत्व की परीक्षा लेने के लिए भेजा था। इसी प्रकार जैन-प्राकृत ग्रंन्थो मे अप्सराओ का निर्देश नर्तकियो के रूप मे प्राप्त होता है। अत इस अध्याय के अन्तर्गत बौद्ध-जैन साहित्यो मे प्राप्त अप्सराओ के विभिन्न रूपो और उनके सामाजिक, धार्मिक दशा का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

इस अध्याय मे यह स्पष्ट करने की चेष्टा की गयी है कि कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' मे गणिका या रूपा जीवा का जो वर्णन प्राप्त होता है वह अप्सराओ के मानवजीवन का किस प्रकार से प्रतिनिधित्व करता है? कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' मे पेशेगत स्त्रियों को राष्ट्र की ओर से नियंत्रित करने की सम्मति दी है और राज्य द्वारा उन्हे नियमानुसार कार्य करने के लिए विशेष निर्देश भी उल्लिखित किये है। आठ वर्ष की आयु से ही इन्हे राजकीय सेवा मे नियुक्त कर दिया जाता था, तभी से ये राजदरबार मे नृत्य-गायन आदि प्रारम्भ कर देती थी। 'अर्थशास्त्र' मे गणिका की सुरक्षा का उत्तरदायित्व राज्य पर निर्भर करता था। तात्पर्यत: जो कार्य वैदिक साहित्य से लेकर पुराणो तक अप्सराओ को प्रदान किया गया था, वह कार्य

मौर्य कालीन साहित्यो मे गणिकाओ को प्रदान किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि दोनो मे कही न कही समानता है।

लौकिक साहित्य के ग्रंथो मे कालिदास के नाटको एवं महाकाव्यो का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इनके ग्रंथो मे अप्सराओ का विस्तृत विवरण नही मिलता है तथापि इनके नाटक 'विक्रमोर्वशीयम' की मुख्य पात्रा उर्वशी ही है, जिसमे उसके रूप,गुण की विशिष्टतम् व्याख्या की गयी है। विक्रमोर्वशीयम् की नायिका भरत प्रणोत नाट्य के प्रयोग मे निपुण बतायी गयी है। कालिदास ने अपने प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम' मे अप्सरा मेनका, की बेटी शकुन्तला को नायिका के रूप मे लिया है। कालिदास ने इसकी कथा महाभारत और पुराण से ली है। कालिदास की मान्यता है कि अप्सराएं स्वर्ग मे रहने वाली परियां है जो इन्द्र के दरबार मे नृत्य करती है। रणभूमि मे योद्धाओ के मरने पर उन्हे स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा अप्सराएं उनका अभिनन्दन करती है। 'विक्रमोर्वशीयम' मे वर्णित है कि इनका प्रणय किसी व्यक्ति विशेष से न होकर सामूहिक होता है। ये नर-नारायण द्वारा उत्पन्न उर्वशी के आख्यान से भी परिचित थे तथा शकुन्तला मेनका की पुत्री है यह भी उन्हे अच्छी तरह ज्ञात था। 'विक्रमोर्वशीयम्' मे वर्णित है कि अप्सराएं मैनाक और हेमकूट पर्वतो पर विहार करती थी।

चतुर्थ अध्याय "हर्ष काल से लेकर बारहवी शत्ती के साहित्य मे अप्सरा का प्रतिबिम्बन" है।

हर्षकालीन साहित्यो मे भी अप्सराओ का चित्रण किया गया है। इस काल के लेखको मे वाणभट्ट, भतृहरि तथा भारवि ने अप्सराओ का उल्लेख किया है कि परन्तु वाणभट्ट का विवरण पौराणिक साहित्य से प्रभावित है। 'कादम्बरी' मे अप्सराओ के चौदह कुलो का वर्णन उसी प्रकार से प्राप्त होता है जिस प्रकार वायु, ब्राह्मण, तथा ब्रह्म पुराणो मे उल्लिखित है। इनके कथानक की मुख्य नायिका कादम्बरी और महाश्वेता अप्सराओ के कुल से सम्बन्धित है।

भतृहरि ने भी अपने 'श्रृंगार शतक' में अप्सराओं का उल्लेख किया है। उनका कहना

है कि कठोर तपस्या के उपरान्त व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा स्वर्ग प्राप्ति का उद्देश्य अप्सराओ का भोग करना है। तात्पर्यतः इससे यह स्पष्ट होता है कि स्वर्ग मे अप्सराओ द्वारा श्रेष्ठ जनो का स्वागत करने की परम्परा इस समय तक समाज मे प्रचलित है।

भारवि ने अपनी पुस्तक 'किरातार्जुनीयम्' मे अप्सराओ का विहार स्थल हिमालय की चोटियां बताया है। अप्सराओ के लिए उन्होने दिव्य स्त्री, सुर-सुन्दरी इत्यादि शब्दो का प्रयोग किया है। इसमे वर्णित है कि जब अर्जुन ने पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए तप प्रारम्भ किया तो उनकी तपस्या भंग करने के लिए इन्द्र ने अप्सराओ को भेजा अर्थात अप्सराए इस काल मे भी तप भग का माध्यम मानी जाती है।

इस काल मे अप्सराओ का मानवीकरण भी कर दिया गया। हर्ष काल से पूर्व जिस प्रकार विभिन्न धर्मो के अन्तर्गत सशोधन की प्रक्रिया चल रही थी, उसके कारण अप्सराओ को संशोधित रूप मे प्रस्तुत किया जाता रहा। जैसे हिन्दू धर्म मे भागवत और शैव धर्म का उद्भव, बौद्ध धर्म मे महायान सम्प्रदाय तथा जैन धर्म मे श्वेताम्बर सम्प्रदाय का उदभव। इसके कारण ईश्वर को भी मानवीय रूप मे अभिव्यक्त कर दिया गया। अतः इन ईश्वरीय परिचारिकाओ के स्वरूप को भी मानवीय रूप मे प्रस्तुत करने की बाध्यता हो गयी। हर्ष के बाद सामन्तवाद की उत्पत्ति के बाद, उत्तर और दक्षिण भारत मे शासको को देवत्व प्रदान किया जाने लगा, उसके कारण भी अप्सराओ का मानवाकरण किया जाने लगा क्योंकि उत्तर भारत मे जो भी प्रमुख राज वंश थे उन्होंने अपनी उत्पत्ति सूर्य, चन्द्र और अग्नि से जोड़कर स्वत: को देवता का रूप प्रदान करना आरम्भ कर दिया अत: इसे सार्थकता प्रदान करने के लिए देवताओ से जुड़े भाव भंगिमाओ को अपने साथ जोड़ने की बाध्यता हो गयी तथा सामाजिक धार्मिक शान-शौकत को प्रमाणित करने के लिए कोमलांगियो एवं तन्वंगियो को देव वरदान के रूप मे प्रस्तुत किया जाने लगा।

इसी प्रकार दक्षिण भारत मे भी राजत्व को देवत्व से जोड़ने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई अर्थात मन्दिरो मे एक तरफ देवताओ की और दूसरी तरफ उनके मानवीय रूप शासकों की

मूर्तियां पदस्थापित की जाने लगी अर्थात शासक भी देवताओ के समकक्ष होकर अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करना चाहते थे इसलिए उन्हे भी देवताओ के दरबार से सम्बन्धित प्रक्रियाओ को अपनाने की बाध्यता थी अत शासको का ईश्वरीकरण किया गया और अप्सराओ का मानवीकरण-देवदासी के रूप मे किया गया।

'राजतरगिणी', 'प्रबन्ध चिन्तामणि', 'कुट्टनीतम' आदि अनेक ग्रथो मे देवदासी प्रथा का विशद विवरण प्राप्त होता है। ह्वेनसाग ने अपने यात्रा विवरण मे देवदासियो का उल्लेख किया है। वह वर्णित करता है कि उसने प्रत्यक्षदर्शी रूप मे मुल्तान के सूर्यमन्दिर मे देवदासियो को देखा था। अलबरुनी भी अपने लेखो मे देवदासियो का उल्लेख करता है। शिलालेखो मे भी देवदासियो का उल्लेख मिलता है। 1192 ई0 के स्वप्नेश्वर के शिलालेख मे उन देवदासियो की चर्चा की गयी है जो भुवनेश्वर के शैव मन्दिर मे नृत्य करती थी। चाहमान वंशी जोजाल्द देव अपने दरबारियो के साथ देव मन्दिर के उत्सव मे सम्मिलित होता था, जहां देवदासियाँ नृत्य करती थी। इन विवरणो से स्पष्ट होता है कि इस काल मे सभी मन्दिरो मे देवदासियो की नियुक्ति की जाती थी। इसके दो ही कारण हो सकते है-प्रथम देवदासियो को अप्सराओ के रूप मे देवताओ का सहगामिनी माना जाना तथा द्वितीय इन्हे भोग्य वस्तु के रूप मे देवताओ के सामने प्रस्तुत किया जाना। प्रस्तुत शोध प्रबध मे उत्तर-दक्षिण एव पूर्वी भारत के प्रमुख राजवंशो यथा पाल, प्रतिहार, राष्ट्रकूट, चोल, पल्लवकालीन साहित्यो मे अप्सराओ के मानवीकरण रूप देवदासियो के, रूप, कार्य-व्यापार का विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय "प्राचीन भारतीय कला मे अप्सरा का प्रतिबिम्बन" है। अप्सराओ का अकन प्रथमतः मौर्य-कालीन कला मे लोक कला के अन्तर्गत यक्षिणियो की मूर्तियों मे होता है। यक्ष-गन्धर्व तथा यक्षिणी-अप्सरा मे कई बिन्दुओ पर समानता दृष्टिगोचर होती है। कुमार स्वामी ने अपनी पुस्तक 'यक्षाज' मे कहा है कि यक्ष-यक्षी को गन्धर्व तथा अप्सरा से सम्बन्धित करना चाहिए जो पहले जल तथा फिर वनस्पतियो से सम्बन्धित थे। यह मान्यता शतपथ ब्राह्मण के उस विचारधारा पर आधारित है जिसमें अप्सराओं को राजासोम से

सम्बन्धित माना गया है, जो अपने दैवीय स्वरूप मे वनस्पति,जल तथा सन्तति के देवता के रूप मे स्थापित थे। बाद मे इन्द्र के दरबार मे नृत्य, सगीत से सम्बन्धित हो गए। इसीलिए अमृत घट लिए नदी देवता को अप्सरा कहा गया है। यक्षिणीयो की मूर्तियों तो वृक्षो के साथ बहुतायत मे प्राप्त होती है।

यक्षिणी तथा अप्सराओ का चित्रण तत्कालीन नारी मूर्तियों का स्वरूप प्रतिबिम्बित करता है। पटना के दीदारगंज से चंवरधारिणी यक्षी की मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमे तत्कालीन नारी सौन्दर्य को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। यक्षिणी मूर्ति मे बेसनगर की नारी मूर्ति भी शिल्प की दृष्टि से उल्लेखनीय है। सांची, भरहुत के स्तूपो पर अंकित यक्षी मूर्तियो से ज्ञात होता है कि लोक कला के अन्तर्गत यक्षिणीयो की मूर्तियां मौर्यकाल तक निर्मित होने लगी थी। ये मूर्तियां नग्न, अर्द्धनग्न, तथा वृक्षो के साथ दृष्टिगत होती है। अप्सराओ का पर्याप्त चित्रण भरहुत प्रतिमाओ के एक अद्वितीय दृश्य मे प्राप्त होता है। इसमे कामदेव की मृत्यु के बाद देवो द्वारा आनन्द मनाए जाने का चित्र प्राप्त होता है। इसमे अप्सराएं नृत्य करते हुए चित्रित की गयी है। भरहुत स्तूप पर चार अप्सराओ का नाम उल्लिखित किया गया है ज़ो -सुभद्रा अचहरा, पद्मावती अचहरा, मिसकोषी अचहरा तथा अलबुषा अचहरा के नाम से जानी जाती है। अतः तीसरी शताब्दी ई० पू० मे अप्सराओ का चित्रण देवो की नर्तकी के रूप मे किया गया है।

दूसरी शताब्दी ई० पू० की कलाकृतियो मे लोककला के रूप मे नृत्य एवं वाद्यों का पर्याप्त विकास हो चुका था। यक्ष-यक्षिणी, गन्धर्व-अप्सरा आदि इस लोक नृत्य मे पर्याप्त रूप से चित्रित होने लगे। यह प्रतीत होता है कि मौर्य-काल के बाद से अप्सराओ का अंकन नर्तकी के रूप मे और सह नर्तक के रूप में गन्धर्वो का अंकन किया जाने लगा। यह तथ्य परक है कि अशोक संगीतमय और वैभवपूर्ण जीवन की आलोचना तो करता है परन्तु उसके दरबार का जो चित्रण वर्णित किया गया है उसमें नर्तकियो को विशेष रूप से अंकित किया गया है, जो राजदरबारी कला का अंग मानी गयी है। यह संभव है कि कलिंग युद्ध के पश्चात् जब अशोक धम्म नीति का अनुपालन करता है, तब समाज को विकृत करने वाली

प्रवृत्तियो की उसने आलोचना की हो परन्तु मौर्य युग के पश्चात् कला मे व्यापक रूप से नृत्य शैली को अभिव्यक्त किया गया है।

भरहुत के एक दृश्य मे गायन, वादन और नृत्य मे अप्सराओ को तत्पर दिखाया गया है। शुंग कालीन मृण्मय मूर्तियो मे एक यक्ष की एवं दो नर्तकियो की मूर्तिया उपलब्ध है। कुषाण कालीन शिल्प मे इन्द्र और बुद्ध की भेट का अंकन प्राप्त होता है जिसमे गन्धर्व और अप्सराओ का भी रूपांकन है। इसमे पचशिख गन्धर्व अंकित है जिसका अनुसरण छः अप्सराएं कर रही है। अजन्ता की गुफा नं 10 मे एक राजा को बोधिवृक्ष की पूजा करते हुए अकित किया गया है, साथ ही तीन स्त्रिया नृत्य करते हुए प्रदर्शित की गयी है। अमरावती तथा नागार्जुन कोण्डा के स्तूपो पर उडान करने वाली आकृतियां पायी जाती है जो गन्धर्व की है। अजन्ता के एक चित्रण मे गन्धर्व का परिवार अंकित है। अर्थात् मौर्योत्तर काल मे सम्पूर्ण भारतवर्ष मे नर्तकियो को मान्यता प्रदान की गयी।

उपर्युक्त तथ्यो के विश्लेषण से यह धारणा बनायी जा सकती है कि भारतीय शिल्प और मूर्तिकला मे अप्सराओ का अंकन गन्धर्वो के साथ नर्तकी के रूप मे कला के अभ्युदय के साथ हो गया था। यह प्रतीत होता है कि जब अप्सराएं देवताओ की सहगामिनी और देव कन्या के रूप मे प्रतिष्ठित हो गयी तो पृथ्वी लोक पर उनके रूप और कार्य को प्रतिबिम्बित करने के लिए नर्तकी वर्ग का सृजन कर दिया गया। यह इस सन्दर्भ मे भी उल्लेखनीय है कि अप्सराएं देवताओ के दरबार मे नृत्य करती है और उनके इसी स्वरूप को राजदरबार मे नर्तकी प्रतिबिम्बित करती है। अप्सराओ के नृत्य एवं भाव भंगिमाओ का प्रतिनिधित्व धरती पर ये नर्तकिया ही करती है। दोनो का कार्य समान है, दोनो की अदाकारी मे समानता है। ईश्वरीय समाज मे जिस प्रकार अप्सराओ का महत्व है उसी प्रकार, धरती पर नर्तकियो का महत्व है। दोनों समाज में स्वीकृत भी है, बहिष्कृत भी। यदि उर्वशी रम्भा देवलोक में महत्वपूर्ण है तो वैशाली की नगरवधू भी वैशाली के गौरव का प्रतिनिधित्व करती हैं।

गुप्त कालीन कला में अप्सराओ का व्यापक रूप से प्रतिबिम्बन प्राप्त होता है।

अजन्ता के गुफा नं. 17 मे एक भित्ती चित्र मे मजीरा बजाते हुए अप्सराओ का एक समूह द्रिखाया गया है। चित्रगत वातावरण से प्रतीत होता है कि यह सामूहिक संगीतायोजन विभिन्न समारोहो मे किया जाता है और नर्तकी की कल्पना किसी अप्सरा के रूप मे किया गया है। गुफा नं 19 मे प्रेम प्रसग के एक दृश्य का रुपावन किया गया है। गुप्तकाल मे निर्मित देवकली ग्राम से प्राप्त एक सूर्य प्रतिमा के ऊपर दोनो ओर से पुष्पाहार लेकर उड़ती अप्सराओ का अंकन है। ग्वालियर सग्रहालय मे सोडानी का शिलाखण्ड है जिस पर आकाश मे उड़ने वाले गन्धर्व तथा अप्सराओ की मूर्तियां उत्कीर्णित है। ग्वालियर राज्य के पवैया नामक स्थल से ललित मुद्रा मे नर्तकी का अंकन प्राप्त हुआ है। बाघ गुफा मे सामूहिक नृत्य का अकन किया गया है। भारत के विभिन्न संग्रहालयो मे गुप्त कालीन कलाकृतियां उपलब्ध है जिसमे अप्सराओ के विभिन्न स्वरूपो और भाव भंगिमाओ को प्रदर्शित किया ग़या है। जिनसे यह आभासित होता है कि गुप्तकालीन कला मे अप्सराएं नर्तकी के रूप मे स्थापित हो गयी थी।

भारतीय शिल्प संहिता मे अप्सराओ का चित्रण विस्तृत रूप से किया गया है जिसका विश्लेषण इस अध्याय मे चित्रात्मक और इन चित्रो मे अन्तर्निहित भावनाओ के विश्लेषण मे किया गया है। अप्सराओ के विभिन्न भाव-भगिमाओ मे एक विशिष्ट भावना अन्तर्निहित है और इसके लिए भारतीय शिल्प संहिता मे वर्णित अप्सराओ के स्वरूपो का विश्लेषण अति आवश्यक है।

पूर्व मध्यकाल मे अप्सराओ का चित्रण मुख्यरूप से खजुराहो के प्रतिमाओ मे प्रदर्शित होती है। इन प्रतिमाओ को सुर-सुन्दरी या अप्सराओ की प्रतिमा बताया जाता है। इनकी संख्या बहुत अधिक है। इन्हे अनेक आकर्षक भाव भंगिमाओं मे प्रदर्शित किया गया है। कहीं ये स्नान के बाद बालो से पानी निचोड़ रही हैं, तो कही, पशुपक्षियों या बालको से खिलवाड़ कर रही हैं, तो कहीं अपने शृंगार के द्वारा अपने भावों को प्रदर्शित कर रही हैं। इन प्रतिमाओ में उन अनेक नायिकाओं के मूर्त रूप देखने को मिलते हैं, जिनका वर्णन भारतीय साहित्यो मे किया गया है। खजुराहो मे अप्सराओं का अंकन किसी एक धर्म विशेष

के मन्दिरो तक सीमित नही है क्योकि हिन्दू, और जैन सभी मन्दिरो, जैसे कन्दारिया महादेव मन्दिर, लक्ष्मण मन्दिर, आदिनाथ मंदिर, पार्श्व नाथ मन्दिर, जिननाथ मन्दिर, आदि पर अप्सराओ का अंकन प्राप्त होता है। मन्दिरो पर रति क्रिया से युक्त मूर्तियो का अंकन भी किया गया है। तात्पर्यतः यह रतिक्रिया एक धर्मनिरपेक्ष विषय वस्तु के रूप मे मानवीय और सामाजिक स्वरूप धारण करता है।

इसी प्रकार बिहार के रोहतास मे स्थित मुण्डेश्वरी मन्दिर से प्राप्त सातवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति पटना संग्रहालय मे सुरक्षित है। यह मूर्ति शिल्परत्न मे वर्णित अप्सरा के स्वरूप के काफी निकट है। बीजापुर सग्रहालय मे सुरक्षित नौवी शताब्दी की राष्ट्रकूट कालीन अप्सरा चौकोर पटिया पर खड़ी है। हिगलाजगढ़ की सुर-सुन्दरी मूर्तियो को मन्दिर की दीवार पर एक पक्ति मे उत्कीर्ण किया गया है, ये सुर-सुन्दरियां विभिन्न प्रकार के क्रिया कलापो में व्यस्त है। तात्पर्यत: ये नारी सौन्दर्य को प्रदर्शित करने वाले भाव भंगिमाओ का अनुमोदन कर रही है। इलाहाबाद के कड़ा नामक स्थान से प्राप्त बारहवी शताब्दी की संयुक्त सुर-सुन्दरी प्रतिमा का चित्रण दीवाल पर किया गया है। बारहवी शताब्दी की ही जमसोत से प्राप्त नृत्यरत अप्सरा मूर्तिया इलाहाबाद संग्रहालय में सुरक्षित है। इसी प्रकार होयसल काल के हलेविड, कर्नाटक के उमापुर, कर्नाटक के तेलसंग और धारवाड़ से भी प्राप्त अप्सराओ को सुर-सुन्दरियो के रूप मे वर्णित किया गया है। ये मूर्तियां नाना प्रकार के आभूषणो से लदी हुई है।

तात्पर्यत. मौर्य काल से लेकर बारहवी शताब्दी तक अप्सराओ की मूर्तियां प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है जिनके नामकरण और निरूपण मे क्षेत्रीय आधार पर विभिन्नता है। इस अध्याय मे इनके विशिष्ट स्वरूपो में विभिन्नता को स्पष्ट करने की चेष्टा की गयी है। इस क्रम मे भारत के बाहर अवस्थित मन्दिरों पर अंकित अप्सराओं के चित्रण का भी वर्णन किया गया है जैसे कमार स्वामी ने सिगरिया, सिलोन से पांचवी शदी की अप्सरा मूर्ति, बियोन से नवी शदी की अप्सरा मूर्ति तथा अंकोरवाट से 12वीं शदी की अप्सरा मूर्तियों का उल्लेख किया है।

प्रथम अध्याय

प्रथम अध्याय

''वैदिक साहित्य में अप्सरा का प्रतिबिम्बन''

भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा ऋग्वेद से ही प्रारम्भ होती है। वैदिक काल मे अप्सराओ के स्वरूप और कार्यो के विश्लेषण के लिए चार वैदिक सहिताओ क्रमश: ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रथो का भी विश्लेषण आवश्यक है। ऋग्वेद मे कुल 1017 सूक्त है। यदि 11 बालखिल्य सूक्तो को भी इसके अन्तर्गत समाहित कर लिया जाये तो कुल सूक्तो की संख्या 1028 हो जाती है। ये बालखिल्य सूक्त परिशिष्ट के रूप मे है और कालक्रमानुसार ये बाद की रचनाएं है। यही कारण है कि इन्हे ऋग्वेद का मौलिक अंश नही माना जाता है। ऋग्वेद को 10 मण्डलो मे विभाजित किया गया है, जिसमे दूसरे, तीसरे,चौथे, पांचवे, छठे और सातवे मण्डलो के रचयिता ऋषि क्रमशः गुप्समद, विश्वामित्र बामदेव, अत्रि, भारद्वाज और वशिष्ठ है, आठवें मण्डल के रचयिता अंगारिश और कण्वयवंश के ऋषि है। प्रथम मण्डल के 50 सूक्त भी कण्व वंश के ऋषियो द्वारा रचित है। अन्य मण्डलो के विविध सूक्तो का निर्माण, विविध ऋषियो द्वारा हुआ है। ऋग्वेद के ऋषियो मे क्रमश स्त्रियां भी है। जिसमे लोपा मुद्रा मुख्य थी जो विदर्भ राज्य की कन्या तथा अगस्त ऋषि की पत्नी थी। यहां यह वर्णित करना आवश्यक है कि महाभाष्य मे ऋग्वेद की 21 शाखाओ का वर्णन है, जिसमे 5 शाखाएं प्रधान है-शाकल, वाष्कल, आश्वलायन, सांख्यायन और माण्डूकेय।[1] दिव्यावदान (बौद्ध ग्रंथ) मे भी वेदो की अनेक शाखाएं गिनाई गयी है जिनमे ऋग्वेद की 20 शाखाओ का उल्लेख है।[2]

वेद मंत्र ऐसे भी है, जिनके एक से अधिक ऋषियो का उल्लेख मिलता है। ऐतरेय और गोपथ ब्राह्मणो के अनुसार ऋग्वेद की सम्पात ऋचाओं (4/19) का प्रथम ऋषि

---

1 महाभाष्य, पस्पशाह्निक 11/8/21

2 सर्वेते बहवृचा पुष्प एको भूत्वा विंशतिधा भिन्ना.।
तद्यथा शाकला., वाष्कला: माण्ऽव्या इति।'

विश्वामित्र था।[3] ऋग्वेद के दशवे मण्डल के कतिपय मत्रो के ऋषि भलन्दन, वात्सप्रि, और संकील है, जो वैवस्वत मनु के अन्यतम पुत्र नाभानेदिष्ट के वंशज थे।[4]

ऋग्वेद के कुछ सूक्तो पर ऋषि के रूप मे वैवस्वत मनु का नाम है। ये वास्तव मे मनु के है या किसी अन्य ऋषि ने मनु के नाम से इसकी रचना की है, यह किसी भी स्रोत से प्रमाणिकता के आधार निर्धारित नही किया जा सकता है। पुरुरवा ऐल और उर्वशी का सम्वाद भी वैवस्वत मनु नामक ऋषि के द्वारा रचित माना जाता है।[5]

ऋग्वेद मे अप्सरा नाम का उल्लेख मात्र पांच बार हुआ है। पाच बार अप्सरा का उल्लेख ऋग्वेद के 9/86/26, ऋग्वेद के 10/40/4, 10/95/17, 1/31/11 तथा ऋग्वेद 4/2/18 मे हुआ है। यास्क अपने निरुक्त मे अप्सरा शब्द का विश्लेषण करते हुए कहते है कि ये मोहक और लावण्यपूर्ण स्त्रियां है, जो काम भावना का प्रतिनिधित्व करती है और इनका निवास स्थल जल है।[6] ऋग्वेद मे वर्णित अप्सराओ के स्वरूप और कार्य के विश्लेषण से प्रतीत होता है कि वे मानवीय स्त्रियां थीं तथा इनका साहचर्य गन्धर्वो से था।[7] ऋग्वेद के एक मंत्र मे यह वर्णित किया गया है कि अप्सराओ और गन्धर्वो मे स्पष्ट सानिध्य है और परम व्योम मे अप्सराएं गन्धर्वो का अभिसरण वैसे ही करती है जिस प्रकार प्रेमी अपने प्रेमिका का अनुसरण करता है।[8]

प्रसिद्ध इतिहासकार और वैदिक साहित्य पर शोध करने वाले यूरोपीय इतिहासकार मैक्डानल ने वर्णित किया है कि अप्सराएं वस्तुतः आदिम समाज की स्त्रियां है जो जल के समीप निवास करती है, जहां वे अपने प्रेमियो के साथ क्रीड़ा करती है।[9] वैदिक देवताओ

3 ऐतरेय ब्राहमण, 3/9 आनन्दश्रम सस्कृत सीरीज पूना, 1930 — गोपथ ब्राहमण, 6/1 मित्रा आर०एल० एच० विद्याभूषण, कलकत्ता 1872

4 ब्रह्माण्ड पुराण, 3/22/63 वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, 1913

5 ऋग्वेद, 10/95

6. अप्सरा अप्सारिणी अपि वाऽप्स इति रूपनामात्सातेरप्सानीयं भवत्यादर्शनीय व्यापनीयं वा-निरूक्त 5/3

7 ऋग्वेद, 9/86/26, 10/40/4-एफ. मैक्समूलर (सं०), लन्दन, वैदिक संशोधन मण्डल,पूना

8. ऋग्वेद 10/123/5 (सायण की टीका)

9. मैक्डानल, हिस्ट्री आफ सस्कृत लिटरेचर, पृष्ठ 137, वाराणसी,1958,

के अन्तर्गत भी अप्सराओ का परिचय प्राप्त होता है।[10] ऋग्वेद के कुछ मंत्रो मे उर्वशी सदृश अप्सरा और विश्वावसु गन्धर्व का उल्लेख है।[11] अप्सराओ को आदिम जाति की स्त्रियां स्वीकार किया गया है, इस प्रकार की स्त्रियो मे किसी प्रकार का प्रतिबंध नही था यथा वे जहा चाहती थी वहां विचरण करती थी। यह विश्लेषण हापकिस नामक विद्वान ने 'द ग्रेट एपिक आफ इंडिया' मे किया है।[12] कुमार स्वामी ने ऋग्वेद के श्लोको का विश्लेषण करते हुए कहा है कि यक्ष और गन्धर्व, जो नृत्य और गायन की दक्षता रखते थे, वे एक दूसरे के सानिध्य मे रहते थे, अप्सराएं इन्ही गन्धर्वो की पत्निया थीं उपर्युक्त विश्लेषण से यह प्रतीत होता है कि अप्सराएं अपने जीवन प्रणाली के संचालन मे स्वतंत्र और स्वच्छन्द थीं जैसा कि कुमारस्वामी ने वर्णित किया है।[13]

किन्तु ऋग्वेद मे तथा बाद के ग्रथो मे दिये गए विश्लेषणो के आधार पर यह प्रतीत होता है कि अप्सराएं कोई मानवी स्त्री न होकर सूर्य की किरणे है। ऋग्वेद मे जो पुरूखा-उर्वशी सम्वाद वर्णित है, उसी के एक मत्र मे कहा गया है कि वशिष्ठ ऋषि का यह दायित्व था कि अन्तरिक्ष मे घूमने वाली उर्वशी को वे अपने नियंत्रण मे रखे।[14]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह प्रतीत होता है कि उर्वशी आकाश मे घूमने वाली सूर्य की किरण थी। आयु, परवर्ती ग्रथो मे पुरुरवा और उर्वशी से उत्पन्न सन्तान माना गया है जबकि ऋग्वेद के मत्रो मे अग्नि की सन्तान माना गया है। ऋग्वेद के एक मंत्र मे कहा गया है कि अग्नि ने पहले आयु को बनाया और आयु से ही देवताओ की उत्पत्ति हुई।[15] अन्य संहिताओ तथा ब्राहमण ग्रंथों मे गन्धर्व तथा अप्सराएं, सूर्य, सूर्य की किरणें, औषधि तथा नक्षत्र ताराओ के रूप मे मिलते है।[16] इस विश्लेषण से यह संकेत प्राप्त होता है कि अप्सराओ

---

10 मैक्डानल, वैदिक माइथोलाजी, पृष्ठ 136-37, वाराणसी, 1963
11. ऋग्वेद, 1/34/3
12. हापकिंग ' दि ग्रेट एपिक ऑफ इण्डिया पृष्ठ 156, कलकत्ता, 1969
13. कुमार स्वामी, ए.के. 'यक्षाज', भाग-2 पृष्ठ 32, वाशिगटन 1928
14 अन्तरक्षिप्रां रजसो विमानीमुप शिक्षाम्युर्वशी वशिण्ठः। ऋग्वेद, 10/95/17
15. त्वमग्ने प्रथमं आयुं आयवे देवा· अकृण्वन। ऋग्वेद, 1/31/11
16 शतपथ ब्राहमण, 14/116/2 अल्बर्ट, बेबर (सं०) लिपिजिंग, 1924

का उल्लेख स्त्रियो के लाक्षणिक गुणो से मिलता जुलता है, जिसका विश्लेषण यजुर्वेद मे भी मिलता है। क्योकि यजुर्वेद मे भी अग्नि को स्पष्ट रूप से आयु कहा गया है।[17] मैक्समूलर ने अपने एक लेख मे कहा है कि ऋग्वेद मे वर्णित पुरुरवा और उर्वशी की कथा वस्तुनिष्ठ रूप मे उषा और सूर्य का आलंकारिक प्रतिबिम्बन है।[18] अत· मैक्समूलर के विश्लेषण से यह प्रतीत होता है कि उर्वशी एक काल्पनिक स्त्री है।

यद्यपि ऋग्वेद में कई विश्लेषण है जो काल्पनिक प्रतीत होते है परन्तु जिस प्रकार ऋग्वेद के मत्रो मे उर्वशी और पुरुरवा का बार-बार उल्लेख किया गया है, उससे प्रतीत होता है कि दोनो ऐतिहासिक पात्र है। ऋग्वेद के सूर्या सूक्त से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज मे युवको और युवतियो को अपना साथी चुनने का अधिकार था, अर्थात् विवाह से पूर्व स्त्री और पुरुष को परस्पर सहयोग और प्रेम को विकसित करने के पर्याप्त अवसर मिलते थे। मर्य अर्थात् युवा मर्द, योषा अर्थात् युवती के साथ तई अभ्ययन[19] और अभिगमन[20] आदि किया करते थे। कल्याणी युवतियो के साथ मर्यो का मोद ओर हर्ष[21] करना, रीझने और प्रीत होने पर कन्या का मर्य को परिष्वजन (आलिंगन) देना,[22] दूसरी तरफ योषाओ और कन्याओं का अपने जारो (प्रेमियो) के लिए अनुवसन[23] आदि समाज मे बहुत साधारण बाते थी।

इस प्रकार पूर्व वैदिक समाज मे कुमारो और कुमारियो को परस्पर मिलने, अभ्ययन, अभिगमन करने और प्रेम मे फंसने के पर्याप्त अवसर मिलते थे। बसन्त ऋतु मे ऋग्वेदिक काल मे एक सामाजिक उत्सव प्रचलित था। योषाएं उन समनो मे सजधजकर पहुंचती थी।[24] ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि समन कई बार रात-रात भर चलते थे और प्रात· काल उनका

---

17 यजुर्वेद, 5/2, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1939

18 मैक्समूलर, 'दि सलेक्टेड एस्सेज' भाग-1, पृष्ठ 408, वाराणसी, 1964

19 मर्यो न योषामभ्येति पश्चात्। ऋग्वेद, 1/115/2

20. मर्यो न योषामभि मन्यमानो। वही, 4/20/5

21 याभि. सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्य:। -वही, 10/30/4

22 नि ते नसै यीप्यानेव योषा मर्यामेव कन्याशश्वचै ते। -वही, 3/33/10

23 योषा जारमिव प्रियम्। अभित्वा योषणोदश जारं न कन्यानूषत। -वही, 9/32/5, 9/56/3

24 ऐनं गच्छन्ति समनं न योषा:। -वही, 10/168/2

विर्सजन होता था।[25] इन समनो मे प्रायः कुमारी बालिकाए अपने लिए पति खोज लेती थी।[26] उनके माता पिता भाई बन्धु अपनी बहनो तथा बेटियो को वर खोजने मे सहायता भी किया करते थे। विशेषकर भाई अपने बहनो की इस कार्य मे सहायता किया करते थे। जिन कन्याओ के भाई नही होते थे, उन्हे स्वतः इस कार्य को सम्पादित करना पड़ता था।[27]

इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि ऋग्वेद मे वर्णित पुरुरवा और उर्वशी का आख्यान उपरोक्त प्रेमीजनो के पारस्परिक अनुराग तथा आकर्षण पर आख्यायित है। उर्वशी एक गन्धर्व कन्या है तथा पुरुरवा एक आर्य सन्तान। डी०डी० कौशाम्बी ने भी उपरोक्त कथन को प्रमाणित किया है कि उर्वशी मातृ देश मे रहने वाली एक अनार्य कन्या है जिसके साथ आर्य पुरुरवा विवाह करता है।[28]

ऋग्वेद मे जिस प्रसंग मे पुरुरवा ऐल और उर्वशी का संवाद है उससे ज्ञात होता है कि ये दोनो देव या देवी न होकर ऐतिहासिक पात्र है। एक वैदिक मंत्र की ऋचा का ऋषि पुररुवा है तो देवी उर्वशी है, तो दूसरे का ऋषि उर्वशी है तो देवता पुररुवा।[29] डी०डी० कौशाम्बी का विचार है कि पुररुवा ऋग्वेद मे एक राजा लगता है किन्तु बाद मे आर्यो के पूर्वजो के रूप मे चित्रित है। पुररुवा तथा उर्वशी का प्रणय सम्बन्ध तत्कालीन परिवेश मे स्वाभाविक है।[30]

ऋग्वेद के अनुसार उर्वशी पुररुवा के पास रहने के लिए तीन शर्ते रखती है। प्रथम शर्तानुसार वह केवल घृताहार ही करेगी। द्वितीय शर्तानुसार वह राजा को मैथुन के अतिरिक्त कभी नग्न नही देखेगी और तृतीय शर्त यह है कि उसके द्वारा पालित दो मेढ़ों का पालन

---

25 ऋग्वेद, 1/48/6
26 ऋग्वेद, 2/36/1
27. ऋग्वेद, 1/124/8
28. डी.डी कौशाम्बी-मिथ एण्ड रियलिटी, पृष्ठ 50-51 बम्बई, 1962,
29 ऋग्वेद, 10/95
30 डी डी. कौशाम्बी-मिथ एण्ड रियलिटी, पृष्ठ 45-46

राजा पुत्र के समान करेगा।[31] पुरुरवा तीनो शर्तो को स्वीकार करता है किन्तु सामान्य परिस्थति मे भी जब पुरुरवा, उर्वशी को नग्न दिखाई देता है तो उर्वशी उसे छोड़कर चली जाती है। विरह की वेदना से राजा मानसिक रूप से असंतुलित हो जाता है और भटकते हुए सरोवर के पास आता है, वहां उर्वशी सखियो के साथ जल क्रीड़ा कर रही थी। उसी स्थान पर राजा पुरुरवा तथा उर्वशी का सवाद होता है, जो ऋग्वेद के मंत्रो मे वर्णित है।

ऋग्वेद मे वर्णित पुरुरवा तथा उर्वशी के संवाद का ऐतिहासिक स्वरूप आरम्भिक काल मे प्रचलित स्त्री पुरुष सम्बन्धों पर आधारित है। उर्वशी का पुरुरवा के साहचर्य मे तीन शर्तो के साथ रहना तथा एक शर्त के तोडे जाने पर उससे अलग हो जाना, यह विदित करता है कि स्त्रिया स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने मे ऋग्वेदिक काल मे सक्षम थी। यह विश्लेषण प्रतीकात्मक है और ऐतिहासिक भी है। क्योकि ऋग्वेद मे जो भी उद्धरण स्त्री पुरुष सम्बन्धो के सन्दर्भ मे व्यक्त किये गए है, वह स्त्री की आत्मनिर्भरता का परिचायक है। ऋग्वैदिक काल मे अप्सराए स्वतत्र स्त्रियां थी। उर्वशी पुरुरवा का सम्बन्ध और सवाद इसी का प्रतीक है। उपर्युक्त वर्णन से यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि उर्वशी और पुरूरवा एक ऐतिहासिक सन्दर्भ मे वर्णित किये गए है, इस कथन का समर्थन पार्टिजर ने भी किया है।[32]

ऋग्वेद को ही आधार मानकर शोधपत्र के शेष अध्यायो मे उर्वशी को अप्सरा का प्रतिनिधित्वकर्ता मानते हुए ऐतिहासिक स्त्री के रूप मे वर्णित किया जाएगा। अप्सराएं मुख्यत: मोहकता, लावण्यता, कामुकता और अपने सौन्दर्य के लिए इतिहास मे विशेष स्थान रखती है, किन्तु यह सिर्फ अप्सराओं के शारीरिक आकर्षण का ही वर्णन प्रस्तुत करता है। दूसरा पक्ष यह है कि ऋग्वेद के अध्यायो से यह स्पष्ट हो जाता है कि अप्सराएं,

---

31 पुरुरवो मा मृथा मा प्रयप्तो मा त्वा वृकासो अशिवास उक्षन।
न वैं स्त्रैणानि सरख्यानि सन्ति साला वृकाणां हृदयान्येता
यद्विरूपाचार मर्त्येष्वस रात्री: शरदश्चतस्र.।
घृतस्य स्तोकं सकृदह्न आश्ना तादेवेदं तातृपाणा चरामि।। -ऋग्वेद, 10/95/15-16

32 एफ.ई पार्टिजर-एन्शियण्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडिशन,
पृष्ठ 297-300, लन्दन, 1922.

जिस प्रकार सूर्य की चंचल किरणे खेलती है, उसी प्रकार अपने नृत्य शैली की चंचलता के कारण आकर्षण का केन्द्र बिन्दु बन जाती है। अत यदि ऋग्वेद पूर्व वैदिक काल के समाज का प्रतिबिम्बन प्रस्तुत करता है तो अप्सराओ को मानवीय स्त्री मानना होगा। यह पूर्व मे ही स्पष्ट किया जा चुका है कि अप्सरा, जिसका उर्वशी प्रतिनिधित्व करती है वस्तुत ऋग्वैदिक समाज मे स्त्रियो के स्वतत्रता और स्वच्छन्दता का परिचायक है। यहां ऋग्वेद तथा उर्वशी के उस सवाद का उल्लेख करना पड़ेगा कि वशिष्ठ सूर्य अन्तरिक्ष मे घूमने वाली उर्वशी को वश मे रखने का प्रयास करते है।[33]

यह स्वत· मे प्रमाण है कि वशिष्ठ ऐतिहासिक पुरुष है और कामुक नृत्य से जो ऋग्वैदिक समाज पर विघटन कारी प्रभाव पड़ रहा है उसे नियंत्रित करने की चेष्टा करते है। यह भी उद्धृत करना आवश्यक है कि सूर्य के जिन प्रारुपो का ऋग्वेद मे वर्णन किया गया है उसमे उषा, आश्विनो,मित्र इत्यादि का वर्णन तो है लेकिन कही भी उर्वशी का वर्णन नही है। यदि उर्वशी ऋग्वेद के पृथ्वी, द्यौ, अन्तरिक्ष-स्थानीय देवी, देवताओ मे शामिल होती या प्रकृति के प्रारुपो का प्रतिनिधित्व करती तो उसका वर्णन ऋग्वेद के देवी देवताओ मे अवश्य किया जाता। अतः यह भी एक प्रमाण है कि उर्वशी एक ऐसी रूपसी के रूप मे वर्णित की गयी है जो ऐतिहासिक पात्र है। इस कथन का समर्थन हापकिस, डी डी कौशाम्बी, पार्टिजर इत्यादि विद्वानो ने भी किया है।

उत्तर वैदिक काल के अध्ययन के लिए यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मणग्रंथ, आरण्यक, उपनिषद और सूत्र ग्रंथ उपलब्ध है, जिनसे अप्सराओं के नाम स्वरूप और चरित्र का विश्लेषण ज्ञात होता है। उत्तर वैदिक भारतीय विवरणो मे अप्सराओ के विभिन्न नाम मिलते है, जिसमे यजुर्वेद मे पुंजिकस्थला, क्रतुस्थला, मेनका, सहजन्या, प्रम्लोचा, अनुम्लोचा, विश्वाची, घृताची, उर्वशी तथा पूर्वचित्ती का नाम आया है।[34]

---

33. अन्तरिक्षप्रां रजसो विमानीमुपशिक्षाम्युर्वशीवशिष्ठः।
ऋग्वेद, 10/95/17

34. यजुर्वेद, 15/15-19

उर्वशी एक ऐसी अप्सरा है जिसका उल्लेख वैदिक साहित्य से लेकर पौराणिक साहित्य तक है। महाभारत तथा पुराणो मे उर्वशी की उत्पत्ति नारायण की जघा से बताई गई है। इस सन्दर्भ मे देवी भागवत मे आख्यान वर्णित है कि नर-नारायण ऋषि बद्रिकाश्रम मे तप कर रहे थे। वे इन्द्र पद न ले ले इस भय से इन्द्र ने बसन्त, मेनका, रम्भा, तिलोत्तमा, घृताची आदि सोलह हजार अप्सराओ को उनके तप को भंग करने के लिए भेजा इसका प्रतिरोध करने के लिए नारायण ने भी एक सुन्दरी को पैदा किया। नारायण के उरू से पैदा होने के कारण उसका नाम उर्वशी रखा गया।[35] उर्वशी की तरह रम्भा एक अत्यंत सुन्दर अप्सरा थी, जिसकी उत्पत्ति और प्रसिद्धि उत्तर वैदिक काल मे हुई। विश्वामित्र के तप करने पर इन्द्र ने रम्भा को उनके तप भंग के लिए भेजा। मेनका की गणना छ॰ प्रधान अप्सराओ मे की गयी है। मेनका ऋग्वेद[36] यजुर्वेद, शतपथ ब्राहमण[37] और षडविंश ब्राहमण[38] में मेन की पुत्री घोषित की गई है। इसका उल्लेख तैत्तिरीय आरण्यक मे भी प्राप्त होता है।[39]

इससे ज्ञात होता है कि मेनका वैदिक काल मे काफी प्रसिद्ध हो चुकी थी। घृताची नामक अप्सरा का उल्लेख वैदिक साहित्य से लेकर महाकाव्यो तथा पुराणो तक सर्वत्र मिलता है। यजुर्वेद मे अनेक अप्सराओ के साथ यह भी निर्दिष्ट है।[40] शतपथ ब्राहमण के एक मंत्र मे विश्वाची और घृताची का नाम एक साथ मिलता है।[41] वैदिक अप्सराओ मे

---

35 इतिसंचिन्त्य मनसा करेणोरूं प्रताड्यवै।
तरसोत्पादयामास नारी सर्वांडगसुन्दरीम।
नारायणोरूसंभूता ह्युर्वशीति तत॰ शुभां।
ददृशुस्ता॰ स्थितातत्र विस्मय परम ययु ।। -देवी भागवत, 4/6/35-37

36 ऋग्वेद, 1/51/13

37. (वायो) मेनका च सहजन्या चाप्सरसाविति-यजुर्वेद, 15/16
शतपथब्राहमण-8/6/1/17, 3/3/4/18

38. वृषणश्वस्य ह मेनस्य मेनका नाम दुहिता ताऽहेन्द्रश्च क्रमे। -षडविंशब्राह्मण 1/1

39 तैत्तिरीय आरण्यक 1/12/3

40 यजुर्वेद, 15/15-19

41. शतपथ ब्राहमण, 9/1/3/17

विश्वाची का नाम यजुर्वेद की तालिका तथा शतपथ ब्राहमण से ज्ञात होता है।[42]

यजुर्वेद मे सूर्य ही गन्धर्व है और उनकी किरणे ही अप्सराएं है।[43] शुक्ल यजुर्वेद मे उर्वशी तथा मेनका का निर्देश है। शतपथ ब्राह्मण मे शकुन्तला और उर्वशी का नाम आया है।[44] षडविंश ब्राह्मण मे मेनका का उल्लेख वृषणश्व की पुत्री के रूप मे मिलता है।[45] शतपथ ब्राहमण मे अप्सराएं स्वय को एक प्रकार की जलीय पक्षी के रूप मे रूपान्तरित कर लेती थीं।[46] अथर्ववेद के अनुसार अप्सराओ का आवास जलो मे होता था।[47] अत अप्सराओ को जल परी के रूप मे निरूपित किया जाता है। शतपथ ब्राहमण के अनुसार के अप्सराए नृत्य, गान तथा विलास मे मग्न रहती थीं और मानव मन को असतुलित कर देना उनकी क्षमता मे था। इन सुन्दर अप्सराओ के प्रणय का उपभोग गन्धर्व के साथ-साथ मनुष्य भी करते थे।[48]

उत्तर वैदिक ग्रंथो की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि इस समय अप्सराओ का उल्लेख अर्द्धदैवत्व के रूप मे भी होने लगा था। शुक्ल यजुर्वेद की वाजस्नेयी संहिता मे अप्सराओ के लिए प्रीत्यर्थ ब्रात्य अथवा संस्कारहीन व्यक्ति की आहुति का विधान है।[49] अथर्ववेद मे अप्सराओ का दैवीकरण व्यापक रूप मे पाया जाता है। अप्सराएं गन्धर्वो की पत्नियां है तथा सदा नृत्यशील एवं तेजस्विनी होती हुई, सर्वत्र प्रमोद का प्रसार करती है।[50] ये सदैवगीत, नृत्य, सुगन्ध तथा कामिनी जैसी विलास-वस्तुओ मे लिप्त रहती है।[51]

---

42 विश्वाची च घृताची चाप्सरसौ/-यजुर्वेद, 15/16
विश्वाचीरभिचेष्टे-वही, 17/59
शतपथ ब्राह्मण-8/6/1/19,9/1/3/17

43 सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरस। -यजुर्वेद, 18/39

44 शतपथ ब्राह्मण-13/5/413

45 षडविंश ब्राह्मण-1/1

46 शतपथ ब्राह्मण-11/5/1/4

47. अथर्ववेद-2/2/3-एस.डी.सातवलेकर, सूरत (तृतीय स) 1958

48 शतपथ ब्राह्मण 13/4/3/7-8

49. वाजस्नेयी संहिता-30/6-ए.वेबर, लन्दन, 1852

50. अथर्ववेद-4/38/1-5, 4/39/3

51 अथर्ववेद-8/10/5-8, 12/1/23

अथर्ववेद से स्पष्ट होता है कि वैवाहिक जीवन सुखद होने के लिए अप्सराओ की प्रार्थना की जाती थी और इन्हे छवि प्रदान की जाती थी।[52] अथर्ववेद मे ही उन्हे प्रजनन की शक्ति के रूप मे प्रस्तुत किया गया है इसीलिए उन्हे सन्तति की देवी के रूप मे मान्यता प्राप्त है।[53]

सामवेद मे यद्यपि अप्सराओ का विशेष उल्लेख नही मिलता है तथापि साम गान के सन्दर्भ मे गन्धर्वो के साथ इनका उल्लेख मिलता है।[54] साम मत्रो मे अभिचारिक प्रयोग के प्रसंग मे भूत-प्रेत, गन्धर्व और अन्य देवताओ के साथ वशीभूत करने के लिए विशिष्ट सामो का प्रयोग उल्लिखित है।[55] इसमें सन्देह नही है कि आरम्भिक ग्रंथो मे वर्णित अप्सराओ का स्वरूप अत्यन्त सन्देहास्पद है। तथापि वैदिक ग्रंथो मे यह वर्णित है कि अप्सराएं देवलोक मे रहने वाली वे स्त्रियां थी, जो अपने रूप लावण्य के कारण समाज मे आदरणीय थी और इनका मुख्य कार्य देवजनो को प्रसन्न करना था, इनका कोई निश्चित पति नही होता था। इनका साहचर्य देव जनो मे प्रसिद्ध एक गन्धर्व वर्ग के साथ था। [56] प्राचीन समय मे गन्धर्व स्त्रियो को अपने प्रेमपाश मे आबद्ध करने के लिए प्रसिद्ध थे।[57] शतपथ ब्राहमण के अनुसार गन्धर्व वैदिक मत्रो का पाठ कर सकते थे[58] अश्वमेघ के अवसर पर मनु की प्रजा मानव, वरूण की प्रजा गन्धर्व, सोम की प्रजा अप्सराएं, कुबेर की प्रजा राक्षस, इत्यादि के सम्मिलित होने की चर्चा की गई है।[59] अथर्ववेद से पता चलता है कि माता-पिता अपने पुत्री को अपना पति चुनने के लिए स्वतंत्र छोड़ देते थे।[60] वैदिक साहित्य से ज्ञात होता है कि युवक युवतियां परिपक्व अवस्था मे ही विवाह करती थी। अथर्ववेद मे सूर्या के विवाह का

---

52 अथर्ववेद- 7/109/2-5, 14/2/34-36

54. तद् योऽसौ क्रुष्टम इव साम्निस्वरस्तं देवा उपजीवन्ति योऽवरेषां
प्रथमस्तं मनुष्यां यो द्वितीयस्त गन्धर्वोप्सरसौ यस्तृतीयस्त पशवोयस्च
तुर्थस्त पितरो ....सामवेद, 1/1/3-बेनफे, लिपजिग,1848

55 वही-3/3/3

56. जाया इद्वो अप्सरसो गन्धर्वः यतयोयूयम्। -अथर्ववेद, 4/37/12

57 वही, 4/37/11

58 शतपथ ब्राह्मण-3/2/4/6

59 ब्रह्मचारिणं पितरो देवजना. पृथग्देवा अनुसंयन्ति सर्वे।
गन्धर्वा एनमन्वायन् त्रयास्त्रिशंत् त्रिशता: षटसहस्त्रा:।। -अथर्ववेद, 11/5/2

60 आनो अग्ने सुमति संभलो गमेदि कुमारी सह नो भगेन।
जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोष पत्या सौभगमस्त्वस्यै।। -अथर्ववेद-2/36

अत्यन्त मनोरंजक विवरण दिया गया है।[61] गान्धर्व विवाह की परम्परा भी प्रचलित थी। आश्वलायन गृह्य सूत्र मे सर्वप्रथम आठ प्रकार के विवाहो का उल्लेख है।[62] इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि गन्धर्व अप्सराओ के पारस्परिक प्रेम विवाह की मान्यता स्थापित हो गयी थी।

. वैदिक ग्रथो में अप्सराओ का उल्लेख प्राय गन्धर्वो के साथ प्राप्त होता है किन्तु इनका अर्थ, सूर्य तथा सूर्य की किरणे ज्ञात होता है। यजुर्वेद के एक मत्र मे सूर्य ही गन्धर्व है और उसकी किरणे ही अप्सराएं है।[63] इस प्रकार का सकेत शतपथ ब्राहमण मे भी है।[64] यजुर्वेद के एक मत्र मे औषधियो को अप्सराओ की सज्ञा दी गई है।[65] एक अन्य मंत्र मे इनका सम्बन्ध नक्षत्रो से ज्ञात होता है।[66] शतपथ ब्राहमण मे भी इन्हे आकाशीय नक्षत्र घोषित किया गया है।[67] यजुर्वेद और शतपथ ब्राहमण मे इनका सम्बन्ध न केवल नक्षत्रो से है अपितु इन्हे वायु से भी सम्बन्धित कर दिया गया है।[68] यजुर्वेद के एक श्लोक मे अप्सराओ का सम्बन्ध मन से जोड़ा गया है।[69]

शतपथ ब्राहमणो मे **एक मंत्र में सोम को इनका राजा बताया गया है।**[70] आनन्द कुमारस्वामी ने अपनी पुस्तक 'यक्षाज' मे शतपथ ब्राह्मण का उद्धरण प्रस्तुत किया है जिसमे वर्णित है कि सोम यज्ञ में सोम की खरीददारी ईश्वरो द्वारा, गन्धर्वो को सोम राजा को प्रदान कर की जाती थी।[71] शतपथ ब्राह्मण मे वर्णित है कि इस कर्मकाण्ड मे शूद्र गन्धर्वो का

---

61 अथर्ववेद, 1/17/14

62 आश्वलायन गृह्यसूत्र, 1/6/1, म० म० गणपति शास्त्री द्वारा सम्पादित त्रिवेन्द्रम 1923

63 सूर्योगन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरस। -यजुर्वेद, 18/39

64 शतपथ ब्राह्मण, 9/4/1/8

65 तस्य (अग्ने) ओषधयोऽप्सरस। -यजुर्वेद, 18/38

66 तस्य (चन्द्रमस.) नक्षत्राण्यप्सरस। -वही, 18/40

67. शतपथ ब्राह्मण - 9/4/1/9

68 तस्य (वातस्य) आयोऽप्सरसः। -यजुर्वेद, 18/41

69 तस्य (मनसः) ऋक्सामान्यऽप्सरसः। -यजुर्वेद, 18/43

70. सोमो वैष्णवो राजेत्याह तस्याप्सरसो विशस्ता इमा आसत इति
. युवतयः शोभना उप समेता भवन्ति ता उपदिशत्यङ्गिरसो वेदः सोऽयमिति।।
-शतपथ ब्राह्मण, 13/4/3/8

71. शतपथ ब्राह्मण, 3/2/4

प्रतिनिधित्व करते थे और सोम की खरीददारी मुख्यत इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए की जाती थी।[72] यहा यह वर्णित किया जाना आवश्यक है कि अप्सराएं यहां वनस्पति के देवता के साथ जुडी हुई है और इन्हे इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए सोम देवता से इनकी खरीददारी की जाती थी। इस सन्दर्भ मे यह भी उल्लेखनीय है कि सोम वनस्पति के देवता का प्रति-निधित्व करता है इसलिए अप्सराओ का अकन पेडो से लिपटी लताओ के रूप मे किया गया है। अत· यह वनस्पति से सम्बन्धित है। जे एल वेस्टन ने अपनी पुस्तक 'दि लिजेन्ड ऑफ सर पार्सिवल' के अध्याय 9 और 13 मे अप्सराओ को पेड़ो के रूप मे भी प्रस्तुत किया है और इसके लिए उसने शाल भंजिका के स्थापत्य का उदाहरण भी प्रस्तुत किया है जिसमे भरहुत बोधगया, सांची और अमरावती के कला का उद्धरण दिया गया है जहां सुन्दरतम स्त्रियो को आभूषणो से सज्जित करके पेड़ो से लिपटा दिखाया गया है।[73] इस प्रकार का सकेत शतपथ ब्राहमण मे भी है। जैमिनीय उपनिषद मे स्पष्ट रूप से अप्सराओ को हंसो के मिथुन रूप मे चित्रित किया गया है।[74] इस प्रकार से इन विभिन्न सन्दर्भो मे अप्सराओ का अर्थ विभिन्न है।

वैदिक ग्रंथो से स्पष्ट होता है कि गन्धर्वो का सम्बन्ध सगीत तथा अप्सराओ का सम्बन्ध नृत्य से है। ऋग्वेद के दो मंत्रो से ज्ञात होता है कि अप्सराए गन्धर्वो की पत्नियां है और जिनका निवास जल मे है।[75] यजुर्वेद की तैत्तिरीय सहिता मे गन्धर्व तथा अप्सराओ का उल्लेख एक साथ मिलता है।[76]

तैत्तिरीय संहिता मे गन्धर्वो तथा अप्सराओ का सम्बन्ध विभिन्न देवताओ के साथ स्थापित किया गया है।[77] ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार विश्वेदेव के अन्तर्गत मनुष्य, गन्धर्व

---

72 शतपथ ब्राह्मण, 3/2/6

73. वेस्टन, जे०ए०, 'दि लिजेन्ड आफ सर पर्सिवल, अध्याय 3 और 13' इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, 14वा संस्करण मे प्रकाशित।

74. किं नु तेऽस्मासु (अप्सरसु) इति हंसो मे क्रीडा में मिथुनम्भे। -जैमिनीय उपनिषद, 3/25/8

75. ऋग्वेद, 9/86/36, 10/40/4

76 यजुर्वेद, तैत्तिरीय संहिता, 1/5/9, 4/4/3, आगोरा, काशीनाथ शास्त्री (सं०) पूना, 1904

77. तैत्तिरीय संहिता, 3/4/11

तथा अप्सरस का समावेश है।[78] शतपथ ब्राह्मण मे गन्धर्वो को स्त्रीलोलुप और अप्सराओ के रूप सौन्दर्य का भोक्ता बताया गया है ।[79] इस प्रकार के निर्देश ऐतरेय और कौशीतकी ब्राहमणो से भी प्राप्त होता है।[80] ब्राह्मण ग्रंथो मे अप्सराओ तथा गन्धर्वो का उल्लेख उंपद्रवकारी अर्द्ध दैवत्व के रूप मे भी पाया जाता है।[81] कृष्ण यजुर्वेद के अन्तर्गत नरमेध मे जिन देवताओ के लिए हवन निहित है उसमे अप्सराओ तथा गन्धर्वो का समावेश है। अथर्ववेद के अनुसार दिव्य गन्धर्व का निवास घू स्थल मे है तथा इनकी पत्नी अप्सराओ का निवास समुद्र मे है।[82] अप्सरा पति गन्धर्व को मयूर पंख धारण कर नृत्य मे रत बताया गया है।[83] अथर्ववेद मे एक अन्य मत्र मे गन्धर्वो को अप्सराओ का पति तथा नृत्य शील होने का उल्लेख है।[84] इसके पाप मोचन सूक्त मे पाप निवारण के लिए आश्विन, आर्यमन के साथ गन्धर्व एवं अप्सराओ का आह्वान किया जाता है।[85]

इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक साहित्य मे अप्सराओ को विभिन्न स्वरूपो मे प्रस्तुत किया गया है। कही ये सूर्य की किरणे तो कही वनस्पतियां, तो कही गन्धर्वो की मानवी स्त्रियां।किन्तु इन ग्रंथो मे इनके मानवीकरण का संकेत विशेष रूप से प्राप्त होता है जिससे आभास मिलता है कि प्राचीन काल मे देव, असुर, गन्धर्व, अप्सरा, पिशाच, किन्नर, आदि जातियां रहती थीं।

भारतीय ग्रंथो मे अप्सराओ की भ्रमणशीलता वर्णित है जो संकेत मिलते है कि ये

---

78 ऐतरेय ब्राह्मण, 3/31, 13/7/31, आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, 1930

79. रूपमिति गन्धर्वा गन्ध इत्यप्सरस:। शतपथ ब्राह्मण, 10/5/2/20
गन्धेन च वैरूपेण च गन्धर्वाप्सरसश्चरन्ति। शतपथ ब्राह्मण, 9/4/1/4

80 स्त्री कामा वै गन्धर्वा। -ऐतरेय ब्राह्मण, 1/27
कौशीतकी ब्राह्मण, 12/3, 2/9, सायण भाष्य सहित, ए०एस०एस० न० 65

81 धर्म कोश, पृष्ठ 1333

82. अथर्ववेद 2/5

83. वही, 5/37/7

84. आनृत्यत. शिखण्डिन: गन्धर्वस्याप्सरापते:।
ये शास्ना: परिनृत्यन्ति सायं गर्दभ नादिन:।। वही-8/6

85. वही, 2/6/4

विभिन्न पर्वतो कन्दराओ और स्वर्ग जैसे रमणीय स्थलो पर वास करती थी। ऋग्वेद के दो मंत्रो मे अप्सराओ का निवास गन्धर्वो के साथ जल मे बताया गया है।[86] अथर्ववेद मे भी एक स्थल पर इनका निवास स्थान समुद्र बताया गया है।[87]

अथर्ववेद मे गन्धर्वो के साथ अप्सराओ का दैवीकरण विशद रूप से पाया जाता है। अप्सराए गन्धर्वो की पत्नियां थी तथा सदैव नृत्यशील एव तेजस्विनी होती थी और आमोद-प्रमोद मे लिप्त रहती थी।[88] प्राचीन ग्रथो मे जहा कही गन्धर्व, किन्नर और अप्सराओ का वर्णन मिलता है वे सदैव गीत, नृत्य एव विलास वस्तुओ मे लिप्त बताए गए है।[89] इनका निवास जल मे या वृक्ष आदि पर हुआ करता था।[90] गन्धर्वो के स्त्री विषयक अनुराग के सम्बन्ध मे तत्कालीन मान्यता उल्लेखनीय है।[91] गन्धर्वो मे विश्वावसु प्रमुख है तथा उनका अपनी पत्नी अप्सरा के साथ दृढ़ साहचर्य ज्ञात होता है। सोमपान तथा गीत, वाद्य, नृत्य के साथ हर्षित एवं स्वच्छन्द रूप से उनका जीवन विहार प्रवर्तित होता है।[92] अथर्ववेद मे वैवाहिक जीवन सुखद होने के लिए गन्धर्वो एवं अप्सराओ की प्रार्थना की जाती थी तथा इस युगल को छवि प्रदान किया जाता था।[93] विवाह यात्रा के प्रचलित होने पर रास्ते मे वृक्षो को देखकर इनके निवासी गन्धर्व एवं अप्सराओ से प्रार्थना की जाती थी कि वे नव विवाहित युगल को बाधा न पहुंचाएं तथा उनके लिए सदैव मंगल की कामना करे।[94] इससे ज्ञात होता है कि अथर्ववेद के काल मे अप्सराओ को वृक्षो वनस्पतियो पर रहने वाली देवी के रूप मे माना जाता था।

अथर्ववेद के समय मे गन्धर्वो का आविर्भाव स्पष्टत· दिव्ययोनि मे हो गया था। युद्ध

86. ऋग्वेद, 10/123/5 पर सायण की टीका
87. अथर्ववेद, 2/5
88 अथर्ववेद, 4/38/1-5, 4/39/3
89. अथर्ववेद, 8/10/5-8, 12/1/23
90. अथर्ववेद 4/37/2-4, 12
91. प्रियो दृश इव भूत्वा गन्धर्व: सचते स्त्रिय.। अथर्ववेद, 4/37/11
92. अथर्ववेद, 7/109/2-5
93. अथर्ववेद, 14/2/34-36
94 ये गन्धर्वा अप्सरसश्च देवीरेषु वानस्पत्येषु येऽधितस्थु:।
स्योनास्ते अस्यै बध्वै भवन्तु मा हिंसिषुर्वहतु गुह्यमानम्।। अथर्ववेद, 14/2/9

मे वे इन्द्र की सहायता करते हुए बताए गए है।[95] शतोदना गो की रक्षा का उत्तरदायित्व उन्ही का है।[96] समय पड़ने पर गन्धर्व तथा अप्सरागण पर्याप्त हानि पहुचा सकते थे इसलिए अथर्व ऋषि ने भूमि को उपद्रव से मुक्त करने के लिए उनकी प्रार्थना की थी।[97] इससे ज्ञात होता है कि अप्सराएं न केवल नृत्य गीत मे ही तत्पर रहती थी अपितु वे गन्धर्वो के साथ अनेक अमांगलिक कृत्यो मे भी सम्मिलित होती थी। तत्कालीन लोगो की यह मान्यता दो कि अप्सरा आदि जातियो का आकर्षण अजश्रृंगी इत्यादि वनस्पतियो से है। इस वनस्पति से एक स्थान पर प्रार्थना की गयी है कि वह गन्धर्वो एव अप्सराओ से होने वाले उपद्रव का निराकरण करे।[98] इनसे होने वाले उपद्रव के निराकरण के लिए मंत्रितमणि तथा ताबीजो को भी धारण किया जाता था। लोगो की मान्यता थी कि ऐसी ताबीजो को धारण करने वाले व्यक्ति को गन्धर्व तथा अप्सरा हानि नही पहुंचा सकते।[99]

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अप्सराओ का व्यवसाय गन्धर्वो के साथ नृत्य गीत आदि करना था किन्तु इस समय तक इन्हे देवत्व की कोटि मे मान लिया गया था। यजुर्वेद मे अप्सराओ का उल्लेख अर्द्धदैवत्व के रूप मे प्राप्त होता है जिससे स्पष्ट होता है कि गान नृत्य तथा काम कला मे विशारद इनकी कल्पना लौकिक दृष्टि से बहुत पहले ही स्थिर हो चुकी थी। शुक्ल यजुर्वेद मे वर्णित पुरुषमेद्य मे गन्धर्व और अप्सराओ के लिए प्राप्य तथा संस्कारहीन व्यक्ति की आहुति विहित है।[100] जिससे यह संकेत मिलता है कि गान्धर्व कला के सम्बन्ध मे अभिजात्यवर्ग में हीनता की भावना उत्पन्न होने लगी थी।

शुक्ल यजुर्वेद के वाजस्नेयी संहिता में तत्कालीन व्यवसाय, कला-कौशल का

---

95 अथर्ववेद, 8/8/15

96 अथर्ववेद, 10/9/9

97 ये गन्धर्वा अप्सरसो ये चाराया· किमीदिन।
पिशाचान्सर्वा रक्षांसि तानस्मद् भूमे यावया॥
-अथर्ववेद, 12/1/50

98. अथर्ववेद, 4/37/2

99. अथर्ववेद, 8/5/13

100 शुक्ल यजुर्वेद, 30/19

पर्याप्त परिचय प्राप्त होता है। अध्याय 30 मे पुरुषमेध का वर्णन है इसके अन्तर्गत सूत, शैलूष, नर्तक, गायक, वीणा वादक, वंशीवादक आदि का उल्लेख है जो संगीत के विभिन्न व्यवसायी वर्गो का संकेत करते है।[101] इस विधि से यह ज्ञात होता है कि विभिन्न वाद्यो के व्यवसायी कुशल सगीतकारो के विभिन्न वर्ग इस समय तक निर्मित हो गए थे। तैत्तिरीय ब्राह्मण मे ऐसे व्यक्तियो के स्वतत्र वर्ग का उल्लेख गणक नाम से पाया जाता है।[102] और ऐसे ही वर्गो मे अप्सराओ के गणो की गणना होती थी जो नृत्य गीत मे पारगत मानी जाती थी और इस सन्दर्भ मे अप्सराएं मानवीय रूप धारण करती है।

I01. नृताय सूतं। गीताय शैलूषम्।
महसे वीणावादनम्। क्रोशाय तूणवद्धमम्।
अवरस्वराय शंखध्वम्। आनन्दाय तलवम्।
-वाजस्नेयी संहिता, 30/6

102 वीणा वादक गणकं गीताय।
-तैत्तिरीय ब्राह्मण, 3/4/13
आर० शामा शास्त्री (सं०) मैसूर, 1921
बि०इ० कलकत्ता, 1959

द्वितीय अध्याय

द्वितीय अध्याय

''महाकाव्यों एवं पुराणों में अप्सरा का प्रतिबिम्बन''

अप्सराओ के सन्दर्भ मे विशिष्ट सूचनाएं महाकाव्यो एवं पुराणो से ही प्राप्त होता है। अत महाभारत, रामायण के साथ ही विभिन्न पुराणो के विवरणो का विस्तृत विश्लेषण किया जा रहा है। चूंकि महाकाव्य और पुराण मे अप्सराओ का विश्लेषण विभिन्न सन्दर्भो जैसे उनके उत्पत्ति, आवास, कार्य और चरित्र का विश्लेषण विभिन्न स्वरूपो मे किया गया है अत. इस अध्याय मे स्रोतो मे अन्तर्निहित विवरणो की पुनरावृत्ति संभव है।

महाभारत मे अप्सराओ की उत्पत्ति देवर्षि कश्यप तथा देवी प्रावा से हुई मानी जाती है।[1] इसी प्रसंग मे महाभारत के रचनाकार ने पुरणो की मान्यता के आधार पर अप्सराओ को कपिला की सन्तान माना है।[2] महाभारत के अन्य प्रसगो मे इन्हे इन्द्र की वरदानी सेविकाएं[3] देवारण्य विहारिणी[4] देव पुत्रियॉ[5] तथा कतिपय स्थानो पर इन्द्र की कन्याएं[6] कही गई है। इससे यह ज्ञात होता है कि महाभारत के रचनाकाल तक अप्सराओ का पूर्ण दैवीकरण कर दिया गया था और इनकी देव वर्ग मे गणना होने लगी थी।

महाभारत मे इन्द्र यह प्रतिज्ञा करते है कि जो योद्धा युद्ध मे मारे जाएंगे उनको परलोक मे अप्सराएं प्राप्त होगी।[7] अप्सराएं विभिन्न प्रकार के वस्त्राभूषण तथा दिव्य मालाएं

---

1 इम त्वप्सरसां वश विदितं पुण्यलक्षणम् ।
प्रावा सूत महाभागा देवी देवर्षितः पुरा।।, महाभारत, आदि पर्व 59/47
- अनुवाद (ग्रन्थ सहित) गीता प्रेस, गोरखपुर (तृतीय संस्करण), 1968

2 अमृत ब्राह्मणा गावो गन्धर्वाप्सरसस्तथा।
अपत्य कपिलायास्तु पुराणे परिकीर्तितम।।, महाभारत, आदि पर्व 59/50

3 महाभारत, वन पर्व, 43/32

4 महाभारत, आदि पर्व, 216/15

5 महाभारत, आदि पर्व, 130/6

6 महाभारत, अनुशासन पर्व, 107/21

7- उपगीतोपनृत्तश्च गन्धर्वाप्सरसां गणै:।
प्रीत्या प्रतिगृहीतश्च स्वर्गेदुन्दुभिनिस्वनै:।।, महाभारत उद्योग 121/4

धारण करती थी।[8] अपने बालो को ऊपर करके पांच भागो मे विभक्त करके बांधती थी।[9] वे अपने सौन्दर्य तथा भाव भंगिमा से तपस्वियो की तपस्या भग करके इन्द्र की रक्षा करती थी।[10] महाभारत में अनेक ऐसे प्रसंग प्राप्त होते है जब इन्द्र की आज्ञा से अप्सराओ ने तपस्वियो की तपस्या भंग किया एक प्रसग से ज्ञात होता है कि भारद्वाज ऋषि अग्निहोत् करने के उद्देश्य से विचरण कर रहे थे, उसी समय घृताची नामक अप्सरा को देखकर आसक्त हो गए जिससे द्रोणाचार्य का जन्म होता है।[11] एक अन्य प्रसंग मे बताया गया है कि गौतम ऋषि तप कर रहे थे, उसी समय उन्हे लुभाने के लिए एक अप्सरा पहुचती है जिसके अनुपम सौन्दर्य को देखकर गौतम के नयन प्रफुल्लित हो उठे। उनके हाथो से धनुष बाण धरती पर गिर पड़े और शरीर मे कम्पन पैदा हो गयी। बाद मे वे उस आश्रम तथा अप्सरा को छोड़कर दूसरे स्थान पर चले गए।[12] अतः उपर्युक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि इस काल मे अप्सराओ का कार्य नृत्य, गीत एवं विषय भोग प्रदान करना तथा उसके माध्यम से तपस्वियो के तप को भंग करना था। साथ ही इनकी गणना इन्द्र के स्वर्ग की वारागनाओ मे की जाने लगी थी।

महाभारत के एक उद्धरण मे आर्ष्टिषेण मुनि ने पाण्डवो को अप्सराओ तथा गन्धर्वो

8- महाभारत, आदि पर्व, 133/53

9- महाभारत, वन पर्व, 134/12

10- महाभारत, आदि पर्व, 130/6,7 71/27-28, 35

11- महर्षिस्तु भारद्वाजो हविर्धाने चरन्पुरा।
ददर्शाप्सरसं साक्षात्घृताचीमाप्लुतामृषि·।।
तस्या वायु समुद्धूतो वसन व्यपकर्षत।
ततोऽस्य रेतश्चस्कन्द तदृषिद्रोण आदधे।।
तस्मिन्समभवद्द्रोण: कलशे तस्य धीमतः।
अध्यभीष्ट स वेदांश्च वेदाङ्गानि च सर्वशः।।, महाभारत, आदि पर्व, 121/3-5

12- तामेक वसनां दृष्ट्वा गौतमोऽप्सरसं वने।
लोकेऽप्रतिम सस्थानामुत्फुल्लनयनोऽभवत।
धनुश्च हि शराश्चास्य कराभ्यां प्रापतन्भुवि।
वेपथुश्चास्य तां दृष्टवा शरीरे समजायत।।
स विहायाश्रमं तं च तां चैवाप्सरस मुनि.।
जगाम रेतस्ततस्य शरस्तम्बे पपात ह ।।, महाभारत, आदि पर्व, 120/8-12

के अनेक गणो को दिखाया था[13] कुबेर के यहा जाने पर पाण्डवो ने देखा था कि वहां अनेक गन्धर्वो तथा अप्सराओ के गण बैठे हुए थे।[14] इन्द्र की सभा मे विश्वावसु, नारद, गन्धर्व एव अप्सराओ के गण इनकी सेवा मे उपस्थित होते थे।[15] इसी प्रकार राजा ययाति के स्वर्ग जाने पर अप्सराओ के गणों का निर्देश मिलता है।[16] इन वर्णनो से यह निष्कर्षित होता है कि अप्सराओ के अनेक गण थे। इन्द्र की सभा या कुबेर की सभा मे रहने वाली अप्सराओं के गण सम्भवत: सर्वोत्तम माने जाते रहे होगे।

महाभारत काल मे, वैदिक संस्कृति का उत्कर्ष काल होने के कारण, वैदिक संगीत की परम्परा प्रचलित थी। इस काल मे वैदिक संगीत के साथ-साथ गान्धर्व जैसे लौकिक गान के प्रचार का भी उल्लेख प्राप्त होता है। इसमे साम के अतिरिक्त गायन, वादन और नर्तन का समावेश रहता था।[17] गन्धर्व, किन्नर तथा किंपुरुषो के निवास स्थान पर तूर्य वाको का निनाद सदा सुनाई देता था।[18] गन्धर्वो के कुलो मे साम तथा समताल गीतो की ध्वनि निरन्तर प्रवाहित होती थी।[19] गन्धर्वो की स्त्रिया अप्सराए थी। अत ये गान्धर्व विद्या मे पारंगत थी। इन्द्र की सभा विश्वाची, घृताची, रम्भा, तिलोत्तमा, मेनका, उर्वशी, आदि अप्सराओ से गुंजायमान रहती थी। ये सभा मे आने वाले प्रत्येक विशिष्ट व्यक्ति के स्वागतार्थ तैयार रहती थी।[20] अर्जुन के वहां पहुंचने पर घृताची, मेनका, रम्भा, उर्वशी आदि

13- अरजासि च वसासि वसाना: कौशिकानि च।
. दृश्यन्ते बहव पार्थ गन्धर्वाप्सरसां गणा।।, महाभारत, आरण्यक 156/17

14- शतशश्चापि गन्धर्वास्तथैवाप्सरसां गणा:।
परिवार्योपतिष्ठन्त यथा देवा: शतक्रतुम।।, महाभारत, आरण्यक 158/37

15- विश्वावसुर्नारदश्च गन्धर्वाप्सरसां गणा ।।, महाभारत, उद्योग 11/12

16- उपगीतोपनृत्तश्च गन्धर्वाप्सरसां गणै.।।, महाभारत, उद्योग 123/4

17- महाभारत वनपर्व 91/14-15, शाति पर्व, 168/58
अनु०, 128/324, आश्वमेधिक 1/152, 32

18- वन पर्व, 11/524, संक्षिप्त महाभारत 19/969-70
सी०वी० वैद्य द्वारा सम्पादित।

19- संक्षिप्त महाभारत, 19/982-83

20- महाभारत, शांति पर्व, 191/16

अप्सराओ ने नृत्य किया था तथा तुम्बरू आदि गन्धर्वो ने वीणादि वाद्यों से गायन किया था।[21] नृत्य प्रायः गायन और वादन के साहचर्य से ही प्रवर्तित होता था।[22] अत: कहा जा सकता है कि अप्सराओ का प्रमुख कार्य नृत्य, गायन था जो उनका कुलोचित व्यवसाय था।

महाभारत मे अनेक अप्सराओ के नामो का उल्लेख प्राप्त होता है, जिनमे उर्वशी, मेनका, घृताची, विश्वाची आदि मुख्य अप्सराएं थी, जो सम्भवत: इन्द्र के दरबार मे रहती थी।[23] इनके अतिरिक्त अलम्बुषा मिश्रकेशी, विद्युत्पर्णा, तुलाघना, अरुणा, रक्षिता, रम्भा, मनोरमा, असिता, सुबाहु, सुब्रता, सुभुजा, सुप्रिया तथा अतिबाहु आदि नाम प्राप्त होते है।[24]

उर्वशी नामक अप्सरा का उल्लेख वैदिक साहित्यो से लेकर पौराणिक साहित्यो तक प्राप्त होता है। महाभारत मे उर्वशी और पुरुरवा के छः सन्तानो-आयु, श्रतायु, सत्यायू, रय, विजय, जय का नाम मिलता है।[25] अर्जुन के जन्म के समय गान करने वाली अप्सराओ मे इसका भी नाम मिलता है।[26] इसे कुबेर की सभा मे सेवा करने के लिए सदा तत्पर बताया गया है।[27] इसे इन्द्र की दरबार मे नर्तकी के रूप मे वर्णित किया गया है। इन्द्र लोक मे अर्जुन जब शिक्षा ग्रहण करने गये थे उस समय उसने उर्वशी को कुल की जननी के पूज्य भाव से देखा, किन्तु यह इन्द्र की समझ मे नही आया उन्होंने सोचा कि अर्जुन शायद काम भाव से उर्वशी को निहार रहा है। इन्द्र ने चित्ररथ गन्धर्व के द्वारा उर्वशी को समाचार भिजवाया।

21- सभा पर्व, 5/24

22- आरण्यक 40/6, विराट० 9/8

23- महाभारत, सभा पर्व, 5/'24

24- अलम्बुषा, मिश्रकेशी, विद्युत्पर्णा तुलाघना ।
अरुणा रक्षिता चैव रम्भा तद्वन्मनोरमा ।।
असिता च सुबाहुश्च सुव्रता सुभुजा तथा ।
सुप्रिया चातिबाहुश्च बिख्यातौ च हहाहुहू ।।, महाभारत, आदि०, 59/48-49
श्री पाद दामोदर सात वलेकर द्वारा सम्पा० बम्बई 1892-1907

25- महाभारत, आदि०, 70/22

26- महाभारत, आदि०, 114/54

27- महाभारत, सभा० - 10/11

उर्वशी ने अर्जुन से मिलने की इच्छा से स्नान किया।[28] स्नानोपरान्त उसने चमकीले आभूषण धारण किये। सुगन्धित दिव्य पुष्पो के हारो से अपने को अलंकृत किया। फिर मन ही मन प्रियतम के चिन्तन मे उसका हृदय एकाग्र हो गया।[29] सन्ध्याकाल मे वह अर्जुन के निवास स्थान की ओर चली।[30] इस समय उर्वशी के रूप, यौवन एवं सौन्दर्य का महाभारत कार ने मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है एवं बताया है कि वह चन्द्रमा को चुनौती दे रही थी।[31] उर्वशी इस समय अनेक आश्चर्यो से भरे हुए स्वर्गलोक मे भी सिद्ध चारण और गन्धर्वो के देखने के योग्य थी। अत्यन्त महीन मेघ के समान श्याम रंग की सुन्दर ओढ़नी ओढ़े तन्वड़गी उर्वशी आकाश मे बादलो से ढकी हुई चन्द्रलेखा सी चली जा रही थी। मन और वायु के समान तीव्र वेग से चलने वाली वह पवित्र मुस्कान से सुशोभित अप्सरा क्षणभर मे पाण्डुकुमार के महल मे जा पहुची।[32] अर्जुन बोले देविश्रेष्ठ अप्सराओ मे भी तुम्हारा सबसे ऊचा स्थान है, मेरे लिए क्या आज्ञा है?[33] उर्वशी ने कहा मै काम देव के वश मे हो गयी हू।[34] अर्जुन ने कहा मेरी दृष्टि मे कुन्ती माद्री और शची का जो स्थान है, वही तुम्हारा भी है। तुम पुरूवंश की जननी हो। तुम लौट जाओ। मेरी दृष्टि मे तुम माता के समान पूजनीया

28- उर्वशी चा करोत स्नान पार्थ दर्शन लालसा।, वही वनपर्व - 46/1

29- महाभारत वनपर्व - 46/2-4

30- निगम्य चन्द्रोदयने विगाढ़े रजनीमुखे।
प्रस्थिता सा पृथुश्रोणि पार्थस्य भवनं प्रति ॥, महाभारत 46/5

31- मृदुकुन्चितदीर्घेण कुमुदोत्करधारिणा।
केशहस्तेन ललना जगामाथ विराजती॥
भ्रूक्षेपालापमाधुर्ये. कान्त्या सौम्यत यापि च।
शशिन ववत्र चन्द्रेणसाऽऽह्वयन्तीव गच्छति॥
दिब्याडगरागौ सुमुखौ दिब्यचन्दनरूषितौ।
गच्छन्त्या हाररूचिरौ स्तनौ तस्या ववल्गतुः ॥, वनपर्व 46/6-13

32- सिद्धचारणगन्धर्वै· सा प्रयाता विलासिनी। . ....
.... भवन पाण्डुयुत्रस्य फाल्गुनस्य शुचिस्मिता ॥, 46/14-16

33- अभिवादयेत्वां शिरसा प्रवराप्सरसां वरे।
किमाज्ञापयसे देवि प्रेष्यस्तेऽहमुपास्थितः॥, 46/20

34- त्वद्गुणाकृष्टचित्ताहमनङ्गवशमागता।
चिराभिलषितो वीर ममाप्येष मनोरथ ॥ -वनपर्व 46/35

हो और तुम्हे पुत्र के समान मेरी रक्षा करनी चाहिए।[35] इस उत्तर से उर्वशी क्रोधित हो गयी तथा उसने शाप दिया कि तुम्हे स्त्रियो के बीच मे सम्मान रहित होकर नर्तक बनकर रहना पड़ेगा तुम एक वर्ष तक नपुसक कहलाओगे, इसके बाद उर्वशी अपने घर लौट गई।[36] महाभारत मे उर्वशी के नाम पर उर्वशी तीर्थ का उल्लेख मिलता है।[37]

महाभारत मे रम्भा नामक अप्सरा का भी उल्लेख प्राप्त होता है, इसे कश्यप और प्राधा की सन्तान बताया गया है।[38] वैदिक साहित्यो मे रम्भा का उल्लेख नही मिलता इससे स्पष्ट होता है कि इसकी प्रसिद्धि उत्तर वैदिक काल के बाद हुई। महाभारत मे एक उद्धरण प्राप्त होता है जिसके द्वारा ज्ञात होता है कि इन्द्र ने रम्भा को विश्वामित्र के तपोभंग के लिए भेजा था। उसने उत्तम रूप बनाकर विश्वामित्र को आकर्षित करना प्रारम्भ किया। विश्वामित्र को इन्द्र के इस षडयंत्र का आभास हो गया परिणाम स्वरूप उसने रम्भा को शाप दे डाला कि तू हजारो वर्षो तक शिला बनी रहेगी।[39] महाभारत में रम्भा का कुबेर के पुत्र नल कूबर के साथ, पत्नी के रूप मे रहने का साक्ष्य मिलता है। इसी सम्बन्ध मे एक बार रावण ने रम्भा का उपहास किया, जिससे क्रुद्ध होकर नलकूबर ने रावण को शाप दिया कि यदि वह किसी स्त्री का शील हरण करेगा तो उसका प्राणान्त हो जाएगा। नलकूबर के इसी शाप के कारण राम के द्वारा रावण का वध हुआ था।[40] महाभारत मे एक स्थान पर रम्भा को तुम्बरू नामक प्रसिद्ध गन्धर्व की पत्नी बताया गया है। तुम्बरू रम्भा पर आसक्त था जिसके कारण

35- यथा कुन्ती च माद्री च शची चैव ममानघे।
त्व हि मे मातृवत् पूज्या रक्ष्योऽह पुत्रवत् त्वया।।, वन० 46/46/47

36- एवमुक्ता तु पार्थेन उर्वशी क्रोध मूर्च्छिता।
वेपन्ती भृकुटीवक्रा शशापाथ धनंजयम।

पुनः प्रत्यागता क्षिप्रमुर्वशी गृहमात्मनः।।, वन० 46/48-51

37- महाभारत, वन०, 81/166

38- इमं त्वप्सरसां वंशं विदितं पुण्यलक्षणम
प्रावसुत महाभाग्गा देवी देवर्वितः पुरा ।।
अलंबुषा मिश्रकेशी विद्युत्पर्णा तुलानघा।
अरुणा रक्षिता चैव रम्भा तद्वन्मनोरमा।।, आदि० 59/47-48

39- महाभारत, अनु०-3/11

40- महाभारत, वन०, 264/68-69

उसे कुबेर के शाप का कोप सहना पडा था।[41] अर्जुन के जन्मोत्सव तथा इन्द्र के सभा मे अर्जुन के स्वागतार्थ इसने भी नृत्य किया था।[42] अष्टावक्र के स्वागत समारोह मे भाग लेने वाली अप्सराओ मे रम्भा ने भी भाग लिया था।[43] इससे यह ज्ञात होता है कि वह स्वर्ग मे रहने वाली तथा अभिनय कला एवं नृत्य कला मे दक्षता प्राप्त अप्सरा थी।

स्वर्ग लोक की छः प्रधान अप्सराओ मे एक प्रसिद्ध अप्सरा मेनका का उल्लेख प्राप्त होता है।[44] इसके द्वारा विश्वामित्र की तपस्या भंग किये जाने के प्रयास तथा उनके सहवास से शकुन्तला की उत्पत्ति की कथा प्राप्त होती है। राजा दुष्यन्त ने कण्व ऋषि के आश्रम पर जब शकुन्तला का परिचय पूछा, तो उसने कहा कि विश्वामित्र की तपस्या से भयभीत होकर, कि कही यह ऋषि मुझे मेरे पद से च्युत न कर दे, इन्द्र ने उनकी तपस्या भंग करने के लिए मेनका को भेजा था।[45] मेनका के अतुलित रूप और गुण को देखकर विश्वामित्र काम के वशीभूत हो गए तथा दोनो बहुत दिनो तक विहार करते रहे।[46] इसके परिणामस्वरूप मेनका ने मालिनी नदी के तट पर हिमालय के चट्टान पर एक बालिका को उत्पन्न किया। वह सफल मनोरथ वाली होकर, उस पैदा हुई सन्तान को मालिनी नदी के तट पर छोड़कर, शीघ्रता से इन्द्र की सभा मे चली गयी।[47] महाभारत के दूसरे प्रसंग से ज्ञात होता है कि विश्वावसु नाम से प्रसिद्ध गन्धर्व राज तथा मेनका से एक सन्तान उत्पन्न हुई थी। मेनका

41- महाभारत, उद्योग - 10/11-12
42- महाभारत, आदि० 114/51, वन० 44/29
43- महाभारत, अनु० 19/44
44- महाभारत, आदि० 68/67
क्रिटिकल एडिसन पूना, प्रताप चन्द्र राय (स) कलकत्ता
45- तप्यमानः किलपुरा विश्वामित्रो महत्तपः।

संशितात्मा सुदुर्धर्ष उग्रे तपसि वर्तते।। -आदि० 65/20-24
46- तस्या रूपगुणं दृष्ट्वा स तु विप्रर्षभस्तदा।

रममाणौ यथा कामं यथैक दिवस तथा।। -आदि० 66/6-7
47- जनयामास स मुनिर्मेनकाया शकुन्तलाम्।

कृतकार्य ततस्तूर्णमगच्छच्छक्रसंसदम्।। -आदि० 66/8-9

ने उस सन्तति को स्थूल केश नामक ऋषि के आश्रम के पास छोड़ दिया था।[48] इस कन्या का नाम प्रमदरा बतलाया गया है। स्थूल केश ने इसका विवाह रूरू ऋषि से कर दिया।[49] रूरू से इसे एक शुनक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसे प्रमदरा को एक बार साप ने डस लिया जिससे इसकी मृत्यु हो गयी किन्तु पति की आयु से वह पुन जीवित हो गयी।[50] इससे ज्ञात होता है कि मेनका अप्सरा का सम्बन्ध अनेक लोगो से था। सामान्यत यह उच्च वर्ग के लोगो के लिए सर्वसुलभ प्रतीत होती है।

महाभारत मे विश्वकर्मा के द्वारा निर्मित एक अप्सरा तिलोत्तमा का उल्लेख प्राप्त होता है।[51] विश्वकर्मा ने इसे प्रत्येक वस्तु के तिल-तिल से निर्मित किया था जिसके कारण इसका नाम तिलोत्तमा पड़ा था।[52] महाभारत मे एक कथा वर्णित है जिसके अनुसार सुन्दोपसुन्द नामक दो असुरो के साथ देवताओ का घोर युद्ध हुआ, जिसमे वे पराजित हो गए परन्तु उन्हे मारने के लिए इन्द्र ने उनके पास एक सुन्दर स्त्री तिलोत्तमा को भेजा। सुन्दोपसुन्द का नाश करने के लिए जाने से पूर्व उसने सभी देवो तथा ऋषियो की प्रदक्षिणा किया। उस समय उसके रूप यौवन से शंकर तथा इन्द्र आदि देवता भी विस्मित हो गए थे।[53] वह जब सुन्दोपसुन्द के पास पहुचती है तो इसे पाने के लिए दोनो मे झगडा होने लगता है

48- एतस्मिन्नेवकाले तु मेनकाया प्रजज्ञिवान्।
गन्धर्वराजो विप्रर्षे विश्वावसुरिति श्रुत ।।
अथाप्सरा मेनका सा त गर्भ भृगुननन्दन।
उप्ससर्ज यथाकाल स्थूल केशाश्रम प्रति।।, आदि० 8/5-6

49- आदि०, 8/13, अनुशासन० 30/65

50- महाभारत, आदि० 9/15

51- सा प्रयत्नेन महता निर्मिता विश्वकर्मणा।
त्रिषु लोकेषु नारीणा रूपेणाप्रतिमाऽभवत।, आदि० 203/10-14

52- तिल तिलं समानीय रत्नानां यद्धि निर्मिता।
तिलोत्तमेत्यतस्तस्या नाम चक्रे पितामह:।।, आदि० 203/17

53- गच्छन्त्यास्तु तदा देवा: सर्वे च परमर्षय:।
कृतमित्येव तत्कार्यं मेनिरे रूप सपदा।।
तिलोत्तमायां तु तदा गतायां लोकभावन·।
सर्वान्विसर्जयामास देवानृषिगणांश्च तान्।।, आदि० 203/29-30

परिणामस्वरूप वे आपस मे लड़कर एक दूसरे को मार डालते है। तिलोत्तमा जब देवो के पास वापस गयी तब ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया कि जहॉ-जहॉ सूर्य का प्रवेश होगा वहॉ-वहॉ तुम भी प्रविष्ट हो सकोगी। तुम्हारे लावण्य का प्रभाव अत्यन्त दाहक और गहरा होगा, जिसके कारण कोई भी तुम्हारे तरफ आख उठाकर नही देख सकेगा।[54]

महाभारत मे कश्यप और प्राधा से उत्पन्न मिश्रकेशी नामक अप्सरा का भी उल्लेख मिलता है।[55] इसका विवाह राजा पुरू के पुत्र रौद्राश्व के साथ हुआ था जिससे अन्वग्रभानु, रूचेयु, कक्षेयु (कृकणेयु), स्थडिलेयु, वनेयु, स्थलेयु, तेजेयु, सत्येयु, धर्मेयु एव सतनेयु (संततेयु) आदि दस धनुर्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे।[56] अर्जुन के जन्मोत्सव मे प्रम्लोचा नामक एक अप्सरा का भी नामोल्लेख मिलता है।[57] इससे उत्पन्न एक कन्या का नाम मालिनी मिलता है।[58] अत: इन अप्सराओ के चरित्र देखने से यह ज्ञात होता है कि अप्सराएं पतिव्रत धर्म का पालन करते हुए पुत्र उत्पन्न भी करती थी।

घृताची नामक अप्सरा का भी जन्म कश्यप और प्राधा से स्वीकारा गया है।[59] महाभारत से ज्ञात होता है कि भारद्वाज ऋषि और घृताची के संयोग से द्रोणाचार्य का जन्म होता है।[60] द्रोण कलश मे जन्म लेने के कारण उन्हे अयोनि सभव[61], कुम्भयोनि[62], कुम्भ सभव[63] आदि नामो से जाना गया। भारद्वाज और घृताची के सयोग से श्रुतावती नामक एक तपस्विनी का उल्लेख भी प्राप्त होता है। जिसने अपनी कठिन तपस्या के द्वारा इन्द्र को पति के रूप मे प्राप्त कर लिया था।[64]

54- महाभारत, आदि० 204/23
55- आदि० 59/47-48
56- आदि० 89/9-10
57- आदि० 114/54, सभा० 10/11
58- विराट० 8/14
59- आदि० 154/2
60- आदि० 121/4-6
61- आदि० 57/89, 129/5, 154/5
62- द्रोण० 132/22
63- द्रोण० 132/30
64- शल्य० 47/2

व्यास तथा घृताची के सयोग से शुकदेव नामक महापण्डित के जन्म की अवधारणा प्राप्त होती है।[65] इसी की पुष्टि शाति पर्व से भी होती है जिसमे शुकदेव का जन्म अरणी काष्ठ से बताया गया है।[66] च्यवन ऋषि के पुत्र प्रमति के सयोग से भी घृताची के एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जो रूरू के नाम से विख्यात था। रूरू ने प्रमद्वरा से शुनक नामक पुत्र उत्पन्न किया था।[67] इस प्रकार घृताची एक स्वच्छन्द विचरणशील स्त्री के रूप मे अपनी छवि छोड़ती है।

अद्रिका नामक अप्सरा को कश्यप और मुनि की सन्तति स्वीकार किया गया है। शाप वश यह जल मे मत्स्यी बन गई जिसने राजा मत्स्य तथा कन्या मत्स्यगन्धा को जन्म दिया।[68] मत्स्यगन्धा के अन्य नाम योजनगन्धा, काली तथा सत्यवती भी मिलते है।[69] यही सत्यवती आगे चलकर राजा शान्तनु की पत्नी बनी जिससे चित्रागद तथा विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र हुए। अद्रिका अप्सरा जो ब्रह्मा के शाप से मछली हो गयी थी, के पेट से उत्पन्न होने के कारण ही इसका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा था। एक दिन यमुना नदी के किनारे इसे पराशर ऋषि ने देखा एव मन्त्रमुग्ध हो गए।[70] पराशर एव मत्स्यगन्धा के सयोग से ही वेद व्यास नामक विश्व प्रसिद्ध पुत्र उत्पन्न हुआ।[71] जो महाभारत के रचनाकार भी माने जाते है। ये कौरव एव पाण्डवो के पूर्वज थे।

विश्वाची नामक अप्सरा की गणना छः प्रधान अप्सराओ मे की गयी है।[72] इसे भी कश्यप तथा प्राधा की सन्तान माना गया है।[73] इसका सानिध्य राजा ययाति के साथ बताया

65- महाभारत आदि० 57/74
66- महाभारत शाति, 311/9-10
67- आदि० 8/2
68- आदि० 64/5-12
69- तेन गन्धवतीत्येव नामास्या प्रथित भुवि।
तस्यास्तु योजनाद्गन्धमाजिघ्रन्ति नरा भुवि।।, आदि० 57/67
70- महाभारत आदि० 57/50-60
71- महाभारत आदि० 57/84-85
72- महाभारत आदि० 74/68
73- सभा० - 10/11

गया है।[74] यह पंचचूड़ा नाम से भी प्रख्यात थी, पाच जूड़ो को बाधने के कारण इसे पचचूड़ा कहा जाता था।[75] यह सदा कुबेर की सभा मे रहती थी।[76] शुकदेव को परमपद प्राप्ति के लिए ऊपर की ओर जाते समय देखकर यह आश्चर्य चकित हो गयी थी।[77] नारद से नारी स्वभाव को उद्धृत करते हुए इसने कहा था कि 'हे नारद ! यही स्त्री की कामना करने वाला पुरुष न हो और उन्हे परिजनो का भय न हो, तभी मर्यादा मे रहने वाली स्त्रिया मर्यादा मे रहती है, अन्यथा वे कभी मर्यादा मे नही रहती।'[78] अत. विश्वाची अप्सरा एक नारी चरित्र का प्रतिनिधित्व करती जान पड़ती है।

महाभारत मे अप्सराओ को न केवल देवो अपितु मृत योद्धाओ तथा सामान्य मनुष्यो के स्वर्ग पहुचने पर उनकी सेवा मे विशेष रूप से रत दिखाया गया है। युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा था कि निश्चय ही तुम स्वर्ग मे जाकर अपने सुन्दर रूप तथा भोली और मीठी वाणी से अप्सराओ के मन को वश मे करोगे। जब वहॉ अप्सराओ के संग विहार करोगे तो मेरे अच्छे कर्मो का भी स्मरण करोगे।[79] इसी प्रकार राजा ययाति के स्वर्ग पहुंचने पर गन्धर्वो और अप्सराओ के समुदाय ने उनके समीप पहुंचाना उनके सुयश का गान करते हुए नृत्य करके उन्हे प्रसन्न किया था।[80] इन्द्र बनने पर राजा नहुष ने इनके साथ सम्पूर्ण देवोद्यानो मे, नन्दनवन के उपवनो मे, कैलाश के शिखर पर, हिमालय के शिखर पर, मन्दराचल पर, श्वेत गिरि, शह्य, महेन्द्र तथा मलय पर्वतो पर, समुद्रो एवं सरिताओ मे क्रीड़ाएं तथा विहार

74- आदि० 80/83 पंक्ति 1-2
75- वन० 134/11
76- सभा० 10/112
77- शाति० 332/19-20
78- अनर्थित्वान्मनुष्याणा भयात्परिजन्य च।
मर्यादा याममर्यादा. स्त्रियस्तिष्ठन्ति भर्तृषु।।, अनु० 38/16
79- नूनमप्सरसां स्वर्गे मनांसि प्रमथिष्यसि।
परमेण च रूपेण गिरा च स्मित पूर्वया।।
प्राप्य पुण्यकृताल्लोकानप्सरोभि: सयोयिवान्।
सौभद्र विहरन्कालेस्मेरथा: सुकृतानि मे।।, स्त्री पर्व 20/26-27
80- उपगीतोपनृत्तश्च गन्धर्वोप्सरसां गणै·।
प्रीत्या प्रतिगृहीतश्च स्वर्गेदुन्दुभिनिस्वनै:।।, उद्योग पर्व 121/4

किया था।[81] शातिपर्व मे भीष्म ने कहा है कि युद्ध मे मरे हुए योद्धा जब स्वर्गलोक को प्रस्थान करते है तो सहस्रो अप्सराए उन्हे पति रूप मे वरण करने के लिए अत्यन्त वेग से दौड़कर आती है।[82]

उपर्युक्त विवरणो से ज्ञात होता है कि वीरो के स्वर्ग पहुंचने पर अप्सराओ द्वारा उनका अभिनन्दन किया जाता था। अत: यह कहा जा सकता है कि युद्ध मे मरने वाले योद्धाओ के प्रति अप्सराओ का आकर्षण तत्कालीन भारतीय समाज की एक बड़ी विशेषता थी। इसमे सन्देह नही कि अप्सराएं स्वच्छन्द विचरण करने वाली स्वैरिणी स्त्रियां थी।

अप्सराओ का विचरण प्राय पर्वत प्रदेशो मे ही होता था। वही के प्राकृतिक सौन्दर्य एव स्वच्छन्द वातावरण मे ये विहार करती थी। अर्जुन जब पाशुपतास्त्र प्राप्ति के लिए मंदराचल पर्वत के मेरू शिखर पर गए तो वह प्रदेश अप्सराओ से व्याप्त तथा किन्नरो से सुशोभित दिखाई देता था।[83] ऐसा ही वर्णन आरण्यक पर्व मे भी प्राप्त होता है।[84] पाण्डवो के वनवास काल मे गन्धमादन पर्वत पर उन्हे किन्नरो, पशु-पक्षियो, गन्धर्वो, अप्सराओ तथा सुन्दर जंगलो का सौन्दर्य दिखाई दिया था।[85] अर्ष्टिषेण मुनि के आश्रम पर जाने पर मुनि ने बताया था कि यहॉ रेशम के बने हुए निर्मल वस्त्र और माला धारण करके अनेक गन्धर्व और अप्सराओ के गण दिखाई देते है।[86] इस प्रकार हम देखते है कि महाभारत काल मे

81- महाभारत उद्योग पर्व 11/9-10

82- आहवे निहत शूर न शोचेते कदाचन।
आशोच्यो हि हत शूर. स्वर्गलोके महीयते।।
न ह्यन्नं नोदकं तस्य न स्नान नाप्यशोचकम।
हतस्य कर्तुमिच्छन्ति तस्य लोकाञ्शृणुष्व मे।।
वराप्सर सहस्राणि शूरमायोधने हतम्।
त्वरमाणा हि धावन्ति ममभर्ता भवेदिति।।, शान्ति पर्व 99/43-45

83- वृषंदश च शैलेन्द्र महामन्दरमेव च।
अप्सरोभि· समाकीर्ण किन्नरैश्चोपशोभितम्।।, द्रोण पर्व 80/32-33

84- स ददर्श शुभान्देशान्गिरेर्हिमवतस्तदा।
देवर्षिसिद्धचरितानप्सरोगणसेवितान्।।, वन पर्व 175/6

85- धातुभिश्च सरिद्भिश्च किंनरैर्मृग पक्षिभि·।
गन्धर्वैरप्सरोभिश्च काननैश्च मनोरमै·।।, वन पर्व 155/86

86- अरंजासि च वासांसि वसाना. कौशिकानि च।
दृश्यन्ते बहव· पार्थ गन्धर्वाप्सरसासां गणा ।।, वन पर्व 156/17

अप्सराएं इन्द्र की सभा की शोभा बढ़ाने के साथ, पर्वतारण्यो मे विचरण करती थी। ये अप्सराए सामान्य वारवनिताओ की तरह अपने रूप जाल का प्रभाव ऋषि-मुनियो के साथ-साथ अन्य व्यक्तियो पर भी डालती थी। परन्तु समाज मे इन्हे बहिष्कृत न करते हुए यथोचित स्थान दिया गया था साथ ही इनके ससर्ग से उत्पन्न व्यक्तियो को भी यथोचित स्थान दिया गया था।

रामायण मे अप्सराओ की उत्पत्ति समुद्र मथन से बतायी गयी है। ऐसी मान्यता प्रतिपादित की गयी है कि जब देवताओ ने अमृत प्राप्ति हेतु समुद्र मंथन किया तब विभिन्न रत्नो के साथ इनकी उत्पत्ति हुई।[87] इनकी संख्या साठ करोड़ बतायी गयी है, साथ ही इनकी परिचारिकाओ की संख्या असंख्य थी।[88] किन्तु इन्हे देवताओ तथा दानवो दोनो मे से किसी ने भी पत्नी रूप मे स्वीकार नही किया, परिणामस्वरूप वे सर्वसाधारण के लिए सुलभ हो गयी।[89]

आदि कवि बाल्मिकी के अनुसार रामायण का निर्माण गेय काव्य के रूप मे हुआ प्राप्त होता है।[90] रामायण मे वर्णित अनेक प्रसंगो मे गन्धर्वो तथा अप्सराओ के संगीत विषयक निर्देश प्राप्त होते है। इससे अनुमान होता है कि स्वागत तथा विदाई समारोहो मे अप्सराओ के नृत्य संगीत का महत्वपूर्ण स्थान था।[91] अत हम कह सकते है कि वैदिक समाज मे गान्धर्व की जो परम्परा प्रचलित हुई थी वह महाकाव्यो के युग तक चरमोत्कर्ष

87- अथ वर्ष सहस्रेण आयुवेदमय पुमान्।
उद्तिष्ठत् सुधर्मात्मा सदण्ड: सकमण्डलु:।।
पूर्व धन्वतरिर्नाम अप्सराश्च सुवर्चस:।
अप्सु निर्मथनादेव रसात् तस्माद वरस्त्रिय:।
उप्पेतुर्मनुज श्रेष्ठ तस्मादप्सरसोऽभवन्।।, रामायण 1/45/31/33- नारायण स्वामी (स०) मद्रास, 1933

88- षष्टि: कोट्योऽभवंस्तासामप्सराणां सुवर्चसाम्।
असंख्येयास्तु काकुत्स्थयास्तासां परिचारिका:।। -रामायण 1/45/34

89- नता: स्मप्रतिगृहणन्ति सर्वे ते देव दानवा:।
अप्रतिग्रहणादेव ता वै साधारण: स्मृता:।। -रामायण 1/45/35

90- रामायण - 1/4-27

91- रामायण - 2/19/16-18, 4/20/13

पर पहुच गयी थी।

- रामायण मे गान्धर्व के साथ ही गन्धर्व तथा अप्सराओ के सगीत कला का उल्लेख प्राप्त होता है। ये दोनो रूप सौन्दर्य एवं सगीत कला के आदर्श स्वीकार किये गये है। गन्धर्व विशेषत. गायन तथा वीणा वादन किया करते थे तथा अप्सराए इनके साथ अपने नृत्य का प्रदर्शन करती थी। ये रामायण मे दिव्य तथा अपौरूषेय कलाकारो के रूप मे प्रसिद्ध थे।[92] कहा गया है कि महेन्द्र पर्वत की उपत्यका मे सुरायान से मत्त गन्धर्व युगल तथा विद्याधर गण भरे पडे थे।[93] रामचन्द्र जी के जन्म तथा विवाह के अवसर पर अप्सराओ ने नृत्य किया था।[94] मेघनाद के वध के अवसर पर भी इनके नृत्य का उल्लेख मिलता है।[95] इससे अनुमान होता है कि अलौकिक पुरुषो के जन्म, मृत्यु, विवाह के अवसरो पर अप्सराएं कुशल नर्तकी के रूप मे नृत्य करती थी।

- नृत्य कला मे पारंगत होने के कारण अप्सराए लोगो को अपने रूप जाल मे फंसाने मे भी सिद्धहस्त मानी जाती थी। ये लोगो को अपनी ओर आसानी से आकर्षित कर लेती थी। इनके इन कार्यो से वेश्यावृत्ति का अनुमान होता है। अरण्यकाण्ड से ज्ञात होता है कि विराध पूर्व जन्म मे तुम्बरू गन्धर्व था, जिसको रम्भा नामक अप्सरा पर आसक्त होने के कारण शाप ग्रस्त होना पड़ा था।[96] मित्र की तृप्ति के लिए जाती हुई उर्वशी से वरुण ने प्रणय की याचना की थी।[97] इनकी वेश्यावृत्ति का परिचय रावण द्वारा रम्भ के शीलहरण प्रसंग में भी प्राप्त होता है।[98]

92- रामायण - 7/6/68
93- रामायण - 4/67/45
94- रामायण - 1/18/16-17, 1/73/38-39
95- रामायण - 6/90/85 –अनु० पं. राम नारायण दत्त शास्त्री, गीता प्रेस, गोरखपुर, स० 2017
96- रामायण 3/5/41-44
97- स ता पद्मपलाशाक्षी पूर्णचन्द्रनिभाननाम्।
वरुणो वरयामास मैथुनायाप्सरोवराम्।।
प्रत्युवाचतत: सा तु वरुणं प्राञ्जलि: स्थिता।
मित्रेणाहं वृता साक्षात् पूर्वमेव सुरेश्वर।। – रामायण 7/56/15-16
98- रामायण 7/26/40

रावण एक बार अपनी सेना के साथ कैलाश पर्वत पर ठहरा हुआ था। वहॉ कुबेर के सभा भवन मे गाती हुई अप्सराओ के गीत की मधुर ध्वनिया घण्टा नाद के रूप मे सुनाई देती थी।[99] इसी बीच समस्त अप्सराओ मे श्रेष्ठ सुन्दरी, पूर्ण चन्द्रमुखी रम्भा दिव्य वस्त्राभूषणो से सुसज्जित होकर उस मार्ग से निकली। वह उस समय अलौकिक कान्ति, शोभा, द्युति एवं कीर्ति से युक्त दूसरी लक्ष्मी के समान जान पड़ती थी।[100] वह सेना के बीच से होकर जा रही थी, रावण ने उसे देखा, एव मोहित हो गया तथा रम्भा का हाथ पकड़कर मुस्कुराता हुआ बोला[101] वरारोहे ! कहॉ जा रही हो? किसकी इच्छा पूर्ण करने के लिए स्वयं चल पड़ी हो? रम्भा ने कहा राक्षस शिरोमणे । धर्म के अनुसार मै आपके पुत्र की भार्या हूॅं। आपके बड़े भाई कुबेर के पुत्र मुझे प्राणो से भी बढ़कर प्रिय है। उन्ही लोकपाल कुमार प्रियतम नल कूबर को मिलने का वचन दिया है। यह सारा श्रृगार, उन्ही के लिए धारण किया है। जिस प्रकार उनका मेरे प्रति अनुराग है, उसी प्रकार मेरा भी उन्ही के प्रति अगाध प्रेम है, दूसरे के प्रति नही। आप मेरे माननीय गुरुजन है अत आपको मेरी रक्षा करनी चाहिए।[102]

यह सुनकर दशग्रीव ने नम्रतापूर्वक कहा रम्भे ! तुम अपने को मेरी पुत्रवधू बता रही

99- घण्टानामिव सनाद. शुश्रुवे मधुरस्वन ।
अप्सरोगणसघाना गायतां धनदालये। –रामायण - 7/26/9

100- एतस्मिन्नन्तरे तत्र दिब्याभरणभूषिता।
सर्वाप्सरोवरा रम्भापूर्णचन्द्रनिभानना।।
कृतैविशेषकैराद्रै षड्र्तुकुसुमोद्भवैः।
वभावन्यतमेव श्री कान्ति श्रीद्युतिकीर्तिभि ।। 7/26/14,17

101- तां समुत्थायगच्छन्ति कामवाणवश गत ।
करे गृहीत्वा लज्वन्ती स्मयमानोऽभ्यभाषत।। –रामायण 7/26/20

102- क्वगच्छसि वरारोहे कां सिद्धिं भजसे स्वयं।
कस्याभ्युदय कालोऽयसयस्तवा समुपभोक्षते।।
धर्मस्ते सुतस्याह भार्या राक्षस प्रङगव।
पुत्र· प्रियतर: प्राणैर्भ्रातुर्वैश्रवणस्य ते।।
तमुद्दिश्य तुमे सर्व विभूषणमिदं कृतम्।
यथा तस्य हि नान्यस्य भावो मां प्रतितिष्ठति।।
माननीयो ममत्व हि पालनीया तथास्मि ते।
एवमुक्तो दशग्रीव· प्रत्युवाचविनीतवत्।। –रामायण - 7/26/21-38

हो वह ठीक नही जान पड़ता। यह नाता रिश्ता उन स्त्रियो के लिए होता है जो किसी एक पुरुष की पत्नी हो। तुम्हारे देवलोक की तो स्थिति ही दूसरी है वहाँ सदा से यही नियम चला आ रहा है कि अप्सराओ का कोई पति नही होता। वहाँ कोई, एक स्त्री से विवाह करके नही, रहता है। ऐसा कहकर उसने रम्भा को बलपूर्वक शिला पर बैठाकर उसके साथ रमण किया।[103] एक दूसरे प्रसंग मे कहा गया है कि जब रावण को सीता के साथ पाशविक बल का प्रयोग करने की राय दी गयी[104] तो उसने कहा था कि इस विधि का आश्रय मै नही ले सकता क्योकि पुजिकस्थला अप्सरा के शीलहरण करने पर मै ब्रह्मा के शाप का भागी बन चुका हूँ।[105] इससे ज्ञात होता है कि अप्सराएं गणिकाओ की तरह सबके लिए सुलभ होती थी। ये अपने रूप यौवन का सौदा करती थी परन्तु इसके बदले मे किसी वस्तु के प्राप्त कंरने का उल्लेख प्राप्त नही होता। जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि अप्सराओ का व्यवसाय वैश्यावृत्ति करना नही था अपितु मानव मन की स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण, अप्सराओ का किसी व्यक्ति के प्रति तथा किसी व्यक्ति का अप्सरा के प्रति आकर्षण रहता था।

महाभारत के समान रामायण के प्रसंगो से भी ज्ञात होता है कि तत्कालीन ऋषि मुनियो की तपस्या को भंग करने हेतु इन्द्र द्वारा अप्सराएं पृथ्वी पर भेजी जाती थी। एक प्रसंग मे वर्णित है कि माण्डकर्णि नामक मुनि की तपस्या भंग करने हेतु अप्सराओ को नियुक्त किया गया था। उनके नृत्यो के साथ बजाए गए वाद्यो से समस्त वन प्रदेश प्रतिध्वनित हो उठा था।[106] इसी प्रकार विश्वामित्र की तपस्या को मेनका अप्सरा द्वारा भंग

103- स्नुषास्मि यदवोचस्त्वमेक पत्नीष्वय क्रम.।
देवलोक स्थितिरियंसुराणां शाश्वती मता।।
पतिरप्सरसां नास्ति न चैकस्त्रीपरिग्रह ।
एवमुक्त्वा स तां रक्षो निवेश्य च शिलातले।।
कामभोगाभिसरक्तो मैथुनायोपचक्रमे।
सा विमुक्ता ततो रम्भा भ्रष्टमाल्यविभूषणा।।–रामायण 7/26/39-41

104- बलात्कुक्कुटवृत्तेन प्रवर्तस्व महाबल।
आक्रम्याक्रम्य सीतां वै तां भुङ्क्ष्व च रमस्वच।। –रामायण 6/13/4

105- रामायण - 6/13/5-6
वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, 1912-20

106- रामायण 3/12/7 तथा 3/13/17

किये जाने का उल्लेख मिलता है। जब विश्वामित्र तपस्या कर रहे थे, तब कुछ समय बाद परम सुन्दरी मेनका पुष्कर तीर्थ मे स्नान करने आयी। विश्वामित्र ने उसे देखा, उसका रूप, लावण्य अतुलनीय था। जैसे बादल मे बिजली चमक रही हो उसी प्रकार वह पुष्कर के जल मे शोभा पा रही थी। उसे देखकर विश्वामित्र ऋषि मोहित होकर उसे अपने आश्रम मे निवास करने के लिए ले गए, अत· मेनका उनके आश्रम मे निवास करने लगी।[107] आश्रम मे मेनका के रहने से उनकी तपस्या मे बहुत विघ्न उपस्थित हो गया। मेनका के उस आश्रम मे दस वर्ष बड़े सुखपूर्वक बीते। इतना समय व्यतीत हो जाने पर महामुनि लज्जित से हो गए। चिन्तामग्न हो गए। मुनि के मन मे रोषपूर्वक यह विचार आया कि यह सब देवताओ का षडयन्त्र है। हमारी तपस्या को भंग करने के लिए उन्होने यह प्रयास किया है।[108] मै कामजनित मोह से ऐसा ग्रस्त हुआ कि मेरे दस वर्ष एक दिन रात के समान बीत गए। मेरी तपस्या मे बहुत बड़ा विघ्न उपस्थित हो गया। ऐसा विचार कर मुनिवर लम्बी सांस खीचते हुए पश्चाताप से भर गए।[109] उस समय मेनका अप्सरा भयभीत होकर थर-थर कापती हुई हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी हो गयी। उसकी ओर देखकर विश्वामित्र ने मधुर वचनो

107- तत कालेन महता मेनका परमाप्सरा ।
पुष्करेषु नरश्रेष्ठ स्नातु समुपचक्रमे।।
तां ददर्श महातेजा मेनका कुशिकात्मजा ।
रूपेणाप्रतिमां तत्र विद्युतं जलदे यथा।।
कन्दर्पदर्पवशगो मुनिस्तामिदमब्रवीत।
अप्सर स्वागतं तेऽस्तु वसचेहममाश्रये।।
अनु गृहणीष्व भद्रं ते मदनेन विमोहितम्।
इत्युक्तवा सा वरारोहा तत्र वासमथाकरोत्। –रामायण 1/63/4-7

108- तपसो हि महाविघ्नो विश्वामित्रमुपागमत्।
तस्यां वसन्त्यां वर्षाणि पन्च पन्च च राघव।।
विश्वामित्राश्रमे सौम्ये सुखेन व्यतिचक्रमुः।
अथ काले गते मस्मिन विश्वामित्रो महामुनि·।
सव्रीड इव संवृत्ताश्चिन्ताशोक परायणः।।
सर्व सुराणां कमैतत् तपोऽपहरण महत्।। –रामायण 1/63/8-10

109- अहोरात्रापदेशेन गता संवत्सरादश।
काम मोहाभिभूतस्य विघ्नोऽय प्रत्युपस्थित·।।
स निःश्वसन् मुनिवर. पश्चातापेन दु·खित·।। रामायण –1/63/11-12

द्वारा उसे विदा कर दिया और स्वयं उत्तर पर्वत पर चले गए।[110]

एक दूसरे प्रसंग मे रम्भा द्वारा विश्वामित्र के तपोभग का उल्लेख प्राप्त होता है। ज्ञातव्य है कि एक बार देवराज इन्द्र ने रम्भा से कहा कि देवताओ का एक बहुत बड़ा कार्य तुम्हे सिद्ध करना है। महर्षि विश्वामित्र को प्रलोभित करके उन्हे काम और मोह के वशीभूत कर दो।[111] देवराज का ऐसा वचन सुनकर, मधुर मुस्कान वाली सुन्दरी अप्सरा ने परम उत्तम रूप बनाकर विश्वामित्र को लुभाना आरम्भ किया। विश्वामित्र ने मीठी बोली बोलने वाली कोकिल की मधुर काकली सुनी। उन्होने प्रसन्नचित्त होकर जब उधर दृष्टिपात किया तो सामने रम्भा खड़ी दिखायी दी।[112] कोकिल के कलरव, रम्भा के अनुपम गीत और अप्रत्याशित दर्शन से मुनि के मन मे सन्देह हो गया। देवराज का षडयन्त्र उनकी समझ मे आ गया, फिर तो मुनिवर विश्वामित्र ने क्रोध मे भरकर रम्भा को शाप देते हुए कहा। रम्भे ! मै काम और क्रोध पर विजय प्राप्त करना चाहता हूँ और तू आकर मुझे लुभाती है। अत इस अपराध के कारण तू दस हजार वर्षो तक पत्थर की प्रतिमा बनकर खड़ी रहेगी।[113] इस प्रकार रामायण काल मे यह मान्यता प्रबल प्रतीत होती है कि जब देवताओ को किसी व्यक्ति से यदि अपने परम पद को छीने जाने का भय होता था तो देवता अप्सराओ का सहारा लेकर अपना कार्य करते थे।

110- भीतामप्सरस दृष्टवा वेपन्ती प्रान्जलिस्थिताम्।
मेनका मधुरैर्वाक्यैर्विसृज्य कुशिकात्मज ।।
उत्तर पर्वत राम विश्वामित्रो जगामह।। - रामायण 1/63/13

111- सुरकार्यमिद रम्भे कर्त्तब्यं सुमहत् त्वया।
लोभन कौशिकस्येह काम मोहसमन्वितम्।। - रामायण1/64/1

112- सा श्रुत्वा वचनं तस्य कृत्वा रूप मनुत्तमम्।
लोभयामास ललिता विश्वामित्रं शुचिस्मिता।।
कोकिलस्य तु शुश्राव वल्गु ब्याहरतः स्वनम्।
सम्प्रहृष्टेन मनसा स चैनामवैक्षत।। –रामायण 1/64/8-9

113- अथ तस्य च शब्देन गीतेनाप्रतिमेन च।
दर्शनेन च रम्भाया मुनिः संदेहमागतः।।
सहस्त्राक्षस्य तत्सर्वविज्ञायमुनिपुङ्गवः।
रम्भां क्रोध समाविष्टः शशाप कुशिकात्मजः।।
यन्मां लोभयसे रम्भे काम क्रोध जयैषिणम्।
दश वर्ष सहस्त्राणि शैली स्थास्यसि दुर्भगे।। –रामायण - 1/64/10-12

रामायण मे अप्सराओ के अन्तर्गत उर्वशी, रम्भा, मेनका, घृताची, मिश्रकेशी, अलम्बुषा, पुजिकस्थला आदि वारांगनाओ के उल्लेख बार-बार हुए है। ये महाभारत काल मे भी प्रसिद्ध अप्सराएं थी। इनके अतिरिक्त नागदत्ता, हेमा, सोमा तथा अद्रिकृतस्थली आदि इन्द्र की सभा मे तथा ब्रह्मा की सेवा मे रत अप्सराएं थी।[114] इन अप्सराओ का आह्वान ऋषि मुनि अपने राजाओ के स्वागत तथा मनोरंजन के लिए समय-समय पर करते थे। भारद्वाज ऋषि के आह्वान पर ब्रह्मा ने दिव्य आभूषणो से युक्त बीस हजार अप्सराओ को भेजा था। इनके अतिरिक्त बीस हजार अप्सराएं नन्दनवन से आयी थी।[115] इन अप्सराओं मे प्रमुख अंलम्बुषा, मिश्रकेशी, पुण्डरीका तथा वामना ने भरत के समीप नृत्य किया था।[116] लाल चन्दन से भूषित इन सुन्दरी अप्सराओ से संयुक्त होकर भरत के सैनिको को अयोध्या लौटने की कोई चाह नही रह गयी थी।[117] अत. यह अनुमान किया जा सकता है कि ऋषियो के निर्देश पर अप्सराएं किसी भी स्थान पर नृत्य करने को तैयार रहती थी।

रामायण काल मे भी यह मान्यता प्रचलित थी कि युद्ध में वीरगति प्राप्त करने वाले सैनिको को स्वर्ग मे अप्सराओ के स्वागत का सुख मिलेगा। मृतक बालि को सम्बोधित करते हुए उसकी पत्नी तारा ने कहा था, कि अब तो आप रूप और यौवन से इठलाती हुई एवं काम कला मे प्रवीण अप्सराओ के चित्त को लुभाया करेगे।[118] अत: अप्सराओं का मुख्य

114- घृताचीमथविश्वाची मिश्रकेशीमलम्बुषाम्।
नगदत्तां च हेमां च सोममद्रिकृतस्थलीयम्।।
शक्र याश्चोपतिष्ठन्ति ब्रह्माणंयाश्चभामिनी:।
सर्वास्तुम्बरुणा सार्थं माह्वये सपरिच्छदा:।।–रामायण 2/91/17-18

115- तेनैव च मुहुर्तेन दिब्याभरणभूषिता:।
आगुविंशति सहस्रा ब्रह्मणा प्रहिता: स्त्रिय:।
आगुविशति सहस्त्रा नन्दन नाददप्सरोगणा:।। –2/91/43-45

116- अलम्बुषा मिश्रकेशी पुण्डरीकाथवामना।
उपानृत्यन्तभरतं भरद्वाजस्य शासनात्।। –2/91/47

117- तर्पिता: सर्वकामश्च रक्तचन्दनरूषिता:।
अप्सरोगण संयुक्ता: सैन्यावाचमुदीरयन्।।
नैवायोध्या गमिष्यामो . ...। –2/91/58-59

118- रूप यौवन दृप्तानां दक्षिणाना च मानद।
नूनमप्सरसामार्य. चिन्तानि प्रयधिष्यति।। –रामायण - 4/20/13

कार्य लोगो का मनोह्लाद करना ज्ञात होता है।

रामायण के उद्धरणो से कुछ महत्वपूर्ण अप्सराओ के चारित्रिक विशेषताओ पर प्रकाश पड़ता है। वर्णन प्राप्त होता है कि एक बार अप्सराओ मे श्रेष्ठ उर्वशी अपने सखियो के साथ जलक्रीड़ा के लिए समुद्र के पास गई।[119] उस समय वरुण के मन मे उर्वशी के लिए अत्यन्त उल्लास प्रकट हुआ और उसने उर्वशी को आमंत्रित किया।[120]

उर्वशी ने वरुण को बताया कि मित्र देवता ने पहले से ही उसका वरण कर लिया है।[121] परन्तु यत्नपूर्वक समझाने पर उर्वशी ने वरुण के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, साथ ही मित्र द्वारा उस पर हुए अधिकार पर दु.ख प्रकट किया।[122] उर्वशी की स्वीकृति पर वरुण ने प्रज्जवलित अग्नि के समान प्रकाशमान अपने तेज को कुम्भ मे डाल दिया। इसके पश्चात् उर्वशी मित्र के पास गई। परन्तु मित्र ने उसे शाप दे डाला जिससे वह बुध के पुत्र राजर्षि पुरुरवा की पत्नी हो गई।[123] बहुत समय पश्चात्, मनोहर दंत और सुन्दर नेत्र वाली उर्वशी मित्र के दिये गए शाप से मुक्त होने पर इन्द्र की सभा मे चली गयी।[124] एक दूसरे प्रसंग से ज्ञात होता है कि पुरुरवा को ठुकराकर उर्वशी को काफी पश्चाताप हुआ था।[125] वरुण, मित्र, उर्वशी प्रसंग से ज्ञात होता है कि इनके द्वारा कुम्भ मे छोड़े गए तेज से महर्षि वशिष्ठ तथा अगस्त का जन्म होता है।[126] अत: एक परम सुन्दरी, स्वच्छन्द विचरणशील, इन्द्र की सभा तथा पृथ्वी लोक पर विचरण करने वाली स्त्री के रूप मे इसका चरित्र दृष्टिगोचर होता है।

रम्भा नामक दूसरी प्रमुख अप्सरा का उल्लेख रामायण मे रावण-रम्भा प्रसग तथा विश्वामित्र के तपोभंग प्रसंग मे मिलता है। प्रथम प्रसंग से उसके चरित्र, रूप सौन्दर्य तथा गुण का परिचय प्राप्त होता है। इसमे रचनाकार ने रम्भा के रूप का अद्भुत वर्णन किया

119- रामायण - 7/56/13
120- रामायण - 7/56/14-15
121- रामायण - 7/56/16
122- रामायण - 7/56/19-20
123- रामायण - 7/56/21-26
124- रामायण - 7/56/29
125- रामायण - 3/48/18
126- रामायण - 7/56/5-10

है जो भारतीय रमणी के रूप का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है।[127] रावण-रम्भा प्रसंग मे तत्कालीन अप्सराओ के चरित्र को स्पष्ट किया गया है। रावण कहता है कि 'अप्सराओं का कोई पति नही होता।'[128] यद्यपि रम्भा नलकूबर के साथ पत्नी के रूप मे रहती थी तथापि इस समय तक विवाह की मर्यादा स्थापित न होने के कारण इसका स्वच्छन्द विचरण होता था।

रामायण मे विश्वाची, मिश्रकेशी और अलंबुषा अप्सराओ का नामोल्लेख, भरत की सेना के सत्कार के लिए भारद्वाज ऋषि द्वारा किए गए आह्वान के सन्दर्भ मे मिलता है।[129] भारद्वाज की आज्ञा से इन्होने भरत के समक्ष नृत्य किया था।[130] अर्थात् दक्ष नर्तकियों के रूप मे इनका चित्रण प्राप्त है।

पुंजिकस्थला नामक अप्सरा के बारे मे उल्लेख प्राप्त होता है कि शाप के कारण यह कपि योनि मे वानरराज कुंजर की पुत्री अंजना के नाम से अवतीर्ण हुई। भूतल पर इसके रूप की समानता करने वाली अन्य कोई स्त्री नही थी।[131] अंजना नाम से विख्यात पुंजिकस्थला का विवाह वानरराज केशरी से हुआ। एक दिन जब यह मानवी स्त्री का शरीर धारण करके पर्वत शिखर पर विचरण कर रही थी, तब वायु देवता ने इसके वस्त्र का हरण कर अव्यक्त रूप से इसका आलिगन करते हुए इसके साथ मानसिक सकल्प से समागम किया परिणामस्वरूप इसने एक गुफा मे हनुमान को जन्म दिया।[132] रावण ने भी इस अप्सरा को उद्धृत किया था कि मैंने इसका शीलहरण किया था जिसके कारण मुझे ब्रह्मा के शाप का भागी बनना पड़ा।[133] अत. यह भी एक तत्कालीन प्रमुख अप्सरा थी।

एक अन्य अप्सरा घृताची का उल्लेख प्राप्त है। यह राजा कुशनाभ की पत्नी के रूप

127- रामायण - 7/26/14-20
128- रामायण - 7/26/39
129- रामायण - 2/91/17
130- रामायण - 2/91/46/47
131- रामायण - अप्सराऽप्सरसां श्रेष्ठा विख्याता पुंजिकस्थला।
अञ्जनेति परिख्याता पत्नी केसरिणो हरेः।।
विख्याता त्रिषुलोकेषु रूपेणाप्रतिमाभुवि। –रामायण 4/66/8-9
132- रामायण - 4/66/8-20
133- रामायण - 6/13/5-6

मे चित्रित हुई है। इसने कुशनाभ से एक सौ कन्याओ को जन्म दिया था।[134] भारद्वाज ऋषि ने भरत के स्वागतार्थ इसको भी बुलाया था।[135] इसने विश्वामित्र की तपस्या भंग किया था। वह उनके आश्रम मे दस वर्ष तक रही थी। इसमे आसक्त होने के कारण महामुनि विश्वामित्र ने दस वर्ष के समय को एक दिन के बराबर माना था।[136] इससे ज्ञात होता है कि यह अप्सरा अत्यन्त कार्यकुशल तथा सुन्दर थी।

पुराण भारतीय आचार शास्त्र और धर्म दर्शन के विश्वकोष है और अप्सराओ के अध्ययन के सन्दर्भ मे प्रचुर स्रोत पुराणो मे ही उपलब्ध है। पुराणो मे यक्ष, राक्षस, नाग, किरात, किन्नर, गन्धर्व, अप्सरा आदि का उल्लेख है। पुराणो मे प्राचीन वर्गो मे गन्धर्व और अप्सराओ का प्रभाव भारतीय संस्कृति पर विशेष रूप से पड़ने का उल्लेख है। पुराणो मे सर्वत्र गान्धर्व विवाह का उल्लेख है। इस विवाह का उल्लेख विष्णु, वायु, ब्रह्माण्ड, मत्स्य तथा अन्य पुराणो मे भी मिलता है।[137] मत्स्य पुराण मे गन्धर्व गण हेमकूट नामक पर्वत पर अप्सराओ के साथ निवास करते थे।[138] वायु, विष्णु, ब्रह्माण्ड तथा मत्स्य पुराणो के कथानुसार गन्धर्व और अप्सराओ का सहवास सुमेरू पर्वत पर होता था।[139] इससे ज्ञात होता है कि अप्सराएं गन्धर्वो के साथ निवास करने वाली स्त्रियां थी। इससे विवरण मिलता है क़ि सम्पूर्ण पारम्परिक साहित्य मे गन्धर्व अप्सराओ के पति के रूप में ही वर्णित किये गए है।

वास्तव मे पुराणो मे जहॉ कही नृत्य आदि उत्सव का वर्णन है, वहॉ नर्तकी के रूप मे अप्सराओ का उल्लेख मिलता है। विष्णु और मत्स्य पुराणो में नृत्यकला को सूर्य मण्डल की शोभा विस्तार का कारण माना गया है।[140] पुराणो मे जहॉ कही अप्सराओ के नृत्य का

134- रामायण - 1/32/10
135- रामायण - 2/91/17
136- रामायण - 4/35/7
137- विष्णु पुराण - 4/6/35-47, वायु पुराण - 2/15
ब्रह्माण्ड पुराण 1/2/16, मत्स्य पुराण - 24/30-32
138- मत्स्य पुराण 114/82
139- विष्णु पुराण - 2/2/48, वायु पुराण - 34/3
ब्रह्माण पुराण- 2/15/49, मत्स्य पुराण - 113/42
140- नृत्यन्त्यप्सरसो यान्ति सूर्यस्यानु निशाचरा.।
गन्धर्वश्चाप्सरश्चैव गीत नृत्यैरूपासते।। -विष्णु पुराण - 2/10/20

वर्णन हुआ है वहॉ तिलोत्तमा का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है। भागवत् पुराण मे सूर्य के बारह रूपो के साथ बारह अप्सराएं वर्णित है। तिलोत्तमा का साहचर्य त्वष्टा के साथ बताया गया है।[141] ब्रह्म पुराण के अनुसार स्वर्ग मे नृत्य करने वाली अप्सराओ मे तिलोत्तमा उल्लिखित है।[142] भागवत् पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण के अवतार के समय अप्सराएं नृत्य करने लगी थी जिनमे तिलोत्तमा प्रमुख थी।[143] मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित किया गया है कि इन्द्र एक बार अप्सराओ के साथ नन्दन वन मे उपस्थित थे जहॉ नारद भी आ गए। इन्द्र ने नारद को प्रसन्न करने के लिए उनकी इच्छानुसार, अप्सराओ का नृत्य दिखाने का उन्हे वचन दिया। इस प्रसंग मे रम्भा, उर्वशी, तिलोत्तमा और मेनका आदि अप्सराओ का उल्लेख है।[144] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार नन्दनवन मे इन्द्र के साथ क्रीड़ा करने वाली अप्सराओ मे तिलोत्तमा का नाम आया है।[145]

मार्कण्डेय पुराण मे एक अन्य प्रसंग से ज्ञात होता है दिव्य नर्तकियो मे विश्वाची, घृताची, उर्वशी, तिलोत्तमा, मेनका, रम्भा इत्यादि मुख्य थी। ये विभिन्न अभिनयो के साथ नृत्य मे दक्ष बतायी गयी है।[146] अप्सराओ की संगति मे प्रयुक्त किये जाने वाले वाद्यो का परिचय एक अन्य प्रसंग मे प्राप्त होता है।[147] अप्सराएं न केवल नृत्य कला मे पारंगत होती

141- त्वष्टा ऋचीकतनय· कम्बलश्च तिलोत्तमा। –भागवत पुराण - 12/11/43

142- रम्भा तिलोत्तमाद्याश्चे दिव्याश्चाप्सरसोऽब्रुवन। –ब्रह्म पुराण - 212/80

143- जगु किन्नर गन्धर्वा सिद्ध चारणा·।
विद्याधर्यस्य ननृतरप्सरोभि सम तदा।। –भागवत पुराण 10/3/6

144- श्रृणुष्वावहितोभूत्वा यदवृत्तं नन्दनेपुरा।
शक्रस्याप्सरसाचैव नारदस्य च सगमे।।
नारदो नन्दनेऽपस्यत्पुश्चली गणमध्यगम्।
शक्रं सुराधिराजानंतन्मुखासक्त लोचनम्।। –मार्कण्डेय पुराण 1/27/-28

145- रम्भा वा मिश्रकेशी वा उर्वश्यथ तिलोत्तमा।
घृताची मेनका वापि यत्र वा भवतो रूचि·।। –मार्कण्डेय पुराण 33

146- मार्कण्डेय पुराण 106/59-60

147- प्रावाद्यन्त ततस्तत्र वेणुवीणादिद दर्दुरा:।
पणवा: पुष्कराश्चैव मृदङ्गा: पटहानका:।
देवदुन्दभय: शंखा: शतशोऽथ सहस्रश:।।
गायदिभवचैव गन्धर्व्वैर्नृत्यद्भि[illegible] चाप्सरोगणा:।
तूयर्यवादित्र घोषैश्चसव्वै कोलाहली कृतम्।। –मार्कण्डेय पुराण - 106/61-62

थीं अपितु नाटको मे अभिनय करने की कला मे भी दक्ष थी। अप्सराओ द्वारा नाटक खेलने का उल्लेख कालिदास ने पार्वती के विवाह के अवसर पर भी किया है।[148]

पुराणो मे अप्सराएं प्राय इन्द्र की सेवा मे समर्पित की गयी है। इन्द्र की आज्ञा से वे पृथ्वी पर ऋषियो की तपस्या भग करने के लिए आती है। पुराणो मे अनेक ऋषियो मुनियो के आख्यान प्राप्त होते है जो तपस्या मे लीन बताए गए है और उनकी तपस्या अप्सराओ के द्वारा भंग करने की चेष्टा की गयी है।[149]

वैदिक काल मे प्रचलित यक्ष, गन्धर्व, किन्नर आदि वर्गो को जब उनके साहचर्य में रहने वाली स्त्रियो को भी समाहित किया गया तो ये निम्न कोटि की स्त्रियो में परिगणित होकर वारवनिताओ के रूप मे विद्यमान हो गयी। पुराणो के समय तक अप्सराओ का व्यवसाय पूर्णतः सामान्य वारवनिताओं की तरह प्राप्त होता है। वे विभिन्न प्रकार के अलंकरण धारण कर व्यक्तियो को आकर्षित करती थी।[150] मार्कण्डेय पुराण मे वरुथिनी नामक एक अप्सरा की कथा प्राप्त होती है। वह हिमालय पर घूमते हुए एक ब्राह्मण पर कामासक्त हो गयी थी जब ब्राह्मण ने पूछा तो उसने कहा था कि मै वरुथिनी नामक अनमोल और अतिसुन्दर अप्सरा हूँ।[151] इससे ज्ञात होता है कि इस समय तक अप्सराएं वेश्या की कोटि मे आ गयी थी। वरुथिनी अप्सरा को ठुकरा कर जब तेजस्वी ब्राह्मण चला गया तब वह अत्यन्त कामातुर हो गयी और तब कलि नामक एक गन्धर्व ने उस ब्राह्मण का रूप धारण कर उसके साथ सहवास किया, जिसके फलस्वरूप स्वरोत्ती नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।[152] मार्कण्डेय पुराण के एक प्रसंग से ज्ञात होता है कि नदी के मध्य से एक सुन्दर

148- कुमार संभव - 7/90/91

149- भागवत पुराण - 4/6/25 तथा पुराण चरित्रकोश मे वर्णित आख्यान

150- श्रृंगारवेशाः सुश्रोण्यो हारैर्युक्ता मनोहरैः।
हावभाव समायुक्ताः सर्वाः सौन्दर्य शोभिताः।। –महाभारत, उद्योग, - 9/11

151- तं ददर्श भ्रमन्तञ्च मुनिश्रेष्ठं वरूथिनी।
वराप्सरा महाभागा मौलेया रूपशालिनी।।
तस्मिन दृष्टे ततः साभूद्विजवर्ये वरूथिनी।
मदनाकृष्ट हृदयासानुरागाहि तत्क्षणात्।। –मार्कण्डेय पुराण 61/35-36

152- मार्कण्डेय पुराण 61/14-15, 62/22-25, 63/6-7

और मनोहर अप्सरा प्रम्लोचा निकली थी। महात्मा रुचि ने उससे विवाह किया, जिससे एक अतिशक्तिशाली और बुद्धिमान पुत्र उत्पन्न हुआ। पिता के नाम पर इसका नाम रच्य पड़ा।[153]

देवी भागवत पुराण मे नर नारायण की कथा प्राप्त होती है जिसमे कहा गया है कि नारायण की तपस्या भंग करने हेतु इन्द्र ने सोलह हजार पचास अप्सराओ को बद्रिकाश्रम मे भेजा था।[154] उन्हे देखकर नारायण ने सर्वाग सुन्दरी स्त्री उत्पन्न कर दी। नारायण के उरू प्रदेश से उत्पन्न होने के कारण उस सुन्दरी का नाम उर्वशी पड़ा।[155] अप्सराओ ने नारायण की शक्ति को देखते हुए नारायण से अपने को अपनाने का आग्रह किया।[156] इन अप्सराओ द्वारा बार-बार आग्रह करने पर नारायण ने उन्हे आश्वस्त किया कि वे दूसरे जन्म में उनके पति बनेगे। इस प्रकार नारायण ने पाणिग्रहण का आश्वासन देकर उन्हे विदा किया।[157] ये

153- ततस्तस्मान्नदीमध्यात् समुप्तस्थौ मनोरमा।
प्रम्लोचा नाम तन्वङ्गी तत्समीपे वराप्सरा ।।
साचोवाच महात्मान रूचि सुमधुराक्षरम्।
प्रश्रयावनता सुभ्रू प्रम्लोचा वैवराप्सरा·।।
अतीव रूपिणी कन्यामत्सुतातपतांवर।
जातावरुणपुत्रेण पुष्करेण महात्मना।।
तां गृहाण मया दत्ता भार्यार्थे वरवर्णिनीम्।
मनुमर्हामतिस्तस्या समुत्पत्स्यति ते सुत·।।
तस्या तस्य सुतो यज्ञे महावीर्यो महामति.।
रौच्योऽभवत पितुर्नाम्ना ख्यातोऽत्र बसुधातले।। -मार्कण्डेय - पुराण 98/1-47

154- तासा द्वयष्टसहस्राणि पंचाशदधिकानि च।
वीक्ष्य तौ विस्मितौ जातौ कामसैन्यं सुविस्तरम्।। -देवी भागवत - 4/6/28

155- इति संचित्य मनसा करेणोरू प्रताडयवै।
तरसोत्पादयामास नारी सर्वाङ्ग सुन्दरीम्।।
नारायणोरूसंभूता हयुर्वशीति ततः शुभा।
ददृशुस्ता स्थितास्त्रु विस्मय परम ययुः।।
तासा च परिचर्यार्थ तावतीश्चातिसुन्दरी।
प्रादुश्चकार तरसा तदा मुनिरसंभ्रम ।। -देवी भागवत - 4/6/35-37

156- देवी भागवत - 4/6/49/51

157- भविष्यामि महाभागा पतिरत्यन्य जन्मनि।
अष्टाविंशे विशालाक्ष्यो दापरेऽस्मिन्धरातले।
देवानां कार्यसिद्धयर्थं प्रभविष्यामि सर्वथा।।
तदा भवत्यो मद्दारा· प्राप्य जन्म पृथक्पृथक्।
भूपतीनां सुता भूत्वा पत्नी भावं गमिष्यथ।।
इत्याश्वास्य हरिस्तास्तु प्रतिश्रुत्य परिग्रहम।
व्यसर्जयत्स भगवाञ्जग्मुश्च विगतज्वरा.।। -देवी भागवत -4/17/14-17

अप्सराएं द्वापर युग मे सोलह हजार गोपिकाओ के रूप मे अवतरित हुई और नारायण ने कृष्ण का रूप धारण किया। मत्स्य पुराण मे कृष्ण के सोहल हजार गोपियो का उल्लेख मिलता है।[158] भविष्य पुराण मे अप्सराओ द्वारा नारद से पूछकर वेश्यावृत्ति करने तथा कृष्ण को पति के रूप मे प्राप्त करने की कथा वर्णित है। अन्त मे नारद ने पुण्य नक्षत्र मे रविवार पड़ने पर एक पूजा का आयोजन किया। पूजा के अन्त मे चौवन संख्या पर निर्दिष्ट मन्त्र से भगवान विष्णु का ध्यान करने और प्रदक्षिणा करने से वेश्या के पाप से मुक्ति का उपाय बतलाया।[159] इस प्रकार कृष्ण की सोलह हजार गोपिया भी अपने पूर्व जन्म मे अप्सराएं थी।

विष्णु पुराण मे यही कथा भिन्न रूप से वर्णित है। इसमे अष्टावक्र का उल्लेख है और मत्स्य पुराण की तरह बिना नमस्कार किए प्रश्न पूछने से कृष्ण के वियोग का भी वर्णन है।[160] भागवत पुराण मे इन सोलह हजार स्त्रियो को भौमासुर के अन्तःपुर मे रहने वाली बतलाया गया है। जब भगवान कृष्ण भौमासुर के भवन मे गए थे तो उन्होंने देखा कि भौमासुर ने सोलह हजार एक सौ राजकुमारियो को अपने भवन मे रख छोड़ा है। जब उन राजकुमारियो ने कृष्ण को देखा तो मोहित होकर उन्होंने कृष्ण को अपने प्रियतम पति के

158- जलक्रीड़ा विहारेषु पुरा सरसि मानसे।
भवतीनाञ्च सर्वासां नारदोऽभ्यासमागत ।।
हुतासन सुता· सर्वा भवन्त्योऽप्सरस पुरा।

एवं नारद शापेन केशवस्य च धीमत.।
वेश्यात्वमागता· सर्वाभवन्त्यः काममोहिताः।। –मत्स्य पुराण - 69/20-25

159- भविष्य पुराण - 4/111/5-15, 39-40, 54

160- जितेष्वसुरसङ्घेषु मेरूपृष्ठे महोत्सवः।
वभूव तत्र गच्छन्त्यो ददृशुस्तं सुरस्त्रियः।।
रम्भा तिलोत्तमाद्यास्तु शतशोऽथ सहस्रशः।
तुष्टुवुस्तं महात्मानं प्रशंशसुश्च पाण्डव।।
इतरास्त्वब्रुवविप्र प्रसन्नो भगवान्यादि।
तदिच्छामः पतिं प्राप्तुं विप्रेन्द्र पुरुषोत्तमम्।।
इत्युदीरितमाकर्ण्य मुनिस्ताभिः प्रसादितः।
पुनः सुरेन्द्रलोक वै प्राह भूयो गमिष्यथ।। –विष्णु पुराण- 5/38/72-83

रूप मे मन ही मन वरण कर लिया।[161] बाद मे कृष्ण ने इन्हे मुक्त कराकर इनके साथ विधिवत विवाह किया कृष्ण द्वारा नरकासुर के अन्त पुर की सोलह हजार एक सौ स्त्रियो के साथ विवाह करने का उल्लेख विष्णु पुराण मे भी उल्लिखित है।[162] इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि कृष्ण की सोलह हजार एक सौ पत्नियां पूर्व जन्म की अप्सराएं थी और इन अप्सराओ मे वैवाहिक जीवन बिताने तथा पति प्राप्त करने की कामना सदा विद्यमान रहती थी। मत्स्य पुराण मे सोलह सौ अप्सराओ का उल्लेख अनंगव्रत के प्रसंग मे भी हुआ है।[163] इसी प्रकार एक अन्य प्रसंग मे कहा गया है कि उर्वशी का व्रत करने से व्यक्ति पितरो के साथ साठ हजार वर्ष तक स्वर्ग मे वास करता है और अप्सराओ एवं गन्धर्वो द्वारा सेवित होता है।[164] ब्रह्म पुराण मे एक प्रसंग मे ऋषि विश्वामित्र तथा मेनका अप्सरा की कथा का वर्णन है। पुन. गम्भीरा और अतिगम्भीरा नाम की दो अप्सराओ द्वारा विश्वामित्र की तपस्या भग करने और उनके द्वारा शाप दिये जाने का भी उल्लेख है। इन्ही दो अप्सराओ के नदी

161- तत्र राजन्य कन्यानां षट्सहस्राधिकायुतम्।
भौमाहृतानां विक्रम्य राजभ्यो ददृशेहरि·।।
त प्रविष्टं स्त्रियो वीक्ष्य नरवीर विमोहिता ।
मनसा वव्रिरेभिष्टं पति दैवोपसादितम्।
भूयात् पतिरयं महय धाता तदनुमोद्ताम्।
इति सर्वा: पृथक् कृष्णे भावेन हृदय दधु:।। –भागवत पुराण 10/59/33-35

162- कन्याश्च कृष्णो जग्राह नरकस्य परिग्रहान्।
तत. काले शुभे प्राप्ते उपयेमे जनार्दन:।।
ता कन्या नरकेणासन्सर्वतो यास्समान्हृता:।
षोड्शस्त्रीसहस्राणि ततोऽधिकम्।
तावन्ति चक्रे रूपाणि भगवान मधुसूदन:।। –विष्णु पुराण - 5/31/15-16, 18

163- मत्स्य पुराण - 70/33/34

164- उर्वशी रमणे पुण्ये विपुले हंसपाण्डुरे।
परित्यज्यति य. प्राणान शृणु तस्यापियत्फलम्।।
षष्टिवर्ष सहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च।
सेव्यते पितृभि: सार्द्धं स्वर्गलोके नराधिप।।
उर्वशीन्तु सदा पश्येत् स्वर्गलोके नरोत्तम।
पूज्यते सततं पुत्र ऋषि गन्धर्व किन्नरै:।। –मत्स्य पुराण - 105/34-35

रूप में गंगा में मिलने पर इस तीर्थ का महत्व बताया गया है।[165] मत्स्य पुराण में इन तीर्थों के प्रसंग में कहा गया है कि जिन स्थानों पर गोदावरी नदी बहती है वह हव्य कव्य आदि प्राप्त करने वाले पितरों के परम प्रिय तीर्थ अप्सरोयुग के नाम से प्रसिद्ध हैं।[166] अप्सराओं द्वारा वेश्यावृत्ति करने और विभिन्न तीर्थों के पालन करने से ज्ञात होता है कि उनका कृत्य सामान्य नारी से भिन्न नहीं था। ये अपने कृत्यों के प्रायश्चित के लिए सदैव तत्पर रहती थीं तथा ऋषि मुनियों से विभिन्न प्रकार के उपदेशों द्वारा तुष्ट होती थीं। उनके निर्दिष्ट मार्गों द्वारा अपने मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करने का प्रयास करती थीं।

वायु पुराण के अध्यायों में गन्धर्व तथा अप्सराओं के चौदह कुलों का निर्देश किया गया है। यद्यपि महाभारत और पुराणों में गन्धर्वों और अप्सराओं की उत्पत्ति कश्यप और प्राधा से बतलायी गयी है जबकि अग्नि पुराण में कश्यप की पत्नी मुनि से ही अप्सराओं की उत्पत्ति निरूपित की गयी है।[167] सम्भवत: प्राधा, प्रावा या मुनि कश्यप की एक ही पत्नी का नाम है। वायु पुराण में चौंतीस कल्याणी अप्सराएं हैं जिनके नाम अन्तरा, दार्वत्या, प्रियमुख्या, सुलोत्तमा, मिश्रकेशी, चासी, पर्णनी, अलम्बुषा, मारीची, पुत्रिका, विद्युद्रौणा, तिलोत्तमा, अद्रिका, लक्षणा, देवी, रम्भा, मनोरमा, सुवरा सुबाहु, पूर्णिता, सुप्रतिष्ठिता, पुण्डरीका, सुगन्धा, सुदन्ता, सुरसा, हेमा, सारद्वती, सुवृत्ता, कमला, सुभुजा, हंसपादा हैं।[168]

165- अप्सरोयुग माख्यातमप्सरासंगमं ततः।
तीरे च दक्षिणे पुण्यं स्मरणात्सुभगोभवेत्।।
मुक्तोभवत्य सन्देह तत्र स्नानादिना नरः।।

ताभ्यां परस्परं चापि ताभ्यां गङ्गासु संगमः।। –ब्रह्म पुराण - 147/1-21

166- प्रतीकस्य भयाद्विभन्नं यत्र गोदावरी नदी।
तत्वीर्थहव्यकव्या नामप्सरोयुग संज्ञितम्।।
श्राद्धाग्निकार्य दानेषु तथा कोटिशताधिकम्।। –मत्स्य पुराण - 22/58-59

167- खसायां यक्षरक्षांसि मुनिरेप्सरसोऽभवत्।
अरिष्टायास्तु गन्धर्वाः कश्यपाद्विस्थिरंचरम्।। –अग्नि पुराण - 19/18

168- चतुस्त्रिशंद्यवीयस्यस्तेषामप्सरसः शुभाः।
अन्तरादावत्या च प्रियमुख्या सुरोत्तमा।।
मिश्रकेशी तथा चाशी पर्णिनी वाप्यलम्बुषा।

सुभुजा हंसपादा च लौकिक्योऽप्सरसस्तथा।
गन्धर्वाप्सरसो दयेता मौनेयाः परिकीर्तिताः।। –वायु पुराण, उत्तरार्द्ध - 8/4-8

वायु पुराण से स्पष्ट है कि अप्सराओ के चौदह पवित्र गण प्रसिद्ध है, उन चौदह मे से दो गणो के नाम आहूत और शोभयन्त है। आहूत गण की अप्सराएं ब्रह्मा की मानस कन्याएं है।[169] इसी प्रकार शोभयन्त गण की कन्याएं मनु की कन्याए है। ब्रह्मा के मानस कन्याओ की उत्पत्ति का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे भी प्राप्त होता है।[170] हरिवंश पुराण मे भी मेनका, सहजन्या इत्यादि अप्सराओ की उत्पत्ति को भी, प्रजापति से जोड़ा गया है।[171] तीसरे कुल की अप्सराएं वेगवन्त गण की कही गयी है जो अरिष्टा से उत्पन्न बताई गयी है। चौथा कुल सूर्य से उत्पन्न अग्निसंभव नामक गण है। आयुष्मती नामक अप्सराएं अति प्रकाशमान शरीर वाली थी। चन्द्रमा का तेज जो गर्भ मे आहित हुआ उससे कल्याणी प्रदायिनी कुरू नामक अप्सराओ की उत्पत्ति हुई। यज्ञ से उत्पन्न होने वाली अप्सराओ को शुभा कहा गया। ऋक् और साम से उत्पन्न अन्य अप्सराओ के गण वहीन नाम से प्रसिद्ध हुए। अमृत से उत्पन्न होने वाली अप्सराए वारीजा नाम से विख्यात है। वायु से उत्पन्न होने वाली अप्सराएं सुदा कहलाती है। पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले को भवा नाम से जाना जाता है। विद्युत से उत्पन्न होने वाली अप्सराए रूचा कहलाती है। मृत्यु की कन्याएं भैरवा नाम से ख्याति अर्जित करती है। काम की कन्याएं शोभयन्ती नाम से जानी जाती है। इस प्रकार अप्सराओ के चौदह कुलो का वर्णन मिलता है।[172] अत: विभिन्न अप्सराओ की उत्पत्ति सूर्य,

---

169- गणा अप्सरसाड्खयाता: पुण्यास्ते वै चतुर्द्दश।
आहूता शोभयन्तश्च गणाह्येते चतुर्द्दश।।
-------------------------------------- –वायु पुराण, उत्तरार्द्ध - 8/53/54

170- ततोऽसृजत् सभूतानि स्थावराणि चराणि च।
यक्षान् पिशाचान् गन्धर्वास्तथैवाप्सरसांगणान्।। –मार्कण्डेय पुराण - 48/37

171- मेनका, सहजन्या च पर्णिका पुञ्जिकस्थला।

मनोवती चापि तथा वैदिक्योऽप्सरसस्तथा।
प्रजापतेस्तु संकल्पात् संभूता भुवनप्रिया:।। –हरिवंश पुराण 36/49-50

172- गणा अप्सरसाडखयाता. पुण्यास्ते वै चतुर्द्दश।
आहूता शोभयन्तश्च गणा ह्येते चतुर्द्दश।।
ब्रह्मणो मानसा· कन्या: शोभयन्त्यो मनो. सुता.।
वेगवन्त्यस्त्वरिष्टाया ऊर्ज्जायाश्चाग्नि सम्भवा.।।
आयुष्मन्त्यश्च सूर्यश्च रश्मि जाता: सुभा स्वरा.।
वारिजा ह्यमृतोत्पन्ना अमृता नामत: स्मृता:।।
वायूत्पन्ना मुदानाम भूमिजाता भवास्तु वै।
विद्युतश्चो रूचो नाम मृत्यो: कन्याश्च भैरवा:।
शोभयन्त्य: कामगुणा गणा: प्रोक्ताश्चतुर्द्दश।। –वायु पुराण, उत्तरार्द्ध - 8/53-57

जल, वायु, पृथ्वी, आकाश इत्यादि से हुई जिसका वर्णन वैदिक ग्रथो, महाकाव्यो और पुराणो मे है।

वायु पुराण के उपर्युक्त प्रसंग से ज्ञात होता है कि इन्द्र, विष्णु इत्यादि ने अप्सराओ के स्वरूपो को निर्मित किया। इन सबमे मे महाभाग्यशालिनी सुर नारी तिलोत्तमा, जिसे परम सुन्दरी कहा जाता है, उल्लेखनीय है। रूप एव यौवन से समृद्ध, विख्यात देव नारी प्रभावती ब्रह्मा के कुण्ड से उत्पन्न कही जाती है। कान्तियुक्त सुर नारी वेदवती बुद्धिमान चतुर्मुख ब्रह्मा के वेदी से उत्पन्न हुई। रूप एवं यौवन से सम्पन्न हेमा यम की पुत्री थी। ये सभी अप्सराएं एक समान चम्पा के पुष्प की भांति सुगन्धित शरीर वाली थी। जो बिना मद्यपान किए ही अपने प्रियतम के सहवास मे मस्त हो जाती थी। इनके स्पर्श करने से प्रियजन सतुष्ट होकर आनन्द से विभोर हो उठते थे।[173] इस प्रकार अप्सराओ के विभिन्न कुल तथा उनकी उत्पत्ति वायुपुराण मे वर्णित है।

ब्रह्माण्ड पुराण मे वायु पुराण के चौदह कुलो के दुहराते हुए कहा गया है कि ये चौदह कुल अत्यन्त पवित्र माने गए है। इसमे भी सोलह गन्धर्वो के नामो के बाद चौतीस अप्सराओ की गणना की गयी है।[174] पंचचूड़ अप्सराओ की संख्या दस है, जो ब्रह्मवादिनी तथा पुण्य

173- सेन्द्रो पेन्द्रै· सुरगणै. रूपातिशय निर्मिता ।
शुभरूपा महाभागा दिव्यनारी तिलोत्तमा।।
ब्रह्मणश्चाग्नि कुण्डाच्च देवनारी प्रभावती।
रूप यौवन सम्पन्ना उत्पन्ना लोकविश्रुता।।

सम्प्रयोगे तु कान्तेन माद्यान्ति मदिरा विना।
तासामाप्यायते स्पर्शदानन्दश्च विवर्द्धते।। –वायु पुराण उत्तरार्द्ध 8/56-62

174- चतुर्विंशाश्चा वरजास्तेवामप्सरस. शुभा।
अरुणा चानपाया च विमनुष्या वरांबरा।।
मिश्रकेशी तथा चासिपर्णिनी चाप्यलम्बुषा।
मारीचि· शुचिका चैव विद्युत्पर्णा तिलोत्तमा।।
अद्रिका: लक्ष्मणा क्षेमा दिव्या रंभा मनोभवा।
असिता च सुबाहूश्च सुप्रिया सुभुजा तथा।।
पुंडरीकाङ्जगन्धा च सुदती सुरसा तथा।
तथैवास्या: सुबाहूश्च विख्यातौ च हहाहुहू।।
तुंबरुश्चेति चत्वार: स्मृता गन्धर्व सत्तमा:।
गन्धर्वाप्सरसो ह्येते मौनेया: परिकीर्तिता:।।
हसा सरस्वती चैव सूता च कमलाभया।
सुमुखी हंस पादी च लौकिक्योऽप्सरस: स्मृता.।। –ब्रह्माण्ड पुराण - 3/7/5-10

फल देने वाली है।[175] वायु तथा ब्रह्माण्ड के वर्णन प्राय: एक ही समान है। इनके विवरणो से ज्ञात होता है कि पुराणो के आख्यान किसी एक ही स्रोत से लिए गए है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि अप्सराओ के चौदह कुलो की परम्परा पुराणो के समय तक विद्यमान थी। इन कुलो का वास्तविक स्वरूप तो नही ज्ञात होता है, किन्तु इनके विवरणो से यह स्पष्ट हो जाता है, कि इन कुलो की स्त्रिया देवताओ और ऋषियो की पत्नियां तथा माताएं थी।

पुराणो के विवरणो के आधार पर प्रमुख अप्सराओ की जो चारित्रिक विशेषताएं उभरकर आती है, उनका मूल्यांकन समीचीन प्रतीत होता है। ये विशेषताएं महाभारत के विवरणो से काफी साम्य रखती है। उर्वशी जो एक वैदिक कालीन अप्सरा है, की उत्पत्ति नारायण की जंघा से बतायी गयी है।[176] कालान्तर मे नर-नारायण ने उसे इन्द्र की सेवा मे उपहार स्वरूप दे दिया।[177] मत्स्य पुराण मे उर्वशी की उत्पत्ति भगवान विष्णु के उरू भाग से बतायी गयी है।[178] पुराणो के अनुसार मित्र और वरुण तथा उर्वशी के ससर्ग से अगस्त और वशिष्ठ का जन्म होता है।[179] इन्ही आख्यानो मे मित्र, वरुण द्वारा उर्वशी को मृत्युलोक

175- पचचूड़ास्त्विमा विद्यादेवमप्सरसो दश।
मेनका सहजन्या च पर्णिनी पुजिकस्थला।।
कृतस्थला घृताची च विश्वाचीपूर्वाचित्यपि।
प्रम्लोचेत्यभिविख्याताऽनुम्लोचैव तु ता दश।।
अनादिनिधनस्याथ जज्ञेनारायणस्य या।
कुलोचितानवद्यागी उर्वश्येकादशी स्मृता।।
मेनस्य मेनका कन्या जज्ञे सर्वाड्.ग सुन्दरी।
सर्वाश्च ब्रह्मवादिन्यो महाभागाश्च ता स्मृता:।।
गणास्त्वसरसां ख्याता· पुण्यास्ते वै चतुर्दश।
आहृत्य शोभवत्यश्च वेगवत्यस्तथैव च।।

इत्येते बहुसाहस्त्रा भास्वरा अप्सरोगणा:।
देवता मृषीणां च पत्न्यश्चमारश्च ह ।।
सुगन्धाश्चाथ निष्पंदा सर्वाश्चाप्सरस· समा ।
सम्प्रयोगस्तु कामेन माद्यं दिवि हरं विना।। –ब्रह्माण्ड पुराण 3/7/14-26

176- देवी भागवत पुराण - 4/6/28

177- देवी भागवत - 4/6/45-46,वायु पुराण उत्तरार्द्ध 8/51
ब्रह्माण्ड - 3/7/16 भागवत - 11/4/15

178- मत्स्य पुराण - 61/24-26

179- मत्स्य पुराण - 61/27/31

मे पुरुरवा की स्त्री होने के शाप का भी उल्लेख मिलता है।[180] मत्स्य पुराण के अनुसार उर्वशी को मृत्युलोक मे आने का शाप भरत मुनि द्वारा दिया गया था।[181]

पुराणो मे उर्वशी और पुरुरवा के प्रणय प्रसंगो का विवरण मिलता है। ब्रह्म पुराण के अनुसार उर्वशी और पुरुरवा की प्रणय-क्रीड़ा अनेक वनो तथा पर्वतो पर हुई थी।[182] अत· पुरुरवा तथा उर्वशी से आयु, विद्वान, अमावसु, धर्मात्मा, श्रतायु, दृढ़ायु, वनायु और वहवायु नामक सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे।[183] इस प्रकार उर्वशी राजा पुरुरवा की प्रेयसी ज्ञात होती है।

पुराणो मे भी उर्वशी एक कुशल नर्तकी के रूप मे चित्रित की गयी है। यह स्वर्ग मे आयोजित महोत्सवो मे सदा अप्सराओ के साथ नृत्य करती हुई बतलायी गयी है।[184] यह पृथ्वी पर भी राजाओ के दरबार मे नृत्य करती थी। हिरण्यकशिपु के दरबार मे नाचने वाली अप्सराओ मे इसका नाम मिलता है।[185] अप्सराएं ऋषि मुनियो की तपस्या भंग करने के लिए प्राय: पृथ्वी पर इन्द्र द्वारा भेजी जाती थी इस कृत्य मे उर्वशी प्रवीण समझी जाती थी।[186]

उर्वशी के नाम पर उर्वशी तीर्थ तथा उसके महात्म्य का वर्णन प्राय: पुराणो मे मिलता है।[187] इस प्रकार उर्वशी के रूप, सौन्दर्य, नृत्य, अभिनय की ख्याति वैदिक काल से लेकर महाकाव्यो के समय तथा पौराणिक काल मे भी था। इस समय उसे पवित्र तीर्थ स्थानो के रूप मे स्मरण किया जाने लगा।

180- भागवत् पुराण - 9/14/17

181- विस्मृताऽभिनय सर्वं यत्पुरा भरतोदितम्।
शशाप भरत क्रोधाद्वियोगादस्य भूतले।।
–मत्स्य पुराण 24/30

182- ब्रह्म पुराण - 10/4-8

183- ब्रह्म पुराण - 10/11-12

184- उर्वशी विप्राचित्तिश्च हेमा रम्भा च भारत।
हेमदत्ता घृताची च सहजन्या तथैव च।। –हरिवंश - 69/15

185- मत्स्य पुराण - 160/73/74

186- विष्णु पुराण - 5/38/73

187- उर्वशी तीर्थमाख्यातमश्वमेधफलप्रदम्।
स्नानदान महादेवा वासु देवार्चनादिभि ।। –ब्रह्म पुराण - 171/1
उर्वशी रमणे पुण्ये विपुले हस पाण्डुरे।
परित्यजति या: प्राणान् श्रृणु तस्यापियत फलम्।। –मत्स्य पुराण - 105/34

रम्भा की उत्पत्ति समुद्र से बताई गयी है।[188] महाकाव्यो मे वर्णित विश्वामित्र द्वारा रम्भा को दिये गए शाप से उद्धार का उल्लेख स्कन्द पुराण मे मिलता है। इसमे श्वेत मुनि के द्वारा रम्भा के उद्धार की कथा वर्णित है। एक बार श्वेत मुनि का एक राक्षसी से युद्ध हुंआ। श्वेत मुनि के द्वारा छोड़े हुए अस्त्र के कारण वह राक्षसी तथा शिलाखण्ड बनी रम्भा दोनो बाण की आंधी मे फंसकर कपि तीर्थ मे जा गिरी। जिससे दोनो का उद्धार हो गया। रम्भा शाप से मुक्त होकर पुन: स्वर्गलोक चली गयी।[189] उर्वशी की भांति रम्भा भी नृत्य एवं अभिनय कला मे दक्ष थी। स्वर्ग मे नृत्य करने वाली अप्सराओ मे इसका उल्लेख प्राप्त है।[190] सूर्य के जन्म के समय इसने नृत्य एवं अभिनय किया था।[191] हरिवंश पुराण मे हल्लीसक नृत्य के प्रसग मे इसका उल्लेख है। इस नृत्य मे कृष्ण वशी बजा रहे है। अप्सराएं अन्य वाद्य बजा रही है। आसारित के बाद अभिन्य के अर्थ तत्व का ज्ञान रखने वाली रम्भा उठी थी जो अभिनय कला के लिए विख्यात थी।[192] इसके अभिनय से कृष्ण तथा बलराम दोनो संतुष्ट हो गए थे। अत: रम्भा एक कुशल नर्तकी एवं अभिनेत्री दिखती है।

पौराणिक विवरणो मे मेनका अप्सरा की गणना ब्रह्मवादिनी वैदिकी अप्सराओ मे की गयी है। जिससे यह अनुमान होता है कि यह वैदिक काल मे भी प्रसिद्ध थी।[193] विश्वामित्र ऋषि के तप को भंग करने के लिए इन्द्र ने मेनका को भेजा था, इसका उल्लेख पुराणो मे भी प्राप्त होता है। ब्रह्म पुराण मे तप का स्थान हरिद्वार बताया गया है। तपोभंग के बाद यह

188- स्कन्द पुराण - 5/1/44

189- स्कन्द पुराण - 3/1/39

190- घृताची, मेनका, रम्भा सहजन्या तिलोत्तमा।
उर्वशी चैव निम्लोचा तथाऽन्यावामनापरा।। -ब्रह्म पुराण 68/60

191- ब्रह्म पुराण 32/100

192- आसारितान्ते च तत: प्रतीता।
रम्भोत्थिता साभिनयार्थतज्ज्ञा।।
तयाभिनीते वरगात्रयष्ट्या।
तुतोष रामश्च जनार्दनश्च।। -हरिवंश पुराण 89/69-70

193- मेनस्य मेनका कन्या ब्राह्मणो ह्रष्टचेतस:।
सर्वाश्च ब्रह्मवादिन्यो महायोगाश्च ता: स्मृता.।।
-वायु पुराण, उत्तरा० - 8/53-54, ब्रह्माण्ड पुराण-3/7/17 हरिवंश पुराण - 36/49-50

वापस चली गयी।[194] भागवत पुराण मे मेनका का सम्बन्ध मित्र से भी बताया गया है।[195] पुराणो मे इसके नर्तनशीलता एवं अभिनय कला के विवरण भरे पड़े है। इनके आधार पर इसका चरित्र एक नृत्य पटु, कला कुशल अप्सरा के रूप मे उभरता है, साथ ही इसका सम्बन्ध कई लोगो से होने के कारण यह वारवनिता के रूप मे भी दृष्टिगोचर होती है।

मिश्रकेशी का नाम भी पुराणो मे बार-बार आया है।[196] यह नृत्य कला मे अत्यन्त निपुण मानी जाती थी। यह वत्सक की पत्नी तथा मेनका की सखी बतायी गयी है, जो हिरण्यकशिपु की सभा मे रहती थी।[197] अत, यह भी पौराणिक काल से पूर्व ही ख्याति प्राप्त कर चुकी अप्सरा प्रतीत होती है।

प्रम्लोचा नामक अप्सरा के नृत्य एवं अभिनय कला का विस्तृत वर्णन पुराणो मे प्राप्त होता है। इसे भी हिरण्यकशिपु की सभा मे रहने वाली बताया गया है।[198] भागवत पुराण मे देवराज इन्द्र ने कण्डु ऋषि की तपस्या भंग करने के लिए इसे भेजा था। इसके एवं कण्डु ऋषि के संसर्ग से मारिषा नामक एक पुत्री उत्पन्न हुई थी, जिसे सोम तथा वृक्षो ने पाल-पोस कर बड़ा किया था।[199] इस कन्या का विवाह प्रचेतसो से हुआ था।[200] मारिषा की कथा विष्णु पुराण मे भी वर्णित है।[201] कण्डु ऋषि की तपस्या भग के प्रसंग मे प्रम्लोचा को वनिताओ मे श्रेष्ठ, रूप एवं यौवन से गर्वित बताया गया है तथा उसके अप्रतिम सौन्दर्य का चित्रण किया गया है।[202] जब प्रम्लोचा ने कहा कि मै ऋषि के कोप का भाजन हो सकती हूँ[203] तो इन्द्र ने कहा कि इस कार्य के लिए दूसरा कोई नही जाएगा क्योकि इस कार्य मे

194- ब्रह्म पुराण - 147/3-5
195- मित्रोऽत्रि: पौरुषेयोऽथ तक्षको मेनका हहा·। -भागवत पुराण - 12/11/35
196- रम्भावा मिश्रकेशी वा उर्वश्य तिलोत्तमा।
घृताची मेनका वापियत्रवा भवतोरूचि·।। -मार्कण्डेय पुराण - 1/33
197- वायु पुराण - 69/5, मत्स्य - 161/75
ब्रह्माण्ड - 3/7/6, भागवत - 9/24/43
198- मत्स्य पुराण - 161/74
199- कण्डो: प्रम्लोचया लब्धा कन्या कमललोचना।
तां चापविद्धा जगृहुर्भूरूहा नृपनन्दना:।। -भागवत पुराण 4/30/13-14
200- भागवत पुराण - 4/30/48-49
201- विष्णु पुराण - 1/15/11-13
202- ब्रह्म पुराण - 178/16-18
203- ब्रह्म पुराण - 178/21-24

तुम्ही कुशल हो। तत्पश्चात् यह अप्सरा आकाश मार्ग से कण्डु के पास गई और सौ वर्षो तक मुनि के साथ रही एवं उनकी तपस्या भंगकर स्वर्गलोक चली गयी।[204] प्रम्लोचा अप्सरा की एक कन्या मालिनी का भी उल्लेख मिलता है, जिसका विवाह रूचि नामक राजा से हुआ, जिससे रौच्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। यही रौच्य मन्वन्तर का अधिपति बना।[205] इस प्रकार प्रम्लोचा अत्यन्त सुन्दर एवं तपस्या भंग करने मे कुशल ज्ञात होती है।

अलंबुषा नामक अप्सरा को सोहल मौनेय देव गन्धर्वो की चौबीस बहनो मे से एक बताया गया है।[206] इन्द्र ने दधीचि से भयाक्रान्त होकर उनके तपस्या को भंग करने के लिए अलंबुषा को भेजा था। अलबुषा और दधीचि से सारस्वत नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भागवत और ब्रह्माण्ड पुराणो से ज्ञात होता है कि इसने दिष्टवंश के बन्धु पुत्र तृण बिन्दु का वरण किया था। इनसे इसे इड़विदा या इलविला नाम की एक कन्या हुई थी।[207] इसकी पुष्टि विष्णु पुराण से भी होती है।[208] स्कन्द पुराण मे एक आख्यान प्राप्त होता है कि एक बार ब्रह्मदेव की सभा मे नृत्य करते समय हवा से इसके वस्त्र उड़ गए, तो वहॉ उपस्थित अष्टवसुओ मे से विधूमा नामक वसु उसे देखकर काम मोहित हो गया। ब्रह्मदेव ने इन दोनो को शाप दिया जिसके परिणामस्वरूप विधूमा मनुष्य योनि के राजकुल मे सहस्रानीक नाम से तथा अलंबुषा को कृतवर्मा राजा के कुल मे मृगवती नाम से जन्म लेना पड़ा। दोनो का विवाह हुआ तथा उदयन नामक बालक पैदा हुआ। उदयन को गद्दी पर बैठाकर सहस्रानीक ने अलंबुषा के साथ चक्र तीर्थ पर स्नान किया एव ब्रह्म शाप से मुक्त होकर पूर्वस्थिति को प्राप्त हो गए।[209] इन विवरणो से इसका एक अव्यवस्थित चरित्र दृष्टिगत होता है।

204- ब्रह्म पुराण - 178/61-69
205- मार्कण्डेय पुराण - 98/1-7
206- ब्रह्माण्ड पुराण - 3/7/6, 4/33/18 वायु पुराण 69/5
207- भागवत पुराण - 9/2/31, ब्रह्माण्ड पुराण 3/7/35-40
208- ततश्च तृणबिन्दुः। तस्याप्येका कन्या इलविला नाम।
ततश्चालम्बुषा नाम वराप्सरास्तृणबिन्दुं भाजे।
तस्यामप्यस्य विशालोजज्ञे यः पुरी विशालां निर्ममे।। -विष्णु पुराण 4/1/47-49
209- स्कन्द पुराण - 3/1/5-15

तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

''मौर्यका ् से लेकर गुप्तोत्तर कालीन साहित्य में अप्सरा का प्रतिबिम्बन''

बौद्ध साहित्य के मूलग्रन्थ प्राय: मौर्य युग के आस-पास निर्मित हुए है तथा कुछ ग्रंथो की रचना मौर्योत्तर युग तथा गुप्त युग मे हुई। इस समय तक अप्सराओ का इतना ज्यादा प्रचार-प्रसार हो चुका था कि बौद्धो तथा जैनियो ने भी इनके स्वरूप का वर्णन अपने ग्रंथो मे किया है। जैन आगम ग्रंथ भी अपने मौलिकता एवं प्रचीनता के लिए प्रसिद्ध है। इनका आरम्भ महावीर के निर्वाण काल से लेकर ईस्वी के आरम्भिक शताब्दी तक परम्परानुगत रूप से पल्लवित होता रहा तथा छठी शताब्दी ईस्वी तक अपने वर्तमान रूप को प्राप्त हुआ।

बौद्ध पाली ग्रंथो से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज मे अनेक देवी देवताओ के साथ-साथ लोक धर्म के अन्तर्गत वनस्पति पूजा प्रचलित थी। वृक्षो को देवता, अप्सरा, नाग, प्रेतात्माओ आदि का निवास स्थान मानकर लोग सतान, यश, धन आदि की प्राप्ति के लिए वृक्षोपासना करते थे।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि अप्सराएं देवकोटि मे परिगणित होने लगी थी। पाली ग्रंथो मे त्रायास्त्रिंश नामक स्वर्ग के निवासी सुधर्मा देवताओं के अधिपति इन्द्र की सुधर्मा सभा का बहुधा उल्लेख मिलता है।[2] एक जातक के निदान कथा मे वर्णन है कि अभिनिष्क्रमण के बाद बोधिसत्व ने अपने केश काट डाले और उन्हें अन्तरिक्ष की ओर फेक दिया था।[3] सक्क (सक्र) ने यह महाचूड़ा चैत्य मे स्थापित किया था। भरहुत के दृश्य मे चूड़ा से सम्बन्धित एक उत्सव का अंकन है, जिसमे सुधम्मा सभा मे एक छत्र युक्त आसन पर चूड़ा स्थित है। साथ के भवन का नाम वैजयन्त प्रासाद है जो वेदिका आवेष्ठित,

1- जातक, 1, पृ० 259, 328, 412, 425, 2, पृ० 440
2- दीघ निकाय - 2/207, दिव्यावदान पृ० 220
3- ललित विस्तर, पृ० 225, महावस्तु 2/165

विभिन्न तोरण युक्त एक त्रितल प्रासाद है।[4] प्रथम तल मे चार सेविकाओ सहित इन्द्र अंकित है, जो निम्नतल मे अंकित चार अप्सराओ के नृत्य को निहार रहे है। अप्सराओ के साथ चार पुरुष तथा तीन स्त्रियां विभिन्न वाद्य यन्त्रो सहित दिखलाई गई है। चूड़ा पर्व का यह वर्णन भरहुत वेदिका का सबसे आकर्षक निरूपण है।

तत्कालीन समय मे अप्सराएं सौन्दर्य और विशिष्ट आकर्षणो की केन्द्र समझी जाती थी। मैत्रकन्यक घूमते हुए क्रमश रमण, सदामत्तक, नन्दन, और ब्रह्मोत्तर नामक नगरो मे जाते है, जहॉ कनक वर्ण विकसित कमल के समान चारू नेत्रो वाली, शब्द करने वाली, विविध मणि मेखला धारण करने के कारण मन्दविलास मातियो वाली, कनक कलशाकार-पृथुपयोधर भार से अवनमित मध्य भागो वाली, कमल-पलाश सदृश भास्वरित अधर किशलयो वाली तथा अनेक आभूषणो से अलकृत अप्सराए उनका स्वागत करती है। वहॉ उन अप्सराओ के सविलास-गमन, लीलायुक्त हास, कटाक्ष और मधुर प्रलापो के साथ क्रीड़ा करते हुए उसे समय के व्यतीत होने का भान ही नही होता।[5] श्रोणकोटि कर्ण, प्रेत नगर मे एक पुरुष को सौन्दर्य शालिनी चार अप्सराओ के साथ क्रीड़ा करते हुए देखता है। इस प्रसंग मे अप्सराओ का सेवन दिव्य सुख माना गया है।[6] इन प्रसंगो मे पुराणो की नर्तकी अब गणिकाओ के रूप मे प्रतिष्ठापित होते हुए ज्ञात होती है।

ललित विस्तर के एक प्रसंग से अप्सराओं के रूप, गुणो एवं कृत्यो पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। प्रसंगानुसार कामदेव ने अपनी कन्याओ को बोधिसत्व की परीक्षा लेने के लिए भेजा था। कामदेव की आज्ञा पाकर अप्सराएं बोधिमंडप के समीप जाकर बत्तीस प्रकार की स्त्री माया का विस्तार किया था। जिनमे कोई अपना आधा शरीर ढकती थी, कोई ऊँचे-ऊँचे ठोस पयोधरो को दिखलाती थी। कोई आधी-आधी हंसी हंसकर दन्त पक्ति दिखलाती थी, कोई बांहे उठाकर अपने शरीर को आकर्षक ढंग से दिखलाती थी, कोई बिम्बा फल

4- मिश्र, रमानाथ, भरहुत, पृ० 24-25
5- दिव्यावदान, मैत्र कन्यकावदान, पृ० 504-506
6- कोटि कर्णावदान - पृ० 5-7

के समान (अपने लाल) होठो को दिखलाती थी। कोई अधखुली आंखो से बोधिसत्व को देखती थी, देखकर झटपट मूद लेती थी। कोई आधे ढंके पयोधरो को दिखलाती थीं, कोई करधनी के साथ वस्त्र खिसकाकर (अपनी) कमर को दिखलाती थी। कोई करधनी के साथ पहने हुए पतले वस्त्र मे से (चमकती हुई) कमर दिखलाती थी। कोई पयोधरो के बीच एक लड़ की माला को दिखलाती थी। कोई सिर कन्धो पर पत्र गुप्त, शुक और सारिकाओ को बिठाकर दिखलाती थी, कोई भलीभांति पहने वस्त्रो को भी बेढंगे ढंग से पहनती थी, कोई कमर मटकाती हुई और करधनी हिलाती डुलाती थी। कोई घबराई जैसी लीला के साथ इधर-उधर चलती फिरती थी, कोई नाचती थी, कोई गाती थी, कोई विलास करती थी और लजाती थी। कोई पवन से हिलते हुए केलो के समान अपने अंगो को कपाती थी, कोई घुंघरू युक्त करधनी और वस्त्र पहने हंसते-हंसते घूम रही थी। कोई (अपने) वस्त्र और आभूषण धरती पर छोड़ती थी, कोई सुगन्धित (चन्दन आदि) लेप लगी (अपनी) बांहो को दिखलाती थीं। कोई सुगन्धित (चन्दन आदि) लेपों की कूँड़ियॉ दिखलाती थी, कोई घूंघट से शरीर को छिपाती थी और क्षण-क्षण मे (उघाड़ कर) दिखाती थी। कोई पहले के हंसी-ठट्ठो की रति की एवं क्रीड़ा की सुरति कराती थी और फिर लजाती हुई सी रुक जाती थी, कोई अपने कुआंरे रूपो को (कोई) संतान न उत्पन्न हुए रूपो को (कोई) मध्यम (वयस के) स्त्री रूपो को दिखलाती थी। कोई काम भाव सहित बोधिसत्व पर खिले फूलो को बरसाती थी। सामने ठहरकर (वे) बोधिसत्व का भीतरी अभिप्राय जानना चाहती थी।[7] इससे ज्ञात होता है कि अप्सराएं अपने विविध कामजन्य चेष्टाओ द्वारा तपस्वियो की तपस्या भंग करने एवं उन्हे आकर्षित करने का प्रयास करती थी।

देवो से सम्बन्धित दृश्यों को बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित घटनाओ से जोड़ा जा सकता है। प्रसेनजित् स्तम्भ के एक मुख पर देवताओ का मुदित समाज दिखलाया गया है।[8] इस समुदाय मे बायी ओर आठ स्त्रियां वाद्य-वृन्द सहित बैठी है। उनके हाथो में वीणा, मृदंग

7- शास्त्री, शान्ति भिक्षु, - ललित विस्तर, पृ० 605-606

8- कनिंघम, भरहुत स्तूप, फलक 15

तथा मजीरा है। दो स्त्रिया करतल ध्वनि करती दिखलाई गयी है। दाहिने भाग मे चार अप्सराएं तलातर द्वारा दो युग्मो मे उत्कीर्ण है। निम्न तल मे अलंवुषा और मिश्रकेशी तथा उनके मध्य स्थित एक नृत्यरत बालक है। अलबुषा के सिर पर पगड़ी है, मिश्रकेशी स्त्री वेश मे है। इसमे गीत और नाट्य के दृश्य मे नकल का आशय भी है। इस दृश्य को कुछ विद्वानो ने बुद्ध के जन्म की घटना से सम्बन्धित किया है। उनका अनुमान है कि नाट्य दृश्य मे स्वयं शुद्धोदन अपने नवजात बालक के साथ पगड़ी धारिणी अलम्बुषा और बालक के माध्यम से अंकित किए गए है।[9] इस दृश्य मे ऊपर की ओर सुभद्रा तथा पद्मावती अंकित है। इस उद्धरण से ज्ञात होता है कि बौद्ध कालीन समाज मे इन्द्र की सभा मे रहने वाली अभिनय प्रिय अप्सराओ का चित्रण भी प्रचलित हो गया था।

प्राचीन ग्रंथो की समीक्षा से ऐसा प्रतीत होता है कि बौद्ध धर्म के अभ्युदय होने पर नृत्य कला मे निपुण नारियो के गणो का अन्तर्भाव गणिका संघों मे हो गया। जो अप्सरा गणो का मानवीकरण प्रतीत होता है। विनय पिटक से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज मे गणिकाओ को समुचित सम्मान प्राप्त था। वे अभिजात्य वर्ग की सौन्दर्योपभोग लिप्सा की तुष्टि का साधन मात्र न थी बल्कि उन्होने गायन, वादन और नृत्य कला का यथोचित सरक्षण भी किया था। गणिकाओ के माध्यम से जनमानस का सौन्दर्यानुराग प्रबुद्ध एवं परितुष्ट होता था। वे महोत्सवो पर राजप्रासाद मे लोकरंजनार्थ संगीत-नृत्य के हृदय-ग्राही प्रदर्शन करती थी। भगवान बुद्ध द्वारा अम्बपाली का आतिथ्य स्वीकार करने तथा उसके द्वारा अम्बपाली वन का भिक्षुसघ को दान करने की घटनाओं से प्रतीत होता है कि तत्कालीन समाज गणिकाओ को हेयदृष्टि से नही देखता था।[10] बुद्ध के दर्शन के लिए अम्बपाली ने अनेक सुशोभित रथों को लेकर जिस ठाटबाट से कोटिग्राम के लिए प्रस्थान किया, उससे ज्ञात होता है कि उसका जीवन वैभवपूर्ण था।[11] गणिका से उत्पन्न पुत्र को भी समाज मे सम्मानित स्थान प्राप्त था। विख्यात वैद्यराज जीवक राजगृह की गणिका सालवती के गर्भ

9- लयूडर्स एच० - कार्पुस इन्सक्रिप्शनम इण्डिकेरम, जिल्द 2 भाग-2 पृ० 102
10- बौद्ध पिटक महावग्ग - 6/30/2, 6/30/5
11- महावग्ग - 6/30/1

से उत्पन्न पुत्र था।[12]

वैदिक कालीन स्वच्छन्द वारवनिताएं, जो परवर्ती ग्रथो मे अप्सरा के नाम से स्थापित हुई थी, बौद्धकाल मे आकर जब उनके गण या समूहो के संघ बनने लगे तो वे गणिका के नाम से जानी जाने लगी। ये समाज मे पूर्णत व्यवस्थित एव सम्मानित हो गयी। यद्यपि ये वाराङ्गनाएं ही थी तथापि साधारण वेश्याओ से अधिक सम्मानित और गुणवान होती थी। वेश्याओ मे जो सर्वाङ्गसुन्दरी, गुणवती, शीलवती हुआ करती थी, उसी को गणिका पद प्रदान किया जाता था। राजा लोग भी उसका उठकर सम्मान करते थे। कुछ गणिकाओ के परिवार मे पांच सौ वण्णदासियो का वर्णन प्राप्त होता है।[13] गणिकाओ का मुहल्ला नगर मे अलग होता था। महावस्तु मे भी 'गणिकावीथि' का उल्लेख प्राप्त होता है।[14] गणिकाओ के भवनो को गणिका घर के नाम से जाना जाता है।[15] अत· कहा जा सकता है कि गणिकाएं बौद्ध काल की प्रसिद्ध वारवनिताएं थी, जो सम्मानवर्पूक अपना व्यवसाय करती थी।

जातक ग्रंथो से ज्ञात होता है कि गणिकाओ को अपने व्यवसाय से जो आय प्राप्त होती थी, उससे वे विलासमय जीवन व्यतीत करती थी। सामा[16], सुलभा[17], काली[18] आदि गणिकाएं प्रति रात्रि एक सहस्र कार्षापण अर्जित करती थी। वस्त्र, अंगराग तथा माला मे ही काली का दैनिक व्यय पांच सौ कार्षापण तक पहुंच जाता था।[19] सालवती को प्रति रात्रि सौ कार्षापण मिलते थे जबकि अम्बपाली को केवल पचास कार्षापण ही मिलते थे।[20] इसका कारण राजगृह और वैशाली के जीवन स्तर मे विविधता को माना जा सकता है।

गणिकाओं के आचरण मे भी सामान्य नारी के महान एवं क्षुद्र गुण दिखाई पड़ते है।

12- महावग्ग - 8/1/4
13- जातक, 3, पृ० 435
14- जातक, 2, पृ० 128
15- जातक, 3, पृ० 61, 4, पृ० 249
16- कणेश्वर जातक, 318
17- सुलसा जातक, 419
18- तक्कारीम जातक, 481
19- जातक, 4, पृ० 248-49
20- महावग्ग, 8/1/3 महावग्ग, 8/1/1

जातको मे सद्गुण सम्पन्न एवं दुराचारिणी दोनो प्रकार की गणिकाओ का साक्ष्य प्राप्त होता है। काली नामक गणिका प्रबल आत्मसम्मान वाली थी एवं सामाजिक मान्यताओ के निर्वाह की अपूर्व क्षमता रखती थी।[21] सुलसा नामक गणिका अति बुद्धिमती तथा साहसी नारी मानी जाती थी। उसने एक धूर्त दस्यु को पर्वत शिखर से नीचे ढकेल दिया था।[22] एक गणिका, जो एक युवक से अनुराग रखती थी, जब युवक उसे एक सहस्त्र कार्षापण देकर कही चला गया तो वह गणिका उसकी तीन वर्षो तक प्रतीक्षा करती रही। अन्त मे वह निर्धन हो गयी, लेकिन किसी अन्य पुरुष से ताम्बूल तक ग्रहण नही किया।[23] उपर्युक्त प्रसंग गणिकाओ को कोमल भावनामयी नारी के रूप मे चित्रित किया गया है।

जातको मे जिस प्रकार गुणवती गणिकाओ का चित्रण प्राप्त होता है, वैसे ही अनेक विश्वासघाती एवं क्षुद्र विचारशीला गणिकाएं भी दृष्टिगोचर होती है। सामा नामक गणिका एक दस्यु पर आसक्त हो गयी, उस दस्यु को राजपुरुष बाधकर ले जा रहे थे। उसे प्राप्त करने के उद्देश्य से, उस दस्यु के बदले मे वैसे युवक को बन्दी बना दिया, जो उसे प्रतिदिन सहस्त्र कार्षापण दिया करता था। उसके इस विश्वासघात के कारण दस्यु तो बच गया पर उस नवयुवक की जान जाती रही।[24] एक श्रेष्ठि कुमार अपनी प्रेमिका गणिका को प्रति रात्रि सहस्त्र कार्षापण दिया करता था एक रात्रि वह खाली हाथ पंहुचा अत· गणिक ने अपनी दासियो को उसे बलपूर्वक बाहर निकालने का आदेश दे डाला।[25] अत: इन विवरणो से स्पष्ट है कि गणिकाएं छल प्रपच तथा विश्वासघात करने मे निपुण थी।

जैनो के ग्रंथ विपाकसूत्र से भी गणिकाओ के कला ज्ञान तथा उनके गुणो का ज्ञान होता है। इस ग्रन्थ मे वणिज ग्राम की कामध्वज नामक गणिका के कला ज्ञान की सूची दी गयी है। बताया गया है कि वह बहत्तर कलाओ को जानने वाली, चौसठ वैशिक कलाओ

21- जातक, 4, पृ० 248-49
22- जातक, 3, पृ० 435-38
23- जातक, 2, पृ० 380
24- जातक, 3, पृ० 59-60
25- जातक, 3, पृ० 475-76

मे निपुण, रतिशास्त्र से सम्बद्ध, क्रम से उन्तीस और इक्कीस कलाओ की पारदर्शी, नागरिको को प्रसन्न करने की बत्तीस विधाओ मे निपुण नवो अंगो द्वारा कामाग्नि को धधकाने की कला मे चतुर, अट्ठारह भाषाओ मे सुपडित तथा नृत्य-गीत-अभिनय कला मे प्रवीण थी।[26]

गणिकाओ का समाज मे पर्याप्त सम्मान था, जिसका ज्ञान ललित विस्तर मे शुद्धोदन द्वारा अपने पुत्र सिद्धार्थ के लिए ऐसी पत्नी खोजे जाने की चर्चा प्राप्त होती है, जिससे गणिका जैसी शास्त्रज्ञ और कलामयी होने की अपेक्षा की गयी थी।[27] इसी ग्रंथ मे 'शास्त्र विधिकुशला गणिका यथैव' कहकर राजकुमारी को गणिका के समान शास्त्रज्ञा बताया गया है। अर्थात् गणिकाए कामकला के अतिरिक्त शास्त्रज्ञा भी होती थी। बौद्ध पिटक के अनुसार नगर की शोभा मे गणिकाओ ने चार चांद लगा दिये थे। गणिका के अभाव को किसी भी प्रमुख नगर की कमी के रूप मे जाना जाता था। क्योकि राजगृह के नागरिको ने वैशाली का अवलोकन किया। वहॉ के नागरिको को सभी प्रकार से सुख एव ऐश्वर्य से सम्पन्न पाया। राजगृह वापस आकर उन्होने मगधराज श्रेणिय विम्बिसार से निवेदन किया कि वैशाली नगर समृद्ध एवं ऐश्वर्य सम्पन्न है, वहॉ अम्बपाली नामक गणिका है जो परम सुन्दरी, रमणीया, नयनाभिरामा, परम सुन्दर वर्णा, गायन वादन नृत्य विशारदा तथा अभिलाषम्जन बहुदर्शनीया है। महाराज प्रसन्न हो, हम भी एक गणिका का अभिषेक करें।[28] उस समय राजगृह मे सालवती नामक एक नवयुवती थी, जो परमसुन्दरी, रमणीया, दर्शनीया तथा परम सुन्दर वर्णा थी। उसे ही गणिका पद के उपयुक्त पाकर उसका गणिकाभिषेक सम्पन्न किया गया था।[29] जिस प्रकार सालवती को गणिका पद पर प्रतिष्ठापित किया गया, उससे यह सर्वथा अनुमानित होता है कि गणिका पद को प्राप्त करना किसी नारी के लिए प्रतिष्ठा सूचक था, जिस पर वह गर्व करती थी।

26- विपाक सूत्र, 1/2
27- ललित विस्तर, 12/139
28- बौद्ध पिटक, महावग्ग - 8/1/2
29- महावग्ग 8/1/3

जैनियो ने चौबीस पुराणो की रचना की, जिनमे चौबीस तीर्थकर महात्माओ की कथाएं वर्णित है। जैन सम्प्रदायो मे गन्धर्व, अप्सरा तथा किन्नरो का वही स्थान है, जो वैदिक साहित्य मे उपलब्ध होता है। तत्वार्थसूत्र नामक जैन ग्रन्थ मे देवताओ का विभाजन उनकी स्थिति के अनुसार चतुर्विध बताया गया है–भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क तथा वैमानिक। व्यन्तर स्थान मे गन्धर्व, अप्सरा, किन्नर आदि योनियो का निवास होता है।[30]

आदि पुराणो मे जैनो के आदि तीर्थकर ऋषभदेव की कथाएं वर्णित है, जिनमे अप्सराओ का उल्लेख प्राप्त होता है। तीर्थकर ऋषभ देव के जन्म के प्रसंग मे कहा गया है कि वे इन्द्र के अवतार थे। इन्द्र के दरबार मे अनेक देवियां रहती थी। इन्द्र की एक-एक देवी की तीन-तीन सभाएं थी। उनमे से पहली सभा मे पच्चीस अप्सराएं थी, दूसरी सभा मे पचास अप्सराएं तथा तीसरी सभा मे सौ अप्सराएं थी।[31] अपने इस परिवार के साथ अच्युत स्वर्ग मे उत्पन्न हुई लक्ष्मी का उपयोग करने वाले उस अच्युतेन्द्र का आवास अत्यन्त मनोरम था। एक अन्य प्रसंग मे गन्धर्वो के साथ अप्सराओ के नृत्य का उल्लेख प्राप्त होता है। इस प्रसंग मे अप्सराओ को देव नर्तकी कहा गया है।[32] यहॉ अप्सराओ का स्वरूप ब्राह्मण परम्परा मे प्राप्त उसके स्वरूप से मिलता जुलता प्रतीत होता है।

जैन प्राकृत ग्रन्थो मे भी अप्सराओ का निर्देश नर्तकियो के रूप मे प्राप्त होता है। अनुयोग द्वार तथा नन्दिसुत्तो मे वेद, पुराण, शिक्षादि, वेशिय तथा गान्धर्व आदि कलाओ को लौकिक ज्ञान के अन्तर्गत माना गया है।[33] इसमे स्वर, गीत, वाद्य, मूर्च्छना आदि गान्धर्व

30- तत्वार्थ सूत्र 4/11 (व्यन्तर. किन्नर किं पुरूष महोर गन्धर्व .. . . पिशाचा.।)

31- एकैकस्याश्च देव्या: स्यादप्सर. परिषत्तयम् ।
पन्चवर्गश्च पन्चाशच्छतं चैव यथा क्रमम् ।।
आदि पुराण, 1/10/200

32- प्राययुजत् स गन्धर्व नृत्यमाप्सरसं तदा।
तन्नृत्यं सुरनारीणां मनोऽस्यारञ्जयत् प्रभो: ।।
ततो नीलान्जनानाम ललिता सुरनर्तकी ।
रसभावलयोयेतं नृत्यन्ती सपरिक्रमम् ।।
आदि पुराण, 1/17/4-7

33- अनुयोग, 40, नन्दिसुत्त 42, पृ० 193, द्रष्टव्य - कपाड़िया हिस्ट्री आफ केननिकल लिटरेचर आफ जैन्स, पृ० 224

के विषयो का सूत्रबद्ध विवरण है। जैन परम्परानुसार सगीत अथवा गान्धर्व उन विषयो मे से है जिनका प्रवर्तन महात्मा महावीर के द्वारा हुआ है तथा इन विषयो का सैद्धान्तिक विवेचन प्राचीन पूर्व ग्रन्थो मे निहित है। जैन सिद्धान्त ग्रन्थो मे प्राचीन ललित-कलाओ के अन्तर्गत बहत्तर या बासठ कलाओ की गणना पायी जाती है।[34] इनका अध्ययन क्षत्रियो तथा महिलाओ के द्वारा किया जाता था। इससे ज्ञात होता है कि यह परम्परा बौद्धो की तरह जैनियो मे भी प्रचलित थी।

इस काल मे भी संगीत कला को राज्याश्रय प्राप्त था। संगीत के विशेषज्ञ व्यक्तियो को राज्यसभा मे नियुक्त किया जाता था। संगीत कुशल गणिकाओ को राज्यसभा मे सम्मानित किया जाता था। चम्पा नगर की गणिका संगीत तथा वैशिकी कलाओ मे पारंगत बतायी गई है, जिसे राजकोष से पर्याप्त वेतन प्रदान करने का निर्देश प्राप्त हुआ था।[35] गणिकाओ के अतिरिक्त नृत्य का व्यवसाय करने वाला निट्टयाव अर्थात् नर्तकियो के वर्ग का उल्लेख भी मिलता है।[36] इन व्यावसायिक वर्गो मे गन्धाव्विय अर्थात् गन्धर्व, नड अर्थात् नट, नट्टग अर्थात् नर्तक आदि मुख्य थे।[37] उत्तराध्ययन टीका मे वाराणसी के दो मातंग पुत्रो की कथा मिलती है, जो गायक तथा नर्तको की टोलियां बनाकर सारे नगर मे घूमते-फिरते थे। निकृष्ट वर्ण का यह व्यवहार सहन न कर उच्च वर्गीय लोगो ने उनको मारमार कर नगर से निष्कासित कर दिया था।[38] निशीद्य चूर्णी मे कुछ, विभिन्न ऋतुओं मे सामूहिक रूप से मनाए जाने वाले उत्सवो का वर्णन मिलता है।[39] इनमे से इन्दमह अर्थात् इन्द्रमह, खण्डमह, जक्खमह अर्थात् यक्षमह, तथा भूतमह को महामह कहा जाता था। उत्तराध्ययन टीका के अनुसार इन्द्रमह निरन्तर एक सप्ताह तक चलता था। इसके अन्तर्गत

34- ठाणाग - 9/678, नायाधम्म - 1 - पृ० 21, समवायाग, पृ० 77, ओवाइया - 40, रायापसेणीय-211, जंब्बुद्दिव-2, पृ० 138
35- नायाधम्म, 3 पृ० 59
36- उत्तराध्ययन सूत्त टीका, 9, पृ० 136
37- ओवाइया, पृ० 2
38- उत्तराध्ययन टीका, 13 पृ० 185
39- निशीथ चूर्णी, 19 पृ० 1174

नतर्क, नर्तकियां तथा सामान्य जनता भी नृत्य गीत आदि मे सहयोग देती थी।[40] नायाधम्मकहा मे एक कथा वर्णित है जिसमे मेघकुमार नामक धनाढ्य व्यक्ति को आठ नाडैल्ला अर्थात् नर्तकियो तथा बत्तीस नटो वाली नाट्य मण्डलिया दहेज के रूप मे दी गयी थी।[41] इससे ज्ञात होता है कि विवाहो मे प्रीतिदान के रूप मे नर्तकियो को प्रदान करने की परम्परा इस काल मे प्रचलित थी। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि जैन परम्परा मे अप्सराओ का वही स्वरूप था जो बौद्ध परम्परा मे था।

पाणिनी के अष्टाध्यायी मे अप्सराओ का प्रतिबिम्बन प्राप्त होता है। श्री युधिष्ठिर मीमांसक ने यास्क, शौनक, पाणिनी, पिंगल और कौत्स को समकालीन स्वीकार किया है।[42] वासुदेव शरण अग्रवाल ने पाणिनी को पांचवी शताब्दी ईसा पूर्व अर्थात् 480-410 ई०पू० मे रखा है।[43] पाणिनी की अष्टाध्यायी के भाष्यकार पतजलि मुनि ने अपने महाभाष्य मे अप्सराओ का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार गीत-नृत्य मे निपुण नारियो का एक वर्ग अप्सरा कहलाता था। उर्वशी इस कला वर्ग मे सर्वाधिक सुन्दरी थी।[44]

पाणिनी के पश्चात् होने वाले कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र मे नर्तकियों, वेश्याओ तथा गणिकाओ का उल्लेख तो किया है[45] परन्तु अप्सराओ का उल्लेख नही किया है। इनका विशद् विवेचन इसी अध्याय के उत्तरार्द्ध मे किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कौटिल्य के समय मे भी अप्सराओ से सम्बन्धित मान्यताएं प्रचलित रही होगी परन्तु चूंकि अर्थशास्त्र मे सभी विषयो का विवेचन भौतिक लाभ हानि को दृष्टिगत रखते हुए किया गया है, इसलिए अप्सरा जैसी आधिभौतिक स्त्रियो का उल्लेख नही किया गया होगा।

भारत में प्राचीन काल से ही नाट्य, नृत्य तथा गान का प्रचार-प्रसार था, जिसमे अप्सराएं अत्यन्त निपुण थी। भरत के नाट्य शास्त्र मे प्राचीन नृत्य कला का विस्तृत

40- जे०सी० जैन - लाइफ इन एशियन्ट इण्डिया एज डिपिक्टेड इन जैन कैनन्स, पृ० 216
41- नायाधम्म टीका, 1 पृ० 42
42- युधिष्ठिर मीमासक - संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास, खण्ड 1, पृ० 139-40
43- वासुदेव शरण अग्रवाल - इण्डिया ऐज नोन टू पाणिनी, पृ० 474-75
44- उर्वशी पै सर्विण्यप्सरसाम्, 1 - महाभाष्य 5/2/95
45- कौटिल्य - अर्थशास्त्र 2/27

विवरण प्राप्त होता है। नाट्यवेद के उपादानो मे अभिनय एक अग हैं, जिसका सम्बन्ध नाटक तथा नृत्य दोनो से है। नाट्यशास्त्र मे सुकुमार प्रयोग तथा गीत गान के लिए योग्य स्त्रियो का सापेक्ष पूर्वक चयन आवश्यक माना गया है।[46] नर्तकी के लिए यह आवश्यक है कि वह चौसठ कलाओ मे निपुण हो, जिसके अन्तर्गत गीत वाद्य, नृत्य तथा अभिनय का समावेश स्वत: सिद्ध है।[47] स्त्रियो द्वारा प्रयुक्त ललित गीताभिनय के लिए 'कौशिकी' वृत्ति संज्ञा ज्ञात होती है।[48] अप्सराएं इस वृत्ति मे अत्यन्त निपुण वर्णित की गयी है। स्वयं भरत द्वारा अभिनीत लक्ष्मी स्वयंवर मे उर्वशी, मेनका, रम्भा, तिलोत्तमा आदि अप्सराओ ने सफल अभिनय किया था। इन अप्सराओ को नाट्य की सफलता के लिए ब्रह्मा ने भेजा था।[49] नाट्याभिनय के लिए भरत ने त्रिविध प्रकृति निर्दिष्ट किया है–अनुरूप, विरूप और रूपानुसारिणी।[50] प्रथम के अन्तर्गत स्त्री तथा पुरुष क्रमश. उन्ही भूमिकाओ का अभिनय करते है, द्वितीय मे बाल या वृद्ध पुरुष क्रमश. विपरीत भूमिकाओ को ग्रहण करते है तथा तृतीय के अन्तर्गत पुरुष, स्त्री भूमिका का तथा स्त्री, पुरुष भूमिका का अभिनय करती है।[51] अत: भरत के अनुसार सुकुमार भूमिकाओ का अभिनय तथा गीत गान स्त्रियो के द्वारा ही क्रिया जा सकता है।[52] मनुस्मृति के समय तक अप्सराओ की गणना यक्ष, राक्षस, पिशाचो के साथ विधाता की आदिम सृष्टि मे की जाती थी, किन्तु इनके पृथक्‌गणों का उल्लेख प्राप्त होता है।[53]

कालिदास के महाकाव्यों तथा नाटको मे अप्सराओ का विवरण, पौराणिक विवरणो

46- नाट्य शास्त्र 35/29-32
47- नाट्य शास्त्र 34/42-45
48- नाट्य शास्त्र 32/47
49- भूमिकं सुकुमारं च नित्यं स्त्रीभिरनुष्ठितम् ।
तथा रम्भोर्वशी प्रभृतिषु स्वर्गे नाट्यं प्रतिष्ठितम् ॥
नाट्य शास्त्र, 35/22
50- नाट्य शास्त्र 35/15
51- नाट्य शास्त्र 35/17-20
52- नाट्य शास्त्र 35/22
53- यक्षरक्ष: पिशाचांश्च गन्धर्वाप्सरसोऽसुरान् ।
नागान्सर्पान्सुर्णांश्च पितृणां च पृथग्गणान् ॥ मनुस्मृति, 1/37

से मिलता जुलता प्रतीत होता है। उनके नाटक 'विक्रमोर्वशीयम्' की मुख्य पात्रा उर्वशी है। इस नाटक मे उर्वशी के रूप एवं गुण का वर्णन प्राप्त होता है। भरत द्वारा स्वर्ग मे प्रायोजित 'लक्ष्मी स्वयंवर' नाटक का उल्लेख प्राप्त होता है।[54] इस नाटक की नायिका उर्वशी, भरत प्रणीत नाट्य के प्रयोग मे अत्यन्त कुशल बतलायी गयी है। विन्टरनित्ज का विचार है कि इस नाटक का एक नाम उर्वशी नाटक भी है। नायिका उर्वशी के नाम पर प्राय: इस नाटक की अभिधा दी जाती है। इसकी कथा प्राचीन कालीन राजा पुरुरवस् तथा अप्सरा उर्वशी की कथा है। यह कथा ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण तथा पुराणो मे भी प्राप्य है। विक्रम और उर्वशी की वह पुरानी कथा पुन: इस रूप मे दुहराई गयी है।[55]

पूरी घटना शाप के कारण घटित होती है। शाप का कारण अत्यधिक स्नेह है। इन्द्र की दया से शाप की उग्रता तो कम हो जाती है तथा यह निर्देश प्राप्त होता है कि उर्वशी पृथ्वी पर जाकर, पुरुरवस के साथ तब तक रहेगी, जब तक कि वह उससे उत्पन्न पुत्र का मुख न देख सके।[56] शाप के परिणामस्वरूप प्रथम तीन अंको मे पुरुरवस् अप्सरा के प्रेम भाजन बन जाते है। उर्वशी ईर्ष्यासंभूत क्रोध के कारण अपनी इन्द्रियो को नियन्त्रित रखने मे असमर्थ हो जाती है और वह भूल जाती है कि कुमार के लतामण्डप मे किसी स्त्री का प्रवेश वर्जित है। वह लतामण्डप मे सीधे प्रवेश करती है और तत्क्षण तरूलता बनकर राजा की दृष्टि से ओझल हो जाती है। प्रेयसी वियोग मे राजा पागल होकर इधर-उधर, जंगलो पहाड़ो मे भटकने लगते है। अन्तत: राजा तथा उर्वशी से उत्पन्न पुत्र, राजा के समक्ष उपस्थित किया जाता है तथा उस पुत्र के विषय मे राजा को बताया जाता है, साथ ही राजा को इन्द्र के द्वारा उर्वशी को दिए गए निर्देश को भी बताया जाता है, तो राजा अपने पुत्र

54- मुनिनाभरतेन य: प्रयोगो भवतीष्वष्टरसाश्रयो नियुक्त: ।
ललिताभिनयं तमद्यमतामिरूतां द्रष्टुमना: स लोकपाल ॥
विक्रमोर्वशीयम्, 2/17

55- विन्टरनित्ज - हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर, भाग - 3 खण्ड-1, पृ० 288-89

56- एता: सुतनु मुखं ते सख्य: पश्यन्ति हेमकूट गता: ।
उत्सुक नयना लोकाश्चन्द्र मिवोपालवान्मुक्तम् ॥
विक्रमोर्वशीयम्, 1/12

को देखते हुए आनन्द विभोर उठते है। परन्तु इस आह्लाद का तिरोभाव भी तुरन्त हो जाता है, क्योकि उर्वशी उनका परित्याग कर देती है।[57] इस नाटक के अन्तर्गत देव, गन्धर्व और अप्सराओ का उल्लेख प्राप्त होता है। उर्वशी के साथ चित्रलेखा, सहजन्या, रम्भा तथा मेनका आदि अप्सराओ को सहकर्मिणी के रूप मे चित्रित किया गया है।

कालिदास का अन्य प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' है। ऐसा प्रतीत होता है इसका कथानक महाभारत तथा पुराणो से लिया गया है।[58] इस नाटक की नायिका शकुन्तला मेनका अप्सरा की पुत्री है। इस नाटक के अनुसार पौरव दुष्यन्त एकबार शिकार के लिए जंगल में निकलते है। वहाँ कण्व ऋषि के आश्रम पर शकुन्तला को देखकर प्रेमपाश मे बंध जाते है। कण्व के आश्रम मे ही उनकी अनुपस्थिति मे दुष्यन्त और शकुन्तला का गान्धर्व विधि से समागम होता है। दुष्यन्त उसे पहचान के रूप मे अंगूठी देकर वापस हस्तिनापुर लौट आते है। कुछ समय पश्चात् शकुन्तला को एक पुत्र प्राप्त होता है, जिसका नाम करण भरत होता है। कण्व ऋषि ने उसे दुष्यन्त के पास भेजा, परन्तु शाप के कारण दुष्यन्त शकुन्तला को पहचानने से मना कर देते है। अन्त मे आकाशवाणी होती है, जिससे दुष्यन्त शकुन्तला और उसके पुत्र को स्वीकार करते है। यही भरत बाद मे हन्तिनापुर के चक्रवर्ती सम्राट बनते हैं। ऐसी मान्यता है कि इन्ही के नाम पर हमारे देश का नाम भारत पड़ा।

कालिदास के वर्णित प्रसंगो से ज्ञात होता है कि वे पुराणो मे वर्णित अप्सरा विषयक कार्यो एवं व्यवसायो से पूर्णतया परिचित थे। उनके अनुसार अप्सराएं स्वर्ग मे रहने वाली परियां है, जो इन्द्र के दरबार मे नृत्य करती हैं।[59] ऐसा लगता है वे नर-नारायण द्वारा उत्पन्न उर्वशी के आख्यान से परिचित थे।[60] अप्सराएं मैनाक तथा हेमकूट पर्वतो पर विहार करती

57- सर्वाङ्गीण: स्पर्श: सुतस्य किलतेन मामुपगतेन ।
आह्लादयस्त्व तावच्चन्द्रकरश्चन्द्रकान्त मिव ॥ विक्रमोर्वशीयम्, 5/11

58- सीताराम चतुर्वेदी - कालिदास ग्रन्थावली, भूमिका पृ० 5-6

59- मत्तानां कुसुमरसेन षट्पदानां शब्दोऽयं पर भृतनाद स्वधीर: ।
आकाशे सुरगणसेविते समन्तात किं नार्य: कलन्मधुराक्षरं- प्रगीता: ॥

60- उसद्भवा नरसरवस्य मुने: सुरस्त्री।
कैलासनाथमुपसत्य निवर्तमाना।
बन्दीकृता विविध शत्रु भिरधमार्गें।
क्रन्दत्यत: करूणमप्सरसां गणोऽयम् ॥ विक्रमोर्वशीयम् 5/4

है तथा वे अभिजात्य वर्ग के लोगो तथा उनकी स्त्रियां की सेवा मे नृत्यगान कर सदैव मनोरजन करती है।[61]

कालिदास के अनुसार शकुन्तला मेनका अप्सरा की पुत्री थी।[62] अप्सराए किसी भी तपस्वी की तपस्या भंग करने के लिए इन्द्र द्वारा पृथ्वी पर भेजी जाती है।[63] इनका प्रणय किसी व्यक्ति विशेष के साथ न होकर सामूहिक होता है। रणभूमि मे योद्धाओ के वीरगति प्राप्त करने पर उन्हे स्वर्ग की प्राप्ति होती है, जहाँ अप्सराए उनका अभिनन्दन करती हैं। ऐसी पौराणिक मान्यताओ का निर्देश भी कालिदास की कृतियो मे प्राप्त होता है।[64]

वाराह मिहिर ने अपने ग्रंथ वृहत्संहिता मे अप्सराओ की गणना दिव्य स्त्रियो मे किया हैं।[65] वे अप्सराओ को भी यज्ञो मे पूजित होने का वर्णन करते है।[66] वे वृद्ध गर्ग के वचन का उल्लेख करते हुए पुरोहित द्वारा नाग, यक्ष, देव, पितर, गन्धर्व, अप्सरा, मुनि और

61- एता सुतनु मुख ते सख्य· पश्चन्ति हेमकूट गता।, विक्रमोर्वशीयम्, 1/12

62- मेनका सम्बन्धेन शरीरभूता मे शकुन्तला।
तथा च द्रहितृनिमित्तमादिष्ट पूर्वास्मि।।
अभिज्ञान शाकुन्तलम, 6, श्लोक 2 के पूर्व सानुमती का वचन

63- अनुसूया - श्रणोत्वार्य. गौतमी तीरे पुराकिल तस्य राजर्षे·
उग्रे तपसि वर्तमानस्य किमपि जातशङ्कैर्देवैर मेनका
नामप्सरा: प्रेषिता नियम विघ्नकारिणी।
अभिज्ञान शाकुन्तलम् 1, श्लोक 23 का पूर्ववर्ती परिच्छेद

64- अन्योन्यं रथिनौ कश्चिद् गत प्राणौ दिवगतौ।
एक अप्सरसं प्राप्य युयंध्यते वरायुधौ ।। कुमार संभव, 16/48-49
अक्षिप्य अभिदिवं नीत: पत्य: करिभिकारिणी।, कुमार सभव, 16/36
कश्चिद् द्विषत्खडगहृतोत्तमाडग: सद्यो विमानप्रभुतामुवेत्य।
वामाडगससक्त सुराडगन· स्वं नृत्यत्कबन्ध समरे ददर्श ।।
अन्योन्यसुतोन्मथनादभूतां तावेव सूतौ रथिनौ च कौचित्।
व्यश्वौ गदाव्यायत सं प्रहारौ भग्नायुधौ बाहुमिर्दनिष्ठौ ।।
परस्परेण क्षतयो: प्रहर्त्रोरूत्क्रान्तवाय्वो· समकालमेव।
अमर्त्यभवेऽपि कयोश्चिदासीदेकाप्सर· प्रार्थितयोर्विवाद: ।।, रघुवश, 7/51-53

65- दिव्यस्त्रीभूतन्धर्व विमानाद्भुतदर्शनम्।
ग्रहनक्षत्रतराणां दर्शनं च दिवाडम्बरे ।।, वृहत्संहिता, उत्पाताध्याय, 90

66- हरार्कवैवस्वतशक्रसोमैर्धनेशवैश्वानर पाशमृदिभ.।
महर्षिसङ्घै: सदिगप्सरोभि: शुक्राङिगर: स्कन्दमरूद्गणेश्च ।।, वृहत्सहिता, इन्द्रध्वजसम्पदध्याय, 52

सिद्धो की स्थापना का विवरण देते है।[67] सुगन्ध, द्रव्य, माला और सुन्दर गन्धों से गन्धर्व और अप्सराओ की पूजा करने के बाद[68] देवपत्नी, देवमाता तथा अप्सरागणो के मन्त्रो द्वारा राजा के अभिषेक का वर्णन प्रस्तुत करते है।[69] इस प्रकार वाराह मिहिर ने अप्सराओ के पूर्णत दैवीकरण की विचारधारा को प्रस्तुत किया है। अत· यह कहा जा सकता है कि देवलोक की वाराडगनाएं होते हुए भी अप्सराएं गुप्तकाल तक देवों मे परिगणित की जाने लगी थी। धार्मिक कृत्यो मे इनका स्थान सुनिश्चित कर, इनका आह्वान किया जाने लगा था।

मौर्य काल से लेकर गुप्तोत्तर कालीन सस्कृत साहित्यो के सूक्ष्म विवेचनोपरान्त यह अवधारणा स्पष्ट होती है कि अप्सराओ का दो स्वरूप था। एक अर्द्धदैवीय स्वरूप तथा दूसरा गणिका स्वरूप। वे सदा स्वच्छन्द विचरण करती हुई प्राप्त होती है तथा सर्वसाधारण के लिए सुलभ बतायी गयी है। वे गायन,वादन एव नृत्य मे कुशल बतायी गयी है। वे लोगो को अपने मनमोहक रूप एवं सौन्दर्य के द्वारा प्रेम-पाश मे आसानी से बांध लेती थी। अर्थात् कौशिकी-वृत्ति का प्रयोग सफलता पूर्वक करती थी। इनका प्रणय व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनो प्रकार का होता था। इनकी सन्तानो को समाज मे यथेष्ट स्थान प्राप्त होता था। कवियो ने प्राय: इनके कामुक स्वरूपो का चित्रण करते हुए रसिक वर्णन ही किया है। यह स्वरूप अप्सरा का मानवीकरण ज्ञात होता है जिसका इस काल मे गणिकाओ, रूपाजीवा एवं देवदासियो ने प्रतिनिधित्व किया है।

ब्रह्मपुराण के चक्रतीर्थ संगम के प्रसंग मे शक्र, मेनका अप्सरा को यम की तपस्या

67- पुरोहितो यथास्थानं नागान् यक्षान् सुरान् पितृन ।
गन्धर्वाप्सरसश्चैव मुनीन् सिद्धांश्च विन्यसेत ॥
वृहत्संहिता, पुष्यस्नानाध्याय, 25

68- गन्धर्वानप्सरसो गन्धैर्माल्यैश्च सुसुगन्धै ।
वृहत्संहिता, पुण्यस्नानाध्याय 32

69- देव पत्न्यश्च या नोक्तादेवमातर एव च।
सर्वास्त्वामभिषिन्चन्तु दिव्याश्चाप्सरसां गणा. ॥
वृहत्संहिता, पुष्यस्नानाध्याय, श्लोक 58

भग करने का निर्देश देते है। इस प्रसग मे मेनका के लिए गणिका शब्द का प्रयोग मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि अप्सरागण तथा गणिकाओ मे कोई विशेष अन्तर नही था।[80] समाज मे गणिकाओ का सम्मान था। वह सुशिक्षित और सुसंस्कृत नारी का प्रतीक थी। यद्यपि मनु ने गण और गणिका दोनो का भोजन ब्रम्हण के लिए त्याज्य बताया है तथापि समाज और राज्य उसे विशेष आदर की दृष्टि से देखता था।[81] गणिकापद संस्थावत था और विलक्षण कलावती ही गणिका सम्बोधन की अधिकारिणी' बन पाती थी। वात्स्यायन के अनुसार 'शास्त्र-प्रहत-बुद्धि' तथा काम और कर्म प्रकार की 64 कलाओ मे निपुण गणिका ही जन सभा मे सम्मान पाने की अधिकारिणी हो सकती थी। [82] भरत ने गणिकाओ को अत्यन्त सम्माननीया माना है तथा उनके लिए उच्च योग्यताएं निर्धारित की है।[83] उन्होने नाटकों मे अन्य नारी पात्रो को प्राकृत बोलने की आज्ञा दी है किन्तु गणिका को संस्कृत मे सम्भाषण करने की अनुमति प्रदान की है।[84] कात्यायन क वार्तिक और महाभाष्य से ज्ञात होता है कि उनके समय में नगरो में गणिका संघो की स्थापना हो चुकी थी।[85] गणिका के नाम से ही यह ज्ञान होता है कि राजनीतिक गण या वात्स्यायन के अनुसार 'नागरिक-जन-समवाय' अर्थात नगर के जन समाज की सामान्य सम्पत्ति होने के कारण इनका नाम गणिका हो गया था। अत: गणिका के रूप, सौन्दर्य, गुण तथा कला ज्ञान का उपभोग समाज के सदस्य शुल्क देकर उपभोग कर सकते थे। नाट्य शास्त्र में कहा गया है कि

---

80 गणिकेगच्छ मे कार्य कुरू सुन्दरि मा चिरम्।
कृतकृत्याऽऽगता भूयो वल्लभा मे यथा शची।।
इत्याकर्ण्य वच: शक्रादुत्य गणिका दिश:।
क्षणेन यमसानिध्यमायात चारूरूपिणी ।। -ब्रह्मपुराण 861/34-35

81 मनुस्मृति 4/209

82. कामसूत्र 1/3/20-21

83. नाट्यशास्त्र 24/109-113

84. नाट्यशास्त्र 17/37-38

85. गणिकानां समूहो गाणिक्यम् /पाणिनी के सूत्र 4/2/20

गणिकाएं राजाओ की सेवा करने मे कुशल, स्त्रियो की सामान्य कमियो से परे मधुर भाषिणी मनोज्ञा, धीर पस्त न होने वाली तथा रूप-गुण-शील-यौवन-माधुर्य शक्ति सम्पन्न होती है।[86]

इस काल मे वारवनिताओ को तीन श्रेणियो मे विभक्त किया गया है। याज्ञवल्क्य ने अपने अर्थशास्त्र मे वेश्याओ के अवरुद्धा, दासी और भुजिण्या तीन भेद बताए है।[87] इनमे अवरुद्ध घर मे रहती, भुजिण्या रखेल होती और दासियॉ सामान्य होती थी। वात्स्यायन ने यद्यपि एक स्थान पर वेश्याओ के कुम्भदासी, परिचारिका, स्वैरिणी, कुलटा, नटी, शिल्पकारिका, प्रकाश विनष्टा रूपाजीवा और गणिका आदि नौ भेद बताए है।[88] परन्तु कार्यत: उन्होने कुम्भदासी, रूपाजीवा और गणिका प्रमुख तीन श्रेणियो पर विशेष बल दिया है।[89] इस प्रकार उन्होने सभी प्रकार की वारवनिताओ को तीन श्रेणियों मे विभक्त कर दिया है। इनमे गणिका सर्वोत्तम मानी गयी है।[90]

कौटिल्य ने वेश्याओ को राष्ट्र की ओर से नियंत्रित करने की सलाह दी है। वे एक गणिका तत्वावधायिका नियुक्त करने की सलाह देते है जो नियमानुसार उनकी देखभाल करती रहे। कौटिल्य की मान्यता है कि वेश्वाओ से प्रतिमास उनकी दो दिन की आय कर के रूप मे ली जाय।[91]

वास्तव मे उस समय गणिकाए राजदरबार मे हाजिरी देती थी, और उन्हे वेतन

---

86 नाट्यशास्त्र 35/61-62

87 याज्ञवल्क्य स्मृति, 2/293

88 कुम्भदासी परिचारिका कुलटास्वैरिणी नटी शिल्प कारिता।
प्रकाशविनष्टा रूपाजीवा गणिका चेति वेश्याविशेषा.।।, वात्स्याय, कामसूत्र 6/6/50

89. धनस्य परिग्रहण मित्युत्तम गणिकानां लाभातिशय:।
गृहपरिच्दस्योज्वलतेति रूपाजीवानां लाभातिशय:।।
सहिरण्यभागमलड.करणामिति कुम्भदासीनां लाभातिशय:।।, कामसूत्र-6/5/28-30

90. अभिरभ्युच्छ्रिता वेश्या शीलरूपगुणान्विता।
लभते गणिकाशब्द स्थानं च जनसंसदि।।
पूजिता सा सदा राज्ञा गुणवद्भिश्च संस्तुता।
प्रार्थनीयाभिगम्या च लक्ष्यभूता च जायते।।, कामसूत्र-1/3/17-18

91. गणिकाध्यक्षः गणिकान्वयामगणिकान्वयां वा रूपयौवन
शिल्प सम्पन्नां सहस्रेण गणिकां कारयेत् ।, -अर्थशास्त्र-2/27

मिलता था। उनसे छत्रधारिणी,स्वर्ण-शृंगार धारिणी, चामर धारिणी प्रभृति का काम लिया जाता था। इसके अतिरिक्त भण्डार, पाकशाला, स्नानागार और हरम मे भी वे काम करती थी।[92] इस समय गणिकाओ को उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ आदि अनेक वर्गो मे विभक्त कर दिया गया था। उनका यह वर्गीकरण उनके रूप,यौवन और अलंकरण आदि के आधार पर होता था। आठ वर्ष की आयु से ही उन्हे राजकीय सेवा मे नियुक्त कर दिया जाता था और तभी से ये राजदरबार मे नृत्य-गायन आदि के कार्य प्रारम्भ कर देती थीं।[93] जब कोई गणिका अपना रूप एवं यौवन खो देती थी तो उसे कोष्ठागार या रसोईघर मे कार्य करने के लिए भेज दिया जाता था या उससे मातृका (परिचारिका) का कार्य लिया जाने लगता था।[94] गणिकाओ की रक्षा पर राज्य की ओर से विशेष ध्यान दिया जाता था। यदि कोई व्यक्ति किसी गणिका की माता, दुहिता या रूपदासी को क्षति पहुंचाता था तो उसके लिए उत्तम साहस दण्ड का विधान था।[95] गणिकाओ के अतिरिक्त रूपाजीवा, दासी और अभिनेत्रियो को सिखाने के लिए कलाचार्य होते थे। वे उन्हें नृत्य, गीत, अभिनय, लिपिज्ञान, चित्रकर्म, वाद्यवादन, पुरुषो का भावग्रहण गन्ध युक्ति,माल्यविधि, सवाहन तथा नागरिको को लुभाने की कलाएं सिखाते थे।[96] इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि गणिकाओ की स्थिति बहुत अच्छी थी। यद्यपि ये वारांड.गनाए ही हुआ करती थी तथापि साधारण वेश्याओ के रूप गुण और कला आदि मे श्रेष्ठ होती थी।

इस काल मे देवदासियो के एक वर्ग का भी उल्लेख प्राप्त होता है। जिस प्रकार का

---

92. सौभाग्यालंकारवृद्ध्या सहस्रेण वारंकनिष्ठं मध्यमुत्तम
वाऽऽरोपयेत् / छत्र श्रृंगारव्यजन शिपिकापीठिकारयेषु च विशेषार्थम्। -अर्थशास्त्र-2/27

93 अष्टवर्षात्प्रभृति राज्ञः कुशीलवकर्म कुर्यात् । -अर्थशास्त्र-2/27

94 गणिकादासी भग्नभोगा कोष्ठागारे महानसे वा कर्म कुर्यात् ।
सौभाग्यभड.गे मातृकांकुर्यात् । -अर्शशास्त्र-2/27

95 मातृका दुहितृकारूपदासीनां घात उत्तमस्साहस दण्ड·। -अर्थशास्त्र-2/27

96 गीत वाद्य पाठनृत्तनाट्याक्षर चित्र वीणावेणु मृदग परिचित्तज्ञान गन्ध माल्य समूहन सपादन सवाहन
वैशिक कला ज्ञानानि गणिका दासी..... ग्रहयतो राजमण्डलादाजीव कुर्यात् । -अर्थशास्त्र-2/27

विवरण देवलोक मे देवताओ की सेवा मे तत्पर रहने वाली अप्सराओ का प्राप्त होता है उसी प्रकार का विवरण मन्दिरो के निर्माण होने पर देवदासियो का मिलता है। वैदिक साहित्यो मे इन्द्र के दरबार मे अप्सराओ का जो चित्रण प्रस्तुत किया गया है उसी प्रकार जब देवताओ को सगुण स्वरूप प्रदान कर मूर्ति रूप मे मन्दिरो मे प्रतिष्ठित किया गया तो उनके परिचारिकाओ के रूप मे देवदासी प्रथा का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। देवमन्दिरो के ऐश्वर्य और वैभव को प्रभायुक्त करने के लिए अनेक योजनाए प्रारम्भ की गयी आराध्य देव के सम्मुख नृत्य और गान करने वाली सुन्दरियो को रखा जाने लगा, जो अपने सुन्दर और आकर्षक कार्यक्रमो से देवमन्दिरो को गुंजित करती थी। पूजन और स्तवन के समय सुमधुर वाणी मे देव स्तुति होती थी। अत: जो सुन्दरियो देव मन्दिर के लिए नियुक्त की जाती थी वे देवदासी कहलाती थी। इनका उल्लेख मेघदूत पद्मपुराण तथा भविष्य पुराण मे भी हुआ है जिससे यह कहा जा सकता है कि देवदासी प्रथा पौराणिक धर्म के अन्तर्गत मन्दिरो मे विभिन्न देव समुदायो के विकास के साथ संयुक्त थी।

शैव धर्म के लोक प्रचलित रूप का वर्णन कालिदास ने अपने महाकाव्य मेघदूत मे किया है। उज्जैनी मे महाकाल नाम से शिव का एक प्रसिद्ध मन्दिर था।[97] यह एक प्रमुख मन्दिर माना जाता था जहां प्रतिदिन सन्ध्या काल मे भगवान शिव की आरती होती थी। कालिदास ने इसके सम्बन्ध मे एक प्रचलित प्रथा का उल्लेख किया है। सन्ध्या की आरती के समय मन्दिर में वार विलासिनियों आकर नृत्य करती थी। इन्ही के ऊपर अपनी शीतल फुहार बरसाने और इसके पुरस्कार स्वरूप उनकी कृतज्ञता भरी दृष्टियो का सुख उठाने के

---

97. अप्यन्यास्मिन जलधर महाकालमासाद्य काले।
स्थातव्यं ते नयन विषयं यावदत्येति भानु:।।
कुर्वन सन्ध्यावलिपदहतां शूलिन: श्लाघनीया।
मामन्द्रणां फलम् विकलम् लप्स्यसेगर्जितानाम् ।। -मेघदूत, पूर्वमेघ-34

लिए यक्ष ने मेघ से, उज्जैनी के ऊपर सन्ध्या समय तक रूके रहने का कहा था।[98] शिव मन्दिर के वारविलासिनयो के इस नृत्य के उल्लेख से यद्यपि यह स्पष्ट नही होता कि यहां देवदासियां रहती थी तथापि यह संकेत प्राप्त होता है कि मन्दिरो मे इनका नृत्य शुभ माना जाता था।

पद्मपुराण मे मन्दिरो की सेवा के लिए अनेक सुन्दरियो के क्रय किये जाने का साक्ष्य प्राप्त होता है।[99] भविष्य पुराण मे सूर्य लोक की प्राप्ति के लिए सूर्यमन्दिर को वेश्याकदम्ब प्रदान करने का उल्लेख प्राप्त होता है।[100] इस प्रकार मन्दिरो मे दासियो को अर्पित करने की प्रथा चल पड़ी जो देवताओ की सेवा मे तत्पर रहती थी। अत इन स्रोतो से स्पष्ट होता है कि गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल मे उत्तर भारत मे इस प्रथा का उद्‌भव हो गया था। इस प्रथा का समर्थन राजाओं द्वारा किया जाता था। यद्यपि देव मन्दिरो का निर्माण पूजा, अर्चना तथा आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिए किया गया था तथापि इनमे देवदासियो के आ जाने से मन्दिरो की पूर्व परम्परा शनै·शनै: समाप्त हो गयी तथा देव मन्दिर कामोद्दीपन के केन्द्र बन गए। अत: कहा जा सकता है कि बौद्ध काल की श्रेष्ठ नर्तकी, मन्दिरो का विकास होने पर देवदासी के रूप मे परिवर्तित हो गयी।

---

98. पादन्यासै क्वणितरशनास्तत्र लीलावधूतै।
रत्नच्छायारवचित वलिभिश्चामरैः क्लान्तहस्ता ।।
वेश्यास्त्वत्तो नखपद सुखान प्राप्य वर्षाग्र विन्दुन।
आमोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकर श्रेणिदीर्धान् कटाक्षान् ।। -मेघदूत, पूर्वमेघ, 35

99. क्रीता देवाय दाताव्या धीरेणाक्लिष्ट कर्मणा।
कल्पकालं भवेत्स्वर्गो नृपौ वासौ महाधनी।।
-पद्मपुराण-52/97

100 वेश्या कदम्बकं यस्तु दद्यात्सूर्याय भक्तित:।।
सगच्छेत्परमं स्थानं यत्र तिष्ठति भानुमान् ।।
-भविष्य पुराण 1/93/97

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

''हर्ष काल से लेकर बारहवीं शती के साहित्य में अप्सरा का प्रतिबिम्बन''

हर्ष काल से लेकर बारहवी शती के साहित्यो मे अप्सराओ के विवरण प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध नही है, जबकि इस काल की कला मे इनका अकन प्रमुखता से किया गया है। हर्ष कालीन साहित्यो मे अप्सराओ का जो रूप, स्वरूप, कार्य-व्यवसाय चित्रित किया गया है वह पौराणिक विवरणो से साम्य रखता है तथा हर्षोत्तर कालीन साहित्यो मे अप्सराओ का स्पष्टत मानवीकरण किया जाने लगा।

वाणभट्ट ने अपने ग्रंथ कादम्बरी मे भी अप्सराओ का वर्णन प्रस्तुत किया है। फर्कुहर के अनुसार वाणभट्ट ने कादम्बरी मे अग्निपुराण, भागवत पुराण, मार्कण्डेय पुराण और वायुपुराण का उपयोग किया है।[1] वाणभट्ट के कथानक की मुख्य नायिका कादम्बरी और महाश्वेता अप्सराओ के कुलो से सम्बन्धित है। उन्होंने अप्सराओ के 14 कुलो का वर्णन प्रस्तुत किया है।[2] महाश्वेता के जन्म कुल का वर्णन करते हुए वे महाश्वेता के मुख से

1- फर्कुहर-आउट लाइन आफ दि रिलिजियस लिटरेचर आफ इण्डिया, पृ० 225

2- एतत् पायेण कल्याणाभिनिवेशिन श्रुतिविषयमापतितमेव,
यथा विबुध सद्मनि अप्ससरसों नामकन्यका सन्तीति।
तासा चतुर्दश कुलानि एक भगवत कमलयोनेर्मनस्
समुत्पन्नम्, अन्यद्वेदेभ्य: सम्भूतम्, अन्यदग्नेरूद्भूतम्,
अन्यत्यवनात प्रसूतम, अन्यदमृतान्मश्यमाना दुत्थितम्,
अन्यज्जलाज्जातम्, अन्यदर्ककिरणेभ्यो निर्गतम्,
अन्यत्सोम रश्मिभ्यो निष्पतितम्, अन्द्भूमेरूद्भूतम्,
अन्यत्सौदामिनीभ्य· प्रवृत्तम्, अन्यन्मृत्युना निर्म्मितम्,
अपर मकरकेतुना समुत्पादितम्, अन्यत्तु दक्षस्य प्रजापतेरति
प्रभूतानां सुतानां मध्ये द्वे सुते मुनिररिष्टा च
बभूवतुस्ताभ्यां गन्धर्वे सह कुलद्वयं जातम्।
एवमेत्यान्येकत् चतुर्दश कुलानि।
—बाणभट्ट-कादम्बरी, पृ० 41।
मथुरा नाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई,1948

चन्द्रापीड को सुनाते हुए कहते है कि आपने सुना होगा कि देवलोक मे अप्सरा नामक कन्याएं रहती है। उनके चौदह कुल है जिनमे पहला भगवान ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुआ है, दूसरा वेदो से, तीसरा अग्नि से, चौथा वायु से, पाचवा मध्यमान अमृत से, छठा जल से, सातवां सूर्य रश्मियो से, आठवा चन्द्ररश्मियो से, नवा पृथ्वी से, दसवां विद्युत से, ग्यारहवां मृत्यु से, बारहवां कामदेव से, अवशिष्ट दो दक्ष प्रजापति की बहुतर कन्याओ मे से मुनि और अरिष्ठा नाम की कन्याओ के गन्धर्वो के साथ समागम से उत्पन्न हुए। इस प्रकार क्रम से एकत्र करने पर ये चौदह कुल हुए। मुनि और अरिण्य नामक दक्ष कन्या द्वय से गन्धर्वो के भी वे ही दो कुल उत्पन्न हुए है। मुनि का चित्रसेन प्रभृति पन्द्रह भाइयो के मध्य मे गुणो से श्रेष्ठ चित्ररथ नाम का सोलहवां पुत्र उत्पन्न हुआ था।[3]

वाणभट्ट के अनुसार इन कुलो मे चन्द्ररश्मियो से जो अप्सराओ का कुल उत्पन्न हुआ था, उनमे एक गौरी नामक कन्या हुई थी। गौरी का विवाह गन्धर्व राजहंस से हुआ था, जिससे एकमात्र पुत्री महाश्वेता उत्पन्न हुई थी। कादम्बरी के दूसरे प्रसंग के अनुसार अमृत से उत्पन्न अप्सराओ के कुल मे मत्खंजनं के समान नेत्र वाली मदिरा नाम की कन्या उत्पन्न हुई थी। देव चित्ररथ से उसका पाणिग्रहण हुआ था जिससे कादम्बरी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी।[4] इन उद्धरणो से स्पष्ट हो जाता है कि इस समय तक श्रेष्ठ एवं सर्वाड.गसुन्दरी नायिकाओ का सम्बन्ध अप्सराओ से जोड़ने की परम्परा प्रचलित हो गयी थी। भतृहरि ने अपने ग्रंथ 'श्रृंगार शतक' में कहा है कि उग्र तपस्या के परिणाम स्वरूप व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है किन्तु स्वर्ग प्राप्ति का उद्देश्य रम्य अप्सराओ का भोग करना भी है।[5] इससे

3- कादम्बरी, पृ०, 413-14

4- यत्तन्मया कथितमृतसंम्भवमप्सरसा कुलम् तस्मान्मदिरेति
नाम्ना मदिरायते क्षणा कन्यकाभूत। तस्याश्चासौ सकल
गन्धर्व कुलमुकुटदेवचितत्ररथः पाणिनग्रहीत।
अन्योन्यप्रेमसम्बर्द्धनपरयोश्च तयोर्यौवन सुखानि सेवमानयोः
दुहितृरत्नमुदयादि कादम्बरीति नाम्ना।
–कादम्बरी, पृ०, 514-15

5- यस्मात्तपसोऽपिफलं स्वर्गस्तस्यापि फलं तथाप्सरस·।
–भतृहरि-श्रृगारशतक, श्लोक 57

यह ज्ञान होता है कि अप्सराओ द्वारा श्रेष्ठ जनो का स्वर्ग मे स्वागत करने की परम्परा इस काल मे भी मान्य थी।

भारवि ने अप्सराओ का विहार स्थल हिमालय की सुरम्य चोटियां बताया है। अप्सराओ के लिए वे दिव्य स्त्री[6] और सुर सुन्दरी[7] शब्दो का प्रयोग करते है। अर्जुन की तपस्या भंग करने के लिए देवराज इन्द्र ने अप्सराओ को भेजा था। इस प्रसग मे ब्रह्मा द्वारा अप्सराओ के सृजन की अवधारणा मिलती है।[8] जिन्हे नृत्य, गीत तथा वाद्य कलाओ मे दक्ष माना गया है।[9] इन्द्र की आज्ञा पाकर अप्सराएं लोकोत्तर कान्ति को प्राप्त कर अप्सराएं अर्जुन का तप भंग करने के लिए प्रस्थान करती है,[10] जिसमे वे असफल रहती है। इससे यह आभासित होता है कि अप्सराएं तपस्वियो की तपस्या भंग करने मे कुशल मानी जाती थी।

इस प्रकार बाणभट्ट, भतृहरि, भारवि के विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन जनमानस महाकाव्य कालीन अप्सरा विषयक वर्णनो को भूला नही था, साथ ही उन्हे दिव्य स्त्री,सुर-सुन्दरी तथा सर्वाड़ग सुन्दरी नारी के रूप मे देखता था।

हर्षोत्तर कालीन समाज मे अप्सराओ का मानवीकरण किया जाने लगा। इसका साक्ष्य उत्तर, दक्षिण भारत के साहित्य, लोक कलाओ तथा मन्दिरो की गतिविधियों से प्राप्त होता है। इस काल मे ईश्वर को मानवीय रूप मे अभिव्यक्त कर दिया गया अत· अप्सरा रूपी ईश्वरीय परिचारिकाओ के स्वरूप को भी, मानवीय रूप मे प्रस्तुत करने की बाध्यता हो गयी।

6- दिव्यस्त्रीणा सचरण लाक्षारागा .. . . । किरातार्जुनीयम् -5/23

7- श्रीमल्लता भवनमोषधय: प्रदीपा ।
शय्या नवानि हरिचन्दन पल्लवानि।
अस्मिन रतिश्रमनुदश्च सरोजवाता.।
स्मर्तु दिशन्ति न दिव. सुर सुन्दरीभ्य । -किरातार्जुनीयम् -5/28

8- उपपादिता विदधता भवती: सुरसद्मयानसुमुखी उपपादिता।
-किरातार्जुनीयम्-6/42

9- तदुपेत्य विघ्नयत तस्य तप: कृतिभि: कलासुसहिता: सचिवै ।।
-किरातार्जुनीयम्-6/43

10- प्रणतिमथ विधाय प्रस्थिता: सद्मनस्ता·।
स्तन भरन मिताङ्गीरङ्गना: प्रीति भाज:।।
-किरातार्जुनीयम् -6/47

हर्षोत्तर काल मे सामन्तवाद की उत्पत्ति के बाद उत्तर तथा दक्षिण भारत मे शासको को देवत्व का रूप प्रदान किया जाने लगा तथा इसे सार्थकता प्रदान करने के लिए देवताओ से जुड़े भाव भगिमाओ को उनके साथ जोड़ा जाने लगा। दक्षिण भारत मे राजस्व को देवत्व से जोड़ने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई मन्दिरो मे एक तरफ देवताओ और दूसरी तरफ उनके मानवीय रूप शासको की मूर्तियां पदस्थापित की जाने लगी अर्थात शासक, देवताओ के समकक्ष होकर अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करना चाहते थे, इसलिए देवताओ के दरबार से सम्बन्धित प्रक्रियाओ को अपनाने की बाध्यता हो गयी। अतः शासको का ईश्वरीकरण किया गया और पारलौकिक अप्सराओ का मानवीकरण किया गया।

अप्सराएं विभिन्न धर्मो मे मानवीय रूप धारण करके ईश्वर के सम्मान और उनके उपभोग की वस्तुएं बनी रही। पूर्वमध्य युग मे न सिर्फ बौद्ध और जैन बल्कि शाक्त और वैष्णव धर्म से सम्बन्धित मन्दिरो मे भी नर्तकियो के रूप मे अप्सराओ का प्रस्तुतीकरण किया जाता रहा।[11] सातवी शताब्दी से नवी शताब्दी के मध्य प्राप्त तालेश्वर के ताम्रपत्रो मे 'वोटाओ' का उल्लेख मिलता है।[12] ये वोटाए, वे परिचारिकाएं थी, जिन्हे भगवान शिव की सेवा करने के लिए मन्दिरो को अर्पित कर दिया जाता था। मन्दिरो मे इन्हे नियुक्त किया जाना, यह प्रमाणित करता है कि ये वाटाएं अप्सराओ का मानवीय रूप प्रस्तुत करती हैं और इन्हे शिव की सेविकाओ के रूप मे, शिव को प्रसन्न रखने के लिए अर्पित किया जाता था। देवदासियो का स्पष्ट उल्लेख ह्वेनसांग के यात्रा विवरण मे प्राप्त होता है। उसने मुल्तान के सूर्य मन्दिर में देवदासियो को देखा था।[13] उपर्युक्त विवरणो से स्पष्ट होता है कि चाहे बौद्ध मन्दिर हो, चाहे शैव, चाहे सूर्य मन्दिर, सभी में देवदासियों की नियुक्ति होती थी। इसके दो कारण हो सकते हैं– एक देवदासियों को अप्सराओ के रूप मे, देवताओं को सहगामिनी माना जाना या दूसरे इन देवदासियों को भोग्य वस्तु के रूप मे देवताओ के समक्ष प्रस्तुत किया जाना।

11- बर्जेस, जे० - बुद्धिस्ट केव टेपल्स

12- एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 1, पृ० 148

13- वाटर्स, आन युवान च्वांग - भाग 2, पृ, 354, लंदन, 1904-5

अलबरूनी सहित अनेक अरब लेखको ने देवताओ के साथ देवदासियो का वर्णन किया है।[14] 'राजतरंगिणी', 'प्रबन्ध चिन्तामणि', 'कुट्टनीतम' आदि अनेक उत्तरवर्ती ग्रथो मे इस प्रथा का वर्णन है।[15] पूर्वमध्यकालीन अभिलेखो मे देवदासियो का उल्लेख प्राप्त होता है। 1192 ई0 के भुवनेश्वर से प्राप्त, स्वप्नेश्वर शिलालेख मे उन देवदासियो की चर्चा की गयी है जो भुवनेश्वर के शैव मन्दिर मे नृत्य करती थी।[16] चाहमानवशी जोजाल्द देव अपने राजदरबारियो के साथ प्रति वर्ष देव मन्दिर के उत्सव मे सम्मिलित होता था, जहाँ देवदासियां नृत्य करती थी।[17] उत्तर भारत मे बहुत कम ऐसे अभिलेख मिले है जिनमे देवदासी प्रथा का उल्लेख प्राप्त होता है परन्तु जिनमे इसका उल्लेख प्राप्त होता है उनसे स्पष्टत: ज्ञात होता है कि देवदासियां इस काल मे, इस क्षेत्र मे भी वही कार्य करती थी जो दक्षिण भारत मे करती थी। परन्तु उत्तर भारत मे सामन्तवादी प्रथा होने के कारण, देवदासियां देवो को प्रसन्न करने की वस्तु ही नही रही बल्कि ये भोग-विलास की वस्तु बन गयी, मन्दिरो के पुजारी इन्हे भगवान् का प्रसाद मानकर इनका उपभोग करने लगे।[18]

अलबरूनी की लेखनी से स्पष्ट होता है कि राजा से लेकर सामान्य जनसाधारण तक, ये देवदासियां अपने कोमल-कामिनी शारीरिक सौन्दर्य को प्रस्तुत करके, उन्हे भी एक ईश्वरीय स्वरूप प्रदान करने की चेष्टा करती है।[19] अलबरूनी का वर्णन है कि ये देवदासियां तीर्थस्थलो पर भी मानवो की सहगामिनी बनती है, जहाँ अपने नृत्य को प्रस्तुत करके, देवताओं को प्रसन्न कर मानव की आकांक्षाओ की पूर्ति करना चाहती है।[20] अलबरूनी

14- मिश्र, जयशकर - ग्यारहवी शती का भारत, पृ० 159-162 वाराणसी, 1968

15- राजतरगिणी-अध्याय 7, पृ० 858, अग्रेजी अनुवाद-स्टीन एव पाण्डेय, आर०एस०, इलाहाबाद, 1935 प्रबन्ध चिन्तामणि - पृ० 108, अंग्रेजी अनुवाद, सी० एच० टानी, हिन्दी सस्करण, मुनि जिन विजय, सिन्धी जोन सीरीज नं०1, 1933 कुट्टनीतम्-पृ० 743-55, सम्पा० मधुसूदन कौल, 1944

16- एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 6, पृ० 200

17- एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 6, पृ० 26

18- भट्टाचार्य, ए० के० - दि कान्सेप्ट आफ सुर-सुन्दरी, कल्ट आफ देवदासी एण्ड अर्लि मेडिवल आर्किटेक्चर, स्टेट्स इन पोजिसन आफ वोमेन, खण्ड 1, पृ० 248-55 वाराणसी, 1988

19- अलबरूनी का भारत-69वाँ परिच्छेद पृ० 397 ई०सी सखाऊ का अंग्रेजी अनुवाद, जिल्द 2, लंदन 1914

20- अलबरूनी का भारत - छाछठवां परिच्छेद, पृ० 390-91

प्रत्यक्षदर्शी के रूप मे यह विश्लेषण करता है। इस विश्लेषण से यह प्रमाणित करने की चेष्टा की जा रही है कि अप्सराओ का स्वरूप और कार्य नही बदला बल्कि जब देवताओ ने अपना स्थान परिवर्तित कर लिया अर्थात् देवलोक को छोड़कर, पृथ्वीलोक पर आकर बसना प्रारम्भ किया तो अप्सराएं भी अपना स्थान परिवर्तित कर लेती है। ऋग्वैदिक काल से ही उन्हे देवताओ की सहगामिनी रूप मे प्रस्तुत किया जाता रहा है, तो स्वाभाविक है कि अप्सराए भी अपना स्थान परिवर्तन करे और देवताओ की सहगामिनी बनी रहे।

चोल कालीन अभिलेखो मे वर्णित है कि अप्सराओ ने शिव को भी अपने मोहपाश मे बांधने की चेष्टा की।[21] लगभग 948 ई0 मे नन्दिवर्मन् मगलम् नामक गांव के मध्यस्थ ने वयलूर के मन्दिर मे तीन स्त्रियां तिरुपदीयम् गाने तथा भगवान् परमेश्वर की सेवा के लिए नियुक्त की।[22] राजराज प्रथम के शासन के सत्रहवे वर्ष के एक अभिलेख, जो चिंगलपेट से प्राप्त हुआ है, मे वर्णित है कि श्रीवराह देव के मन्दिर मे भी देवदासियो को इसलिए नियुक्त किया गया कि वे प्रात: काल से लेकर देर रात्रि तक देवताओ की सहगामिनी बनी रहे।[23] यह इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि दक्षिण मे, चोल शासन काल मे भी अप्सराओ का मानवीकरण किया गया और उन्हे पूर्व की भांति देवताओ का सहचारी माना गया है। वे अपने कार्य के स्वरूप मे इस काल मे भी परिवर्तन नही करती है अर्थात् इन्द्र के दरबार मे विभिन्न भाव भगिमाओ में नृत्य करने वाली अप्सराएं अब देवलोक का परित्याग कर, पृथ्वी लोक पर अवस्थित देवताओ को अपने सौन्दर्य से वशीभूत कर उन्हे भी पृथ्वी स्थानीय देवताओ मे परिवर्तित कर देती है।

उपर्युक्त विवरणो मे उत्तर तथा दक्षिण मे देवताओ के साथ अप्सराओ के लौकिक और पारलौकिक सम्बन्धो का उद्धरण दिया गया है परन्तु पूर्वी भारत मे अप्सराओ के स्वरूप को पूंर्णरूपेण राजदरबारी नारियों के रूप मे वर्णित किया गया है। अन्तर मात्र इतना है कि उत्तर

21- याजदानी, जी० - अर्ली हिस्ट्री आफ दि दक्कन, पृ० 429, दिल्ली, 1977
22- वही - पृ० 429
23- वही - पृ० 429

और दक्षिण भारत की देवदासियां मानवीय स्वरूप धारण करते हुए भी देवताओ की सहगामिनी बनी रही है जबकि पूर्वी भारत मे इस समय जीमूतवाहन, सन्ध्याकर नन्दी, धोयी के विवरणो मे उन्हे सासारिक और सामान्य भोग्या नारियो के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। दायभाग मे वर्णित किया गया है कि नगरो के धनी वर्ग के लोग विवाहित होते हुए भी उपर्युक्त नारियो से कामुक सम्बन्ध स्थापित करते थे और इन्हे दासी के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। अत· यह स्पष्ट होना चाहिए कि प्राचीन काल मे देवलोक की कन्याएं जो अप्सराएं कही जाती थी वे समसामयिक ऐतिहासिक परिस्थितियो मे अपना स्वरूप और कार्य क्षेत्रानुसार परिवर्तित करती है। यह विश्लेषण जीमूतवाहन उद्धरण से स्पष्ट है।[24] जीमूतवाहन ने दासियो के सन्दर्भ मे कहा है कि ये मूलतः यौन क्रिया के उद्देश्य से रखी जाती थी इतना ही नही आगे चलकर जीमूतवाहन ने अपने कथन को और स्पष्ट करते हुए कहा है कि यदि भागीदारो को मिलाकर उत्तराधिकार मे एक ही दासी मिली हो तो उसे बारी-बारी से भागीदारो की संख्या के अनुसार प्रत्येक के लिए निश्चित समय पर उसकी सेवा मे उपस्थित होना पड़ता था।[25] वराराम, देवस्वनिता या देवदासी ये सभी आपस मे पर्यायवाची शब्द है। उपर्युक्त कथन से यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है कि सामान्य जनता के लिए अप्सराएं दासियो का रूप धारण करती है तो राजदरबारियो और ईश्वर के लिए यह देवदासी के रूप मे प्रस्तुत होती है। जीमूतवाहन वर्णित करते है कि देवदासियो को चौसठ कलाओ का पूरा-पूरा ज्ञान रखना आवश्यक था जिसके कारण समाज और राजदरबार मे उनका काफी सम्मान होता था। इन सभी चौसठ कलाओ मे संगीत और नृत्य सर्वोपरि माना गया है।[26]

24- स्वयमनूढायां शूद्रायामपत्य जनने नैते दोषा· किन्तु स्वल्पदोषः प्रायश्चितचाल्पम् इति वस्येति।
–दायभाग, (जे० विद्यासागर) द्वितीय संस्करण, कलकत्ता, 1895, अध्याय IX-XI आलसो दायभाग कोलब्रुक पेज-149

25- वही, पेज 7

26- जीमूतवाहन - दायभाग, (जे० विद्यासागर) द्वितीय सस्करण, कलकत्ता, अध्याय XII, आलसो दायभाग कोलब्रुक, पृ० 154

सन्ध्याकर नन्दी और धोयी ने वरारामा और देवस्वनिताओ के सौन्दर्य और आकर्षण को उल्लिखित किया है और वर्णित किया है कि ये दरबारी स्त्रिया स्वयं लक्ष्मी का अवनार है। अत· जिस प्रकार से ऋग्वेद से लेकर उसके उपरान्त के साहित्य मे उर्वशी, मेनका, रम्भा इत्यादि के सौन्दर्य और आकर्षण का विश्लेषण किया गया है, वही विश्लेषण सन्ध्याकर नंदी[27] और धोयी[28] के विवरणो मे प्राप्त होता है। अर्थात् सौन्दर्य और कमनीयता का विश्लेषण जो उर्वशी के सन्दर्भ मे इन्द्र के दरबार से जुड़ी है वही पाल वश के अन्तर्गत पूर्णरूपेण अपने पारलौकिक रूप का परित्याग कर लौकिक रूप धारण कर लेती है जो ईश्वर, राजा और सामान्य जनता के लिए भी साहित्य मे उपलब्ध करायी गयी है।

पूर्व के विश्लेषणो मे यह साहित्य किया जा चुका है कि अप्सराए गणिकाओ का रूप भी धारण करती थी और यह प्रमाण मौर्य काल से ही वर्णित किया गया है। किन्तु 800-1200 ई0 के बीच ये यक्षिणी, गणिका के रूप मे भी राजपूताना और काश्मीर मे प्रतिष्ठित की गयी है। प्रतिहार शासक महेन्द्रपाल द्वितीय के समय मे प्रतापगढ़ अभिलेख मे वरयक्षिणी देवी के मन्दिर का उल्लेख है अर्थात् यक्षिणियो को देवियो की भांति कृपादात्री माना गया है।[29] लिंगराज मन्दिरो मे भी यक्षिणीयो को आकर्षक रूप मे प्रस्तुत किया गया है।[30] देवलोक मे निवास करते हुए मानवो से सम्बन्ध रखने वाले एक वर्ग को गन्धर्व एवं अप्सरा कहा गया है। अत्यन्त सौन्दर्य इनका विशेष गुण है और ये धरती पर उतरकर देवताओ से सम्बन्धित मन्दिरो पर स्थापित हो जाती है। अलबरूनी भी इस सन्दर्भ मे वर्णित करता है कि मन्दिरो मे ईश्वरोपासना के लिए जो नर्तकियां रखी जाती थी उन्हे देवदासी कहा जाता था। ये गीत, वाद्य और नृत्य द्वारा ईश्वर की पूजा करती थी।[31]

नीतिवाक्य मे सोमदेव राजा को गणिकाओ के संग्रह का निर्देश देने के साथ-साथ

27- वाइड रामचरित्रम् - अध्याय 3, पृ० 36, निर्णयसागर प्रेस, V सस्करण . 1919
28- पवन दूतम् - वर्सेस 42, एफ० एफ०, धोयी (ऐड०सीं० चक्रवर्ती, कलकत्ता, 1926
29- एपिग्राफिया इण्डिका - 14, पृ० 117
30- गांगुली, ओ० सी० और गोस्वामी, ए० - ओरीसन स्कल्पचर्स एण्ड आर्किटेक्चर, 9, 12
31- सखाऊ - अध्याय 2, पृ० 157

इसे राजदरबार के उपभोग के योग्य वस्तु बताया गया है।[32] जिन पाल सूरी ने भी वर्णित किया है कि पृथ्वीराज तृतीय के दरबार से गणिकाएं सम्बद्ध थीं।[33] गणिकाओं का विवरण 'श्रृंगार मंजरी' नामक पुस्तक से भी प्राप्त होता है।[34] गणिकाएं जहाँ एक ओर लोगों के आमोद-प्रमोद का कार्य करती थीं तो वहीं दूसरी ओर इनकी आय से राज्य को बड़ा कर प्राप्त होता था और इसका प्रथम विवरण कौटिल्य द्वारा लिखित अर्थशास्त्र में देखा जा सकता है।[35] गणिकाओं की कई श्रेणियां होती थीं उत्तम, मध्यम एवं निकृष्ट और श्रेणियों के अनुसार ही कौटिल्य ने उन पर करों को आरोपित करने का निर्देश दिया है। इसकी पुष्टि मुस्लिम लेखक अलबरूनी के लेखों से होता है जिसमें वर्णित किया गया है कि राजा अपने नगरों में पर्याप्त गणिकाएं धन के लोभवश ही रखते थे।[36]

यद्यपि समाज में गणिकाओं का स्थान सम्मानित नहीं था फिर भी ये अपनी वृत्ति का परित्याग करके मर्यादित गृहस्थ जीवन व्यतीत करती थीं। 'दशकुमार चरित' की राग मंजरी और चन्द्रसेना ने गणिकाओं के कार्य का परित्याग कर सम्भ्रान्त लोगों से विवाह कर लिया। 'दशकुमार चरित' में काम मंजरी का मुनि के साथ किया गया वाद-विवाद, विद्वतापूर्ण और ज्ञान से ओत-प्रोत था।[37]

अरब लेखक अबू जैद अल हसन ने वर्णित किया है कि उसने मन्दिरों में कार्य करने वाली उन स्त्रियों को प्रत्यक्ष रूप से देखा है, जो गणिकाओं के रूप में भी और देवदासियों के रूप में भी कार्य करती है अर्थात् मन्दिरों में अवस्थित देवताओं के सेवा के क्रम में वे देवदासी है लेकिन मन्दिरों की सहायता के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है तो वे गणिका का रूप धारण कर लेती हैं।[38] 985 ई0 के लगभग भारत आने वाले यात्री मुकद्देसी

32- नीति वाक्य, अध्याय 24, पृ० 29-30
33- जिन पाल सूरी - मोहराज पराजय, पृ० 83
34- भाटिया, प्रतिपाल - दि परमाराज, पृ० 284, दिल्ली, 1970
35- कौटिल्य - अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, प्रकरण 6, पृ० 2
36- सखाऊ - अध्याय 2, पृ० 157
37- दशकुमार चरित - अध्याय 6, पृ० 25-30, सम्पादक एम० आर० काले
38- सिंह, एम० पी० - लाइफ इन एनशियन्ट इण्डिया, पृ० 134, वाराणसी, 1981

ने भी सिन्ध के मन्दिरो मे देवदासियो का वर्णन किया है।[39] तेरहवी शती के मध्य भारत आने वाले फारसी लेखक जकरीय-अल-कजवीनी ने वर्णित किया है कि सोमनाथ मंदिर के द्वार पर पाच सौ कुमारियां देवदासी के रूप मे नाचती गाती है।[40] एक जैन अभिलेख जो कि 1207 ई० का है उसमे वर्णित किया गया है कि एक कन्या जैन मन्दिर को दान के रूप मे दी गई थी।[41] इससे स्पष्ट है कि ये देवदासिया केवल हिन्दू मन्दिरो मे ही नही थी वरन् दूसरे धार्मिक स्थलो पर भी होती थी। चाहमान राज्य के सभी मन्दिरो मे देवदासियो की उपस्थिति दिखाई देती है।[42] कोई भी मन्दिर इससे अलग नही था। सामान्यत: नवी तथा दसवी सदी के मंदिरो मे नट मण्डप निर्मित किये जाते थे। मंदिर के नट मण्डप मे सुन्दरियो द्वारा नाट्य और नृत्य अभिनय का साक्ष्य प्राप्त होता है।[43] राजा विक्रमाकदेव के मन्दिर मे नृंत्य हेतु अत्यंत रूपमती नर्तकियो का वर्णन प्राप्त होता है।[44] इन नर्तकियो द्वारा नृत्य करने और गायन करने का वर्णन प्राप्त होता है।[45] इससे स्पष्ट होता है कि राजाओं द्वारा इस प्रथा को संरक्षण प्राप्त था। राजतरंगिणी वर्णित करती है कि राजाओ द्वारा देवदासियो को रानी भी बनाया गया।[46] राजतरंगिणी मे ही वर्णित है कि राजा जयापीड ने कमला नामक दासी को रानी मे परिवर्तित कर उसके नाम पर कमलापुर नामक शहर बसाया।[47]

इत्सिंग के अनुसार बौद्ध मन्दिरो मे भी नर्तकियां निवास करती थी।[48] हुयूद उल आलम, दसवी शताब्दी के लेखक ने वर्णित किया है कि बामियान के मन्दिर मे नर्तकियां थी।[49] घोषाल चाऊ-जु-कुआ के आधार पर वर्णित करते है कि सिर्फ गुजरात के चार हजार

39- मुकद्देसी - अहसुनत तकासीम, पृ० 483, द्वि० स० लीडन, 1906
40- इलियट एण्ड डाउसन, अध्याय 1, पृ० 98, आगरा 1973-74
41- जैन शिलालेख सख्या 455, कलकत्ता सग्रहालय
42- शर्मा, दशरथ - उत्तरपीठिका पृ० 292
43- विल्हण, विक्रमाक देव चरित अध्याय 18, पृ० 195
44- वही, अध्याय 31, पृ० 21, वाराणसी, 1971
45- राजतरगिणयी अध्याय 4, पृ० 223
46- राजतरगिणी, अध्याय 7, पृ० 858
47- वही, अध्याय 4, पृ० 422, 470
48- ताकाकुसु, इत्सिंग का विश्लेषण पृ० 147, आक्सफोर्ड, 1896
49- सिंह, एम० पी० - लाइफ इन एनशियन्ट इण्डिया, पृ० 135

मन्दिरो मे बीस हजार देवदासिया देवताओ को प्रसन्न करने के लिए पुष्पांजलि नृत्य शैली मे अर्पित करती थीं।[50] इन साहित्यिक विवरणो के अतिरिक्त अनेक लेख एव प्रशस्ति पत्र भी उपलब्ध है, जो देवदासी प्रथा के प्रचलन का साक्ष्य प्रस्तुत करते है। वरमलाट के बसतगढ अभिलेख मे श्रीमता मन्दिर के देवदासी वोटा का उल्लेख प्राप्त होता है।[51]

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है कि देवलोक मे जो ईश्वर की परिचारिकाएं है उन्हे उनके कार्यानुसार और कमनीय प्रस्तुतीकरण के कारण अप्सराएं कहा गया, वे ही कालान्तर मे अपना कार्य और स्वरूप तो उसी रूप मे प्रस्तुत करती है जो पौराणिक साहित्यो मे वर्णित है लेकिन वह कालान्तर मे मानवीय रूप धारण कर लेती है अर्थात् ऐतिहासिक काल के विकास के साथ ही उन्हे अन्तरिक्ष और आकाश स्थानीय देवताओ की जगह पृथ्वी स्थानीय देवताओ के परिचारिकाओ के रूप मे परिवर्तित कर दिया जाता है लेकिन मूलत· उनका कार्य वही रहता है।

50- मजूमदार, आर० सी० - दि स्ट्रगल फार अम्पायर, पृ० 495-96, बम्बई, 1957
51- एन्शियन्ट पिक्चर्स आन आइक्नोग्राफी (सकलित पुस्तक) पृ० 27

पंचम् अध्याय

पंचम अध्याय

"प्राचीन भारतीय कला में अप्सरा का प्रतिबि्‌न"

प्राचीन भारतीय साहित्यिक ग्रथो मे प्राप्त अप्सरा का चित्रण भारतीय कला मे भी प्राप्त होता है। प्राचीन भारतीय धार्मिक परम्पराओ के अन्तर्गत कुछ शक्तियां को अर्द्ध दैवीय स्वरूप प्रदान किया गया है। इनमे सिद्ध-गुह्यक, राक्षस, पिशाच, विद्याधर, नाग, यक्ष-यक्षी और गन्धर्व-अप्सरा प्रमुख है। इनमे अप्सराओ को भारतीय कलाकारो ने देवलोक की सुन्दर परिचारिकाओ तथा नृत्यांगनाओ के रूप मे चित्रित किया है।

भारतीय कला के अवशेष प्राचीन काल से प्राप्त होने लगे थे, परन्तु उसमे अप्सराओं के विषय मे कोई ज्ञान स्पष्ट नही हो पाता। इनकी प्रामाणिक सूचना मौर्य कालीन कला से ही प्राप्त होती है। मौर्य कालीन कला को आनन्द कुमार स्वामी ने दो रूपो मे वर्णित किया है- राजकीय कला और लोक कला।[1] लोक कला के अन्तर्गत यक्ष-यक्षी तथा सामान्य मूर्तियो की गणना की जाती है, जो जनसाधारण के बीच शिल्पियो द्वारा निर्मित की जाती थी। मौर्य काल मे इस लोक कला का चरमोत्कर्ष दिखाई देता है। इसमे यक्ष-यक्षी मूर्तियां प्रमुखता से गढी गई जो लोक धर्म से सम्बन्धित थी।

सम्भवत: यक्षो के समान प्राचीन, लोक व्यापी और लोकप्रिय दूसरी परम्परा नही थी। आज भी हर गांव मे बीर नाम से यक्ष का चौरा पाया जाता है। (गांव गांव को ठाकुर गांव गांव को बीर)। यक्ष का एक नाम राजा या चमकने वाला था, इसीलिए उनके अधिपति कुबेर को राजराज या महाराज कहा गया है। बौद्ध साहित्य मे प्राय: चार महाराजाओं का उल्लेख आता है (चत्तारो महाराजानो)। इनमे यक्षो का राजा वैश्रवण उत्तर दिशा का, गन्धर्वो का राजा पूर्व दिशा का, कुंभाण्डो का राजा विरूढ़क दक्षिण दिशा का और नागो का राजा पश्चिम दिशा का स्वामी था। ये चारो महाराज देवता के रूप मे पूजे जाते थे।

1- कुमारस्वामी, ए०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० 16-17 लन्दन, 1927

भरहुत वेदिका पर इन्हे यक्ष कहा गया है।[2] इस विवरण से यक्ष एव गन्धर्व मे समीकरण स्थापित होता है। चूंकि यक्षिया यक्षो की पत्निया थी तथा अप्सराए गन्धर्वो की पत्निया थी, इसलिए उनमे भी समानता स्थापित होती है।

भरहुत स्तूप पर बनी विशेष प्रकार की नारी मूर्तिया वृक्ष की शाखा झुकाये या तने को शरीर से लगाये उसके नीचे प्रदर्शित है। इनके नाम भारतीय कला समीक्षा मे वृक्षिका, शालभंजिका, यक्षी, यक्षिणी आदि पड़ गया है। यक्ष-यक्षिणियो का संबध प्राचीन भारतीय लोक समाज मे वृक्षो से किया गया है। ये उर्वरा शक्ति से सम्पन्न मानी जाती है। जल तथा वृक्ष दोनो ही उर्वरा शक्ति के साधक माने जाते है। दोनो मे ही उनका निवास है। प्रजनन की देवी तथा मातृशक्ति को ही स्पष्ट करने हेतु उनके भारी नितम्ब तथा उन्नत स्तन बनाये गए है। इसी प्रकार गधर्व अप्सरा को भी जल तथा प्रजनन मे सबधित माना गया है।[3] प्रजनन के देवता होने के कारण ही गंधर्व-अप्सरा को प्रजापति ने मिथुन रूप मे उत्पन्न किया था।[4] जल से सम्बन्धित[5] होने के कारण ही अप्सरा को जलीय पक्षी के रूप मे अपनी चोच मे पद्म पुष्प अथवा माला लिए हुए प्रदर्शित किया जाता है। इस प्रकार यक्ष-यक्षी तथा गधर्व-अप्सरा मे समानता दृष्टिगत होती है। इन्ही विवरणो के आधार पर आनन्द कुमार स्वामी ने अप्सराओ को तीन स्वरूप प्रदान किया है- उन्हे महायक्ष, असुर कहा है, वनस्पति के रूप मे उन्हे अक्षयवट, कल्पतरू, एकश्वत माना है तो पृथ्वी पर उन्हे अप्ह, वरूणानी के रूप मे वर्णित किया है। दूसरी तरफ उन्हे गन्धर्व (यक्ष) के साथ वर्णित करते हुए इन्हे रस और सोम का प्रतिनिधित्व कर्त्ता माना है तथा सांसारिक जीवन मे उन्हे अप्सरा (यक्षी) के रूप मे विभूषित किया है।[6]

भारतीय कला मे अप्सराओ का चित्रण दो रूपो मे प्राप्त होता है- प्रथमत: साहित्यिक

2- अग्रवाल, वासुदेव शरण-भारतीय कला, पृ० 126- 127, वाराणसी, 1966
3- यजुर्वेद - 3/4/8
4- अथर्ववेद - 14/2/9, जैमिनीय उपनिषद 3/25/8
5- अथर्ववेद - 2/2/3, शतपथ ब्राह्मण - 11/5/1/4
6- कुमारस्वामी, आनन्द - यक्षाज, पृ० 27, 190, वाशिंगटन, 1928

वर्णनो मे, द्वितीय मूर्तिकला मे। इन्ही दोनो स्रोतो के अवलोकन से भारतीय कला मे अप्सरा के स्वरूपो का निर्धारण किया जा सकता है।

महाभारत मे उर्वशी नामक अप्सरा के रूप सौन्दर्य, श्रृंगार प्रसाधन का बड़ा ही मनोहारी चित्रण किया गया है, जिससे उसके स्वरूप का निर्धारण किया जा सकता है। जब वह अपने सौन्दर्य से अर्जुन को लुभाने जाती है तो उसके कोमल, घुंघराले और लम्बे केशो के समूह वेणी के रूप मे आबद्ध थे। उनमे कुमुद पुष्पो के गुच्छे लगे हुए थे। भौहो की भगिमा, वार्तालाप की मधुरिमा, उज्ज्वल कान्ति और सौम्य भाव से सम्पन्न अपने मनोहर मुख चन्द्र द्वारा वह चन्द्रमा को चुनौती सी देती हुई इन्द्र भवन के पथ पर चल रही थी। सुन्दर हारो से विभूषित उर्वशी के उठे हुए स्तन जोर-जोर से हिल रहे थे। उन पर दिव्य अगराग लगाए गए थे, उसके अग्रभाग अत्यन्त मनोहर थे। वे दित्य चन्दन से चर्चित हो रहे थे। स्तनो के भारी भार को वहन करने के कारण थककर वह पग-पग पर झुकी जाती थी। उसका अत्यन्त सुन्दर मध्य भाग त्रिवली रेखा से विचित्र शोभा धारण करता था। सुन्दर महीन वस्त्रो से आच्छादित उसका जघन प्रदेश अनिंद्य सौन्दर्य से सुशोभित हो रहा था। वह साक्षात् कामदेव का उज्जवल मन्दिर जान पडता था। नाभि के नीचे के भाग मे पर्वत के समान् विशाल नितम्ब ऊंचा और स्थूल प्रतीत होता था। कटि मे बंधी हुई करधनी की लड़ियां उस जघन प्रदेश को सुशोभित कर रही थी। वह मनोहर अंग देवलोक वासी महर्षियो के चित्त को भी क्षुब्ध कर देने वाला था। अत्यन्त महीन मेघ के समान श्याम रंग की ओढ़नी ओढ़े तन्वडगी उर्वशी आकाश मे बादलो से ढ़की हुई चन्द्रलेखा सी चली जा रही थी।[7]

7- मृदुकुञ्चितदीर्घेण कुमुदोत्कार धारिणा ।
केश हस्तेन ललना जगामथ विराजती॥
भ्रूसेपालापमाधुर्ये. कान्त्या सौम्यतयापि च।
शशिन: वक्त्र चन्द्रेण साऽऽह्वयन्तीव गच्छति।
दिव्याडगरागौ सुमुखौ दिव्य चन्दन रूषितौ।
गच्छन्त्या हाररूचिरौ स्तनौ तस्याववल्गतु·॥
स्तनोद्वहन संक्षोभान्नम्यमाना पदे पदे।
त्रिवलीदाम चित्रेण मध्येनातीव शोभिना॥
अधोभूधर विस्तीर्णं नितम्बोन्नतपीवरम् ।
मन्मथायतनं शुभ्रं रसनादामभूषितम् ॥ क्रमश.

इसी प्रकार रामायण मे रम्भा अप्सरा के सौन्दर्य का वर्णन प्राप्त होता है। वह अपने अंगो पर दिव्य चदन का लेप लगायी हुई थी। गले मे मन्दार की माला तथा दिव्य पुष्पो से युक्त थी। उसकी आंखे अत्यन्त मनोहर तथा कमर अत्यन्त पतली थी। मेखला धारण की हुई तथा अत्यन्त मोटे जंघो वाली थी। वह नील वस्त्र धारण की हुई थी।[8] उर्वशी तथा रम्भा के स्वरूप वर्णनो से स्पष्ट होता है कि अप्सराओ को अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक एव मनोहर रूपो मे कल्पित किया गया है।

मत्स्य पुराण मे अप्सराओ के प्रतिमा निर्माण तथा उनके स्थापना का उल्लेख प्राप्त होता है। कहा गया है कि अप्सराओ की प्रतिमा रूद्र, इन्द्र, जयन्त तथा लोकपालो के साथ गन्धर्वो एवं गुह्यको के समान बनानी चाहिए।[9] अप्सराओ को स्कन्द या कार्तिकेय के पार्श्व

ऋषीणामपि दिव्यानामनोव्याघातकारणम् ।
सूक्ष्मवस्त्रुधर रेजे जघन निरवद्यवत् ।।
गूढ़मुल्फधरौपादौ तामायततलाडगुली ।
कूर्मपृष्णोन्नतौ चापिशोभते किङ्कणीकिणौ।।
सुसूक्ष्मेणोत्तरीयेण मेघवर्णेन राजता।
तनुभ्रावृता व्योम्नि चन्द्रलेखेवगच्छति।।
- महाभारत, वन०, 46/6-15

8- सर्वाप्सरोवरा रम्भा पूर्णचन्द्र निभानना।
दिव्यचन्दनलिप्ताडगी मन्दराकृतमूर्धजा।।
दिव्योत्सवकृतारम्भा दिव्यपुष्प विभूषिता।
चक्षुर्मनोहरंपीनं मेखलादामभूषितम् ।।
समुद्वहन्तीजघनंरतिप्राभृतमुत्तमम् ।।
कृतैर्विशेषकैराद्रै· षडर्तुकुसुमोद्भवै: ।।
बभावन्यतमेव श्री कान्तिश्रीद्युतिकीर्तिभि ।
नील सतोयमेघाभं वस्त्र समवगुण्ठिता।।
यस्या वक्त्र शशिनिभ भ्रुवौ चापनिभे शुभे।
अरूकरिकरा कारौ करौ पल्लवकोमलौ।।
- रामायण, 7/26/14-19

9- रूद्रं शक्र जयन्त च लोकपालान्समन्तत.।
तथैवाप्सरस: सर्वा गन्धर्वगण गुह्यकान।।
- मत्स्य पुराण, 265/43

मे हाथो मे वीणा से युक्त प्रदर्शित करना चाहिए।[10] इसी प्रकार, देवराज इन्द्र की पूजा करते हुए देव, गन्धर्व तथा अप्सराओ के साथ उनके सानिध्य मे चामर छत्र धारिणी स्त्रियो के निर्माण का उल्लेख प्राप्त होता है।[11] इससे स्पष्ट होता है कि अप्सराओ के गण सहस्त्र किरणो के समान डज्जवल तथा शांत दर्शित किये जाते थे। इनकी भुजाएं लम्बी तथा कमल पुष्पो से युक्त होती थी।[12] अप्सराओ को श्वेत वर्णवाली सुन्दरी तथा देवयोषा के रूप मे वर्णित किया गया है।[13] अत. अप्सराओ का प्रदर्शन विभिन्न देवताओ के साथ किया जाता था।

अप्सराओ के नाम एवं रूप का सुस्पष्ट वर्णन भारतीय शिल्प सहिता मे प्राप्त होता है। उसमे वर्णित है कि- सिंह का मर्दन करने वाली अप्सरा को गौरी कहा जाता है।[14] जिसने अपनी कमर पर पुत्र धारण किया हो उसे चित्ररूपा,[15] नृत्यभाव से जिसका बांया हाथ कपाल मस्तक पर हो उसे चित्रिणी,[16] अभय मुद्रा वाली जिसके कक्ष में बालक हो, को गूढ़शब्दा,[17] बांए हाथ मे कमल लिए हुए नृत्य करती हुई कमल पद्म के पट वाली को पद्मिनी,[18] नग्न (मग्न) भाव से स्नान करने वाली या मग्न भाव से नृत्य करती हुई को कर्पूर मंजरी[19] आदि नामो से जाना जाता है। दायां हाथ वरद् मुद्रा युक्त, बाया हाथ नृत्य

10- पार्श्वयोर्द्दर्शयेत्तत्र तोरणे गणगुह्यकान।
माला विद्याधरांस्तद्वद्वीणावानप्सरोगण ।। - मत्स्य पुराण, 259/20

11- पूजितं देवगन्धर्वैरप्सरोगणसेवितम् ।
छत्र चामरधारिण्य स्त्रिय: पार्श्वेप्रदर्शयेत् ।। - मत्स्य पुराण, 259/68

12- सहस्त्रकिरण शान्तमप्सरोगणसंयुक्तम् ।
पद्महस्त महाबाहुंस्थापयामि दिवाकरम् ।। - मत्स्य पुराण, 265/38

13- आवाहयिष्यामि तथैवाप्सरस शुभा ।
समायान्तु महाभागा देवयोषा समोज्वला ।। - विष्णुधर्मोत्तर पुराण, 3/103/20

14- गौरी च सिहमर्दिनी । सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशकर ओ०,भारतीय शिल्प संहिता, पृ०65, बम्बई, 1975

15- चित्र रूपा स पुत्रागी। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशकर ओ०, भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65,

16- कपाले वाम हस्ता च नृत्य भावा च चित्रिणी । सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

17- अभयदा शिशुयुक्ता पद्मनेत्रा सा उच्चते। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

18- पद्महस्ते च नृत्यांगी पट्टे पद्मं च पद्मिनी। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

19- नग्न भावे कृत स्नाना नाम्ना कर्पूर मंजरी। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

मुद्रा मे मस्तक पर रखकर नृत्य करती हुई को नृत्यागना (सर्वकला),[20] पैर का श्रृंगार करती हुई, झाझर पहनती हुई, कमल जैसे लोचन युक्त, गाथा का वर्णन करती हुई को हसावली,[21] पैर का काटा निकालती हुई को शुभगामिनी[22] कहा जाता है। नृत्य करती अप्सरा को सुन्दरी,[23] हाथ मे दर्पण लेकर मुखदर्शन करती या बिंदी लगा रही हो उसे विधि-चित्ता,[24] आलस्य युक्त को लीलावती,[25] हाथ मे खड्ग ढाल धारण करके बांया पैर ऊपर किये नृत्य रत अप्सरा को मेनका[26] कहा जाता है। उत्तम अग वाली, रम्य नृत्य करती हुई को गांधारी,[27] गोलाकार (चक्र मे) नृत्य करती अंग वाली को देवशाखा,[28] बांयी ओर दृष्टि रखकर धनुष-बाण देखती देवांगना को मरीचिका,[29] सुन्दर लोचनयुक्त, अजली मुद्रा वाली, सन्मुख दृष्टि वाली देवांगना को चन्द्रावली[30] जिसके हाथ मे लेखनी हो, ताड़पत्र धारण करके लेखन करती हो तथा उसके ललाट मे चन्द्र की रेखा हो, ऐसी सदा विस्तार वाली को पत्रलेखा,[31] चक्र को माथे पर धारण करके नृत्य करती देवागना को सुगन्धा[32] हाथ मे छुरी धारण करके नृत्य से शोभायमान अप्सरा को शत्रुमर्दिनी[33] कहा जाता है।

20- नृत्यति च सर्वकला। वरदा दक्षा जणिज्ञ मस्तके वाम हस्ते च चितन मुद्रा सयुतम् । सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशकर ओ० भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65,

21- पाद श्रृगार कर्त्री च हसा कमल लोचना।
गाथा उच्चारणा वाथ।।
सर्व पठान्तर कर्ण शृगर भूषिता ।। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशकर ओ0 भारतीय शिल्प संहिता, पृ०65,

22- शुभा कंटक (गृक) निर्गता। -सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प सहिता पृ०65

23- सुन्दरी नृत्या मुक्ता च। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ०65,

24- विधिचित्ता स्वदर्पण। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ०65,

25- आलस्य च लीलावती। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प सहिता, पृ०65,

26- मेनका षड्गखेटं च नृत्यति च परस्तले।
- सोमपुरा, पदम्श्री प्रभाशंकर ओ०- भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65

27- उत्तमांगे करन्यस्ता गांधारी नाम नर्तिका। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

28- गोलचक्र नृत्य कर्त्री देवशाखा सा चोच्यते। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०,भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

29- धनुर्बाणम्यं संधाता वामदृष्टि मरीचिका। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

30- अंजलीबद्धा नर्तकी च चन्द्रावली सुलोचना। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

31- दक्षिण हस्ते कमले तात्रपत्रं च धरित्रीका।
ललाटे चन्द्ररेखा च सनाम विस्तरे सदा।। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

32- सुगन्धा च चक्रधर नृत्यं च कुर्यात। सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,

33- असि पुत्र धरा नृत्या शोभते शत्रुमर्दिनी-सोमपुरा पद्मश्री प्रभाशंकर ओ०-भारतीय शिल्प संहिता,पृ०66

दोनो हाथो मे हार धारण करके नृत्य करती अंग वाली कला की कुल सुन्दरी को मानवी (माननी),[34] अपनी पीठ दिखाकर नृत्य करती हुई जिसका मुख पीछे रहता है ऐसी नृत्यांगना को मानहंसा,[35] दाहिना पैर ऊपर रखकर दोनो हाथ मस्तक पर रखकर, विविध अंग-भंग वाली नृत्यांगना को सुस्वभावा,[36] हाथ पैर योग मुद्रा युक्त रखकर नृत्य करती हुई को भावचन्द्रा,[37] सर्वकला से नृत्य करती हुई को मृगाक्षी,[38] दाहिने हाथ से दैत्य की शिखा खीचकर उसे खड्ग से मारती हुई को को उर्वशी,[39] दोनो हाथो मे छुरी धारण करके दाहिना पैर ऊपर रखकर नृत्य करती हुई को रभा,[40] दोनो हाथो मे खड्ग धारण करके गोल भ्रमर नृत्य करती हुई नृत्यांगना को भुजघोषा,[41] मस्तक पर कलश धारण करके नृत्य करती हुई को जया,[42] पुरूष को आलिंगन करती हुई को मोहिनी[43] एक पैर ऊपर रखकर लचीले अंग से नृत्य करती हुई को चन्द्रवक्रा,[44] कांस्य मजीरा पुष्प बाण वाली कामरूपा को तिलोत्तमा[45] कहा जाता है।

दक्षिण भारतीय आगम ग्रन्थ सुप्रभेदागम (अध्याय 48) मे अप्सराओ की संख्या सात बतायी गयी है, जिनमे उर्वशी, रम्भा, विपुला तथा तिलोत्तमा प्रमुख है। ये पतली कमर

34- हारहस्ता च नृत्यांगी मानवी कुल सुंदरी। सोमपुरा, भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65,
35- पृष्ठवशोभ्दवा नृत्या मानहंसा च सुंदरी। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,
36- ऊर्ध्वपादे चर्तुमृगी स्वभाव करौ मस्तके। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,
37- हस्तपादौ योगमुद्रा भावचद्रा सुनर्तकी। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,
38- मृगाक्षी सफला नृत्या। सोमपुरा, भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65,
39- दक्ष हस्ते दैत्यशिखा दैत्यखंगन हन्ति च। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,
40- हस्तद्वयेन छूरिके धृत्या नृत्यं च कुर्वत।
ऊर्ध्वीकृत दक्षपाद नाम्ना रम्भा नर्तकी।। सोमपुरा, भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65,
41- हस्तद्वयेन खड्गे च नृत्यावर्त च कुर्वात।
भुजघोषंति नामा सा नृत्यं करोति सर्वदा।। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65,
42- शिरसि कलशं धृत्वा जयानृत्यं कुर्वीत। - सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 69-70
43- पुरूषालिगन युक्ता मोहिनी नाम्ना नर्तकी। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ०69-70,
44- लसत्सुन्दरागी नृत्या चोर्ध्वपादा चंन्द्रवक्रा। सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 69-70,
45- सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 70-71

वाली तथा पीन पयोधरो से युक्त होती है।[46] शिल्प रत्न (अध्याय 25) मे अप्सराओ को रेशमी वस्त्र पहने हुए पीन पयाधरो से युक्त मोटी जघन स्तनो वाली, पतली कमर वाली, कुछ मुस्कराती हुई तथा सुन्दर कटाक्षो वाली कहा गया है। ये अनेक प्रकार के अलकारो से युक्त भद्रपीठ पर स्थित करायी जाती है। इनकी भावमुद्रा एक समान प्रदर्शित की जाती है।[47]

पश्चिम भारत के नागरादि शिल्प ग्रंथ 'क्षीरार्णव' और 'दीपार्णव' मे अप्सराओ के बत्तीस नाम और स्वरूप प्राप्त होते है। जबकि पूर्वी भारत के कलिंग उड़ीसा के शिल्पो मे देवागनाओ की संख्या मात्र सोलह दी गयी है। एलिस बोनर ने 'शिल्प प्रकाश' मे देवांगना अलस्या के सोलह स्वरूपो का वर्णन किया है।[48] कलिग, उड़ीसा आदि के शिल्पो मे देवांगनाओ को अलस्या या देवकन्या कहा गया है। उनके स्वरूप भुवनेश्वर, कोणार्क और जगन्नाथपुरी के मन्दिरो मे और उन प्रदेशो के प्रासादो मे दिखाई देते है। 'शिल्पप्रकाश' के प्रथम अध्याय मे 297 से 400 तक के श्लोको मे उनके नाम वर्णित है। उड़ीसा के मंदिरो की नारी की सजीव मूर्तियां, सांची के तोरणो, मथुरा की कुषाणकालीन रेलिंगो की यक्षियो का उत्तरकालीन रूप है।[49]

द्रविड़ शिल्प ग्रन्थो मे कई देवांगनाओ के स्वरूपो का उल्लेख नही है जिससे यह स्पष्ट होता है कि या तो द्रविड शिल्प ग्रंथ पूर्णत: नही प्राप्त होते है या वहां देवांगनाओ की प्रधानता नही थी।

46- रम्भा च विपुला चैव उर्वशी च तिलोत्तमा।
मध्यक्षामसमायुक्ता पीनोरूजधनस्तना ॥ -सुप्रभेदागम, अध्याय 48
उद्‌धृत - राव, गोपी नाथ - एलिमेण्ट्स आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी, जिल्द 2, भाग 2, मद्रास 1914-16, पृ० 275

47- दुकूलवसनास्सर्वा: पीनोरूजघनस्तना. ।
मध्ये क्षौवादिवर्णाव तिसौम्याश्च किंचित्प्रहसितानना:॥
नानालङ्कारसंयुक्ता भद्रपीठोपरिस्थिता:।
समभडगसमायुक्तास्सप्तसङ्खचोप्सरो स्मृता.॥ - शिल्प रत्न, अध्याय 25
उद्धृत - राव, गोपी नाथ, वही, पृ० 275

48- सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 74

49- उपाध्याय, वासुदेव - भारतीय कला का इतिहास, पृ० 154

दक्षिण कर्नाटक, मैसूर के बेलूर और सोमनाथपुरम् के हयशाल शिल्प मन्दिरो मे देवागनाओ की बहुत सुन्दर मूर्तियां दिखाई देती है। इसलिए दक्षिणापथ के शिल्प ग्रथ द्रविड़ से भिन्न शैली के है। ऐसा उनकी कृति से ज्ञात होता है। उनका शिल्प अद्‌भुत है।

मध्य प्रदेश के शिल्प स्थानो मे खजुराहो के समूह मन्दिर, आदर्श है, जहां देवांगनाओ के सुन्दर चित्र शिल्पित किये गए है। उत्तर भारत मे भी ऐसे कई शिल्प-स्थापत्यो मे सुन्दर देव स्वरूप पाए जाते है, उन मन्दिरो की रचना नागरादि शिल्पो से मिलती है परन्तु वे कई विषयो मे उनसे भिन्न है। ऐसे सुन्दर प्रासादो के शिल्प ग्रंथ प्राप्य नही है। विधर्मियो के विनाशक उपद्रवो के कारण वे शिल्प ग्रथ नष्ट हो गए है।[50]

डा० दीन बन्धु पाण्डेय ने देवतार्च्चानुकीर्तन[51] (हिन्दू देव प्रतिमा विज्ञान) मे शिव को प्रणाम करते हुए एवं उनकी स्तुति करते हुए देवताओ, इन्द्र, महीपाल, लोकपाल, गणनायक, भृंगी, ऋती, भूत, बैताल, गन्धर्व, विद्याधर, किन्नर, अप्सरा, गुह्यक, नायक, गण, महेन्द्र मुनि आदि भी अंकित करने की बात कही है। उमा महेश्वर के विवरण मे तोरण पर गणो, गुह्यको मालाधारी विद्याधर एव वीणाधारी अप्सराओ को बनाए जाने की बात कही गयी है। अत: भारतीय कला मे अप्सराओ का यही रूप एवं स्थान दृष्टिगोचर होता है। जो इसी अध्याय मे द्रष्टव्य है।

अब भारतीय कला के पुरातात्विक स्त्रोतो के अवलोकन द्वारा अप्सरा के ऐतिहासिक सर्वेक्षण की आवश्कयता है। अप्सरा का तादात्म्य मौर्य कालीन लोक कला के अन्तर्गत निर्मित यक्षी मूर्तियो से किया जाता है। यद्यपि लोक जीवन मे यक्ष एव यक्षियो की पूजा महात्मा बुद्ध के पूर्व से प्रचलित थी।[52] ऋग्वेद,[53] अथर्ववेद,[54] गोभिल गृह्यसूत्र[55] आदि

50- सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशंकर ओ० - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 75
51- पाण्डेय, दीन बन्धु - देवतार्च्चानुकीर्तन - विद्या किशोर निकेतन वाराणसी, 1978
52- अग्रवाल, वी० एस०-भारतीय कला पृ० 35-36
53- ऋग्वेद - 7/61/5
54- अथर्ववेद - 10/8/15
55- गोभिल गृह्यसूत्र - 3/4/28

वैदिक ग्रथो मे यक्ष पूजा के उल्लेख प्राप्त होते है। लोक जीवन मे गन्धर्व-अप्सरा और यक्ष-यक्षी का साहचर्य प्रचलित था। इनका चित्रण सर्वप्रथम प्राक्-मौर्य कला मे प्राप्त होता है।

प्राक्-मौर्य युगीन यक्षी मूर्तियो मे बेसनगर से प्राप्त विशाल यक्षी मूर्ति प्रथमत. उल्लेखनीय है, जो अपने सम्मुख दर्शन और भंगहीन मुद्रा मे सीधे खड़े होने के कारण विशिष्ट है। यह मूर्ति छः फुट सात इंच ऊँची है, इसकी भुजाए टूटी है। उन्नत स्तनो के मध्य कई लड़ियो के मुक्ताहार से मस्तक के केश भी आच्छादित है। कटि मे अनेक लड़ियो की मेखला,मे पाजेब तथा कानो मे भारी कुण्डल है। पैरो तक साड़ी की चुन्नटे तथा किनारा शिला के आधार तक लटकता हुआ दृष्टिगत होता है। यक्षी की मूर्तियां अत्यंत मांसल, सुपुष्ट तथा आकर्षक रूप से रूपांकित होती है। वर्तमान मे यह मूर्ति भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता मे सुरक्षित है। इसकी शैली और आभूषणो की साज सज्जा का प्रभाव भरहुत और विशेषकर सांची की यक्षी मूर्तियो को प्राप्त हुआ जान पड़ता है।[56]

मौर्य कालीन कला मे पटना के दीदारगज मोहल्ले से प्राप्त चवरधारी अथवा यक्षी[57] मूर्ति भारतीय शिल्पकला की एक विशिष्ट नारी मूर्ति है।[58] पटना सग्रहालय मे सुरक्षित आदमकद यह प्रतिमा रूप की अभिव्यक्ति, आकृति की पूर्ण रेखा और कला की सूक्ष्मता का अद्भुत आदर्श प्रस्तुत करती है। इसकी बांयी भुजा खण्डित है किन्तु दाहिने हाथ मे यह चामर उठाए हुए है। इस पर मौजूद चमकदार ओप मौर्य कला के सुन्दरतम नमूनो मे से है। वासुदेव शरण अग्रवाल का कहना है कि सौन्दर्य के उपमान रूप मे निःसन्देह इसी स्त्री-सौन्दर्य के आदर्श को ध्यान में रखकर महाभारत तथा रामायण मे यक्षियो का उल्लेख आया है।[59] स्पूनर ने इस मूर्ति के ऊर्ध्व भाग की संरचना की प्रशंसा करते हुए बताया है कि इस नारी की रचना मे आधुनिक नियमों का पालन हुआ है।[60] निहार रंजनराय के

56- अग्रवाल, वी० एस० - भारतीय कला, पृ० 126
57- द्रष्टव्य चित्र संख्या -1
58- स्मिथ, वी० ए० - ए हिस्ट्री आफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सिलोन, प्लेट 9 ए, आक्सफोर्ड, 1930
59- अग्रवाल, वी० एस० - भारतीय कला, पृ० 125
60- स्पूनर - जर्नल आफ दि बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, भाग 5, पृ० 1-7

अनुसार नगर नवेली की सम्भवत यह पहली मूर्ति है। उसके सजीव स्वरूप को इस मूर्ति मे अंकित किया गया है। आगे चलकर भारतीय कला मे रमणी का यही रूप अमर हुआ है।[61]

इसी प्रकार मथुरा जिले मे झीग का नगरा गाव से प्राप्त यक्षी, पटना जिले से प्राप्त दो मुँही यक्षी तथा मेहरौली से प्राप्त यक्षी[62] मौर्य कालीन प्रतिमाओ का आदर्श प्रस्तुत करती है। अत· ये मौर्य कालीन लोककला के अन्तर्गत निर्मित यक्षियो की मूर्तिया अप्सराओ का प्रतिरूप प्रस्तुत करती है क्योकि सम्भवत. ये दोनो तत्कालीन समाज मे देवलोक की नर्तकियां समझी जाती थी।

अप्सराओ का प्रतिबिम्बन भरहुत स्तूप के एक दृश्य पर प्राप्त होता है।[63] जिसमे कामदेव की मृत्यु के बाद देवो द्वारा आनन्द मनाए जाने का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। इसमे मिश्रकेशी, अलबुंषा, सुभ्रदा तथा पद्मावती नामक अप्सराएं नृत्य कर रही है। इनकी मुखमुद्रा तथा भाव-भंगिमा बड़ी सुन्दर दिखालाई देती है।[64] यह प्रतिमा ऊपर से खण्डित है परन्तु इसका बहुत कम भाग लुप्त है, अभिलेख पूर्णत: सुरक्षित है। इसके दांयी ओर चार स्त्रियो की प्रतिमाएं है और एक बालक नृत्य कर रहा है। ये सभी विभिन्न मुद्राओ में है तथा इनके हाथ विभिन्न दिशाओ मे है। कनिघम के अनुसार मध्य मे बायी ओर बैठी आठ स्त्रियो की प्रतिमाएं है। इनमे से एक के हाथ मे मजीरा है, चार सात तारो वाली वीणा बजा रही है, जबकि तीन बिना किसी वाद्ययन्त्र के गा रही है।[65] कनिंघम ने अभिलोख के आधार पर चार अप्सराओ का नामोल्लेख किया है। बांयी ओर ऊपर अवस्थित प्रतिमा को सुभद्रा अचहरा (सुभद्रा अप्सरा), दांयी ओर पद्मावती अचहरा (पद्मावती अप्सरा) दाहिनी आरे नीचे की प्रतिमा को मिसकोसी अचहरा (मिश्रकेशी अप्सरा) और बांयी ओर अलंबुषा

61- राय, निहार रजन - नन्द मौर्य युगीन भारत (सं० नीलकण्ठ शास्त्री), पृ० 430
62- अग्रवाल, वी० एस० - भारतीय कला, पृ० 122-123
63- अलेक्जेण्डर कनिंघम- भरहुतस्तूप, फलक 15, लदन, 1878
64- बनर्जी, जे० एन० - डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइक्रोग्राफी, पृ० 353-354, कलकत्ता, 1956
65- कनिघम - भरहुत स्तूप, पृ० 27, लन्दन, 1878

अचहरा (अलंबुषा अप्सरा) की प्रतिमाए है।[66] बौद्ध वेदिका के दो स्तम्भो के नीचे एक नाम पट्ट लगा है जो 'सादिकस मद तुर देवानाम्' प्रतीत होता है।[67]

यह दृश्य देवताओ के नृत्य गीत का सट्टक उत्सव है। 'साडिक' सट्टक नाम के वसन्तोत्सव का प्राकृत रूप था, वही पीछे चर्चरी कहलाया। सम्मद हर्षाभिनय की संज्ञा थी, तुरं का अर्थ तूर्य या वृन्दवाद्य माना गया है।[68] कनिंघम के अनुसार इसका संकेत उन दृश्यो की ओर है जिसका अभिनय इन्द्र के स्वर्ग मे देवताओ के समक्ष किया जाता था।[69] अत· कहा जा सकता है कि तीसरी-दूसरी शताब्दी ई०पू० मे अप्सराए देवलोक की नर्तकी के रूप मे भारतीय कला मे स्थान प्राप्त कर चुकी थी।

शुंगकालीन कला के अन्तर्गत अप्सराओ का चित्रण तत्कालीन लोक कला के अन्तर्गत प्राप्त होते है। इस काल मे लोक कला के रूप मे नृत्य एंव वाद्यो का पर्याप्त विकास हो चुका था। यक्ष-यक्षिणी, गन्धर्व-अप्सरा, किन्नर-किन्नरी आदि इस लोक नृत्य मे पर्याप्त रूप से चित्रित होने लगे थे।[70] भरहुत स्तूप के तोरण द्वार के स्तम्भो पर चन्द्रायक्षी, चुलकोका देवता तथा सुदर्शना यक्षी जैसी सुन्दर स्त्री मूर्तियो की रचना की गयी है।[71] जिनमे एक तरफ गात्र यष्टि की पूरी शोभा है तो दूसरी ओर केश विन्यास, अनेक प्रकार के आभूषणो और वस्त्रो द्वारा सौन्दर्य विधान का अच्छा विकास दृष्टिगत होता है।

शिल्प रत्न मे वर्णित है कि अप्सरा दुकूल पहने, क्षीण कटि वाली, प्रसन्न चित्त, स्मित हास्य, अनेक आभूषणो से युक्त, भद्रपीठ पर समभंग मे खड़ी होनी चाहिए।[72] नाट्य शास्त्र

66- सुभद अच्छरा
मिसकोस अच्छरा
पद्मावति अच्छरा
अलबुस अच्छरा -कनिंघम, भरहुत स्तूप, फलक 54, नं० 33, 34, 35, 36,
67- सादिक सम्मदन तुरम् देवानम् । - कानिंघम, भरहुत स्तूप, पृ० 124, फलक 54, पंक्ति 32-36
68- अग्रवाल, वी० एस० - भारतीय कला, पृ० 148
69- कनिघम - भरहुत स्तूप, पृ० 27
70- पुरी, वी० एन० - इण्डिया इन पतजलि, पृ० 230, बम्बई, 1957
71- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 2
72- शिल्प रत्न - खण्ड 2, पृ० 166

मे वर्णित है कि अप्सरा तथा यक्षी के आभूषण रत्न से बनने चाहिए तथा अप्सरा का केश विन्यास भव्य होना चहिए।[73] भरहुत के स्तूप के तोरण द्वार पर निर्मित यक्षी मूर्तियो मे ये व्रिशेषताएं दृष्टि गोचर होती है।

इसी प्रकार भरहुत से प्राप्त सुधर्मा देवसभा के प्रसेनजित् स्तम्भ पर एक अप्सरा[74] का प्रतिबिम्बन प्राप्त होता है। यह कलकत्ता संग्रहालय मे सुरक्षित है। यह नृत्यरत मुद्रा मे स्थित है। इसका शारीरिक गठन, भाव भगिमा, मधुर मुस्कान का चित्रण अत्यन्त सजीव जान पड़ता है।

अप्सरा का दाहिना हाथ तथा दाहिना पैर नृत्य की मुद्रा मे पैर उठा हुआ चित्रित है। बांया पैर शिलासन पर स्थापित है। अप्सरा कमर के नीचे धोती पहने हुए है। उन्नत स्तनो के बीच मे माला की लड़ियां लटक रही है। मूर्ति मे एक गति दिखाई पड़ती है, बांह मे दुपट्टा लपेटे हुए, उसके केश विन्यास अत्यन्त भव्य है। दोनो पैरो के पास खड़ी दो सहायिकाएं प्रदर्शित की गयी है। अत· यह मूर्ति शिल्प रत्न एव नाट्य शास्त्र मे वर्णित अप्सरा, यक्षी, मूर्तिया से साम्य रखती है।

भरहुत के एक दृश्य मे अप्सराओ को गायन-वादन-नृत्य मे तत्पर दिखाया गया है तथा एक अन्य दृश्य मे स्त्रियो के सामूहिक नृत्य को चित्रित किया गया है।[75] इस काल की मृण्मय मूर्तियो मे दो नर्तकियो तथा एक यक्ष की मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमे यक्ष को सुषिर वाद्य बजाते हुए अंकित किया गया है।[76]

सांची, भरहुत, अजन्ता आदि स्थानो पर इस समय लोक संगीत की कलात्मक भावना दृष्टिगत होती है। इन्द्रशैल गुहा के एक दृश्य मे वीणा का स्पष्ट चित्रण प्राप्त होता है।[77] अजन्ता की 10 नं० गुहा में राजा, बोधिवृक्ष की पूजा करते हुए चित्रित है, जिसमे

73- नाट्य शास्त्र - 21, 54-56
74- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 3
75- पुरी, वी० एन० - इण्डिया इन पतजलि, पृ० 252
76- अग्रवाल, वी० एस० - मथुरा संग्रहालय, आकृति 32,34,35,40 अहमदाबाद, 1964
77- कनिंघम - भरहुत स्तूप, चित्र 16,आकृति - 1

स्त्रियो द्वारा गायन-वादन एव नृत्य का प्रदर्शन किया जा रहा है। तीन स्त्रिया नृत्य कर रही है, दो के हाथो मे शहनाई है, लम्बे सुषिर वाद्य है, तथा अन्य तालिया बजाकर सगति कर रही है।[78] सांची के एक दृश्य मे नृत्य के साथ मृदंग तथा वीणा का अकन प्राप्त होता है। वीणा, आधुनिक तम्बूरे के समान स्कन्ध पर स्थापित किया गया है।[79] कुषाण कालीन शिल्प मे इन्द्र तथा बुद्ध की भेट का चित्रण प्राप्त होता है। मथुरा की इन्द्रशैल गुहा मे बुद्ध के दक्षिण ओर हाथ मे वीणा धारण किये हुए पचशिख गन्धर्व चित्रित है, जिसका अनुकरण छ. अप्सराएं कर रही है।[80] सम्भवत इसी दृश्य का अकन तख्त-ए-बहि के उत्खनन से प्राप्त प्रस्तर खण्ड पर प्राप्त होता है जिसमे पंचशिख गन्धर्व वीणावादन कर रहा है एवं स्त्रियां नृत्य कर रही है।[81] अत· द्वितीय-प्रथम शती ई०पू० मे गीत, नृत्य तथा वाद्य लोक कला मे विशेष रूप से प्रचलित हो गए थे, जिनको यक्ष, गन्धर्व, किन्नर तथा अप्सराओ के साथ जोड़ दिया गया था।

शुंगकालीन अजन्ता के एक चित्र मे गन्धर्व के परिवार का प्रतिबिम्बन प्राप्त होता है, जिसमे गन्धर्व तथा अप्सराएं नृत्य कर रहे है। अप्सराओ के हाथ मे कांस्य ताल तथा तिर्यक वंशी अंकित है। एक अप्सरा के कन्धे से आनन्द वाद्य लटकता हुआ प्रदर्शित है, अनुचर के हाथ मे तुम्बी युक्त वीणा स्पष्टत परिलक्षित होती है।[82] इसी प्रकार अमरावती तथा नागार्जुनकोण्डा के स्तूपो पर उड़ान भरने वाली आकृतियां पायी जाती है जिसका समीकरण गन्धर्वो के साथ स्थापित किया गया है।[83] इन उड़ान भरने वाली आकृतियो की शारीरिक भावभंगिमाओ मे गति एवं लय दृष्टिगोचर होता है। इनके वस्त्र एंव केश उड़ते हुए दिखाये गए है। इन्हे देखकर लगता है कि प्रतिमाएं वास्तव में उड़ रही हैं। यह शतपथ ब्राह्मण मे प्राप्त अप्सराओ के जलीय पक्षी होने की धारणा का भी परिचायक है।

78- याजदानी, जी० - हिस्ट्री आफ दक्कन, खण्ड 7, पृ० 215, दिल्ली, 1977
79- बरूआ, बी० एम० - भरहुत, आकृति 9, कलकत्ता, 1934-37
80- ऐनुअल रिपोर्ट - आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, 1909, 1910, आकृति 27 ब, पृ० 74
81- ऐनुअल रिपोर्ट - वही, 1907, आकृति 44 ब, पृ० 141-142
82- जी० याजदानी - अजन्ता, खण्ड 1, पृ० 29, आकृति 24
83- फाउचर ए० - गन्धर्वाज एण्ड किन्नराज इन इण्डियन आइक्नोग्राफी, पृ० 32

इन कलाकृतियो के आधार पर यह निष्कर्षित होता है कि प्राचीन लेखो मे संगीत का किसी न किसी रूप मे उल्लेख प्राप्त होता है। इसीलिए भरहुत स्तम्भ पर संगीत का प्रदर्शन पाया जाता है, जहां अप्सराएं नृत्य कर रही है तथा अनेक वाद्य बज रहे है। दक्षिण भारतीय कला मे भी ऐसा प्रदर्शन पाया गया है। अमरावती कला मे बोधिसत्व के सम्मुख तुषित स्वर्ग मे अप्सराएं नृत्य कर रही है एवं उनसे संसार मे अवतरित होने का आग्रह किया जा रहा है।[84] अत: कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय शिल्प एव मूर्तिकला मे अप्सराओ का अंकन गन्धर्वो के साथ नर्तकी के रूप मे कला के शुभारम्भ के साथ ही प्रारम्भ हो गया। प्राचीन भारत मे गान्धर्व विद्या विशेष रूप से प्रचलित थी। इसका प्रमाण हाथी गुफा अभिलेख भी है जिसमे कलिंग राजा खारवेल को गंधर्ववेदबुध तथा नृत्यगीत वादित मे निपुण बताया गया है।[85]

भारतीय कला के अन्तर्गत अप्सराओ का चित्रण मृण्मूर्तियो मे भी प्राप्त होता है। समरांगणसूत्रधार[86] और एस० सी० काला की पुस्तक 'टेराकोटा इन इलाहाबाद म्युजियम'[87] मे अप्सराओ के शारीरिक भाव भंगिमाओ का वर्णन किया गया है। नाट्य शास्त्र तथा शिल्प रत्न का वर्णन है कि अप्सरा मृण्मूर्तियां प्राय· नग्न होती है जबकि प्रस्तर मूर्तियां वस्त्र से ढकी रहती है। प्राचीन इतिहास संस्कृति एंव पुरातत्व विभाग, इ०वि०वि० इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'हिस्ट्री टू प्री हिस्ट्री' मे कौशाम्बी से प्राप्त मृण्मूर्तियों[88] का उल्लेख किया गया है। वहां से शुंगकालीन स्त्री लघु मृण्मूर्तियो का एक समूह प्राप्त हुआ है जिसमे मिट्टी से बनी हुई पंककुड का चित्रण है, जिसे अप्सरा का प्रतिरूप माना जा सकता है। इन स्त्री मृण्मूर्तियो को कमर के नीचे से लेकर घुटने तक वस्त्र पहनाया गया है तथा ऊपरी भाग

84- पचमुखी - गन्धर्वाज एण्ड किन्नराज इन इण्डियन आइक्नोग्राफी, पृ० 33

85- ततिये पुनवसे गन्धववेद-बुधो दपनट
गीतवादितसंदनाहि उसवसमाजकारापनाहिचकीडापयति नगरिं। - एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 20, पृ०79 कलकत्ता, 1982

86- समरांगणसूत्रधार - अध्याय 77

87- काला, एस० सी० - टेराकोटा इन इलाहाबाद म्युजियम, पृ० 15

88- शर्मा, जी० आर० - हिस्ट्री टू प्री हिस्ट्री, पृ० 53

पूर्णरूपेण नग्न है, जिसे ढंकने के लिए ढेर सारे आभूषणो का प्रयोग किया गया है। अर्थात् यहा की लघु मृण्मूर्तियो मे स्त्रियो के वस्त्र एव आभूषण का चित्रण प्रमुख विशेषता है। यहां से प्राप्त हारीती एव लक्ष्मी को पककुड के मृण्मूर्तियो से घिरा प्रदर्शित किया गया है, जिनके सम्पूर्ण शरीर को आभूषणो, बाजूबन्द, कमरबन्धनी और चूड़ियो से सजाया गया है।[89]

अप्सराओ का भारतीय कला के अन्तर्गत प्रतिबिम्बन अत्यन्त व्यापक रूप से गुप्तकालीन कला मे दृष्टिगोचर होता है। आनन्द कुमार स्वामी के अनुसार गुप्तकालीन कला शैली पूर्णत· स्वाभाविक विकास चक्र की चरमोन्नति को प्रकट करती है।[90] इस युग मे धर्म, संस्कृति और कला के तत्वो का अपूर्व समन्वय दृष्टिगोचर होता है। गुप्त कला ब्राह्मण धर्म, बौद्ध धर्म एंव जैन धर्म से अनुप्राणित है परन्तु धार्मिक सहिष्णुता के कारण इसका स्वरूप धर्म निरपेक्ष बन पड़ा है। गुप्त कालीन कला के केन्द्रो मे मथुरा, सारनाथ, पाटिलपुत्र, उदयगिरि, देवगढ़, भीतरगांव और मन्दसौर आदि प्रमुख थे, इनके अतिरिक्त अंजता, एलोरा तथा महाबलिपुरम् जैसे चित्रकला से सम्बन्धित स्थल भी महत्वपूर्ण है। गुप्तकालीन चित्रकला मे बुद्ध के चित्र, धर्म चक्र, मरणासन्न राजकुमारी, राज्याभिषेक, प्रेम प्रसंग के दृश्य और गन्धर्व, अप्सरा तथा जातक कथा के चित्र प्रमुख है। गुप्तकालीन मूर्तिकला तथा चित्रकला मे अप्सराओ का अकन वैदिक देव मण्डल की नर्तकियो एव सगीत कला के विशेषज्ञो के रूप मे प्राप्त होता है।

देवकली ग्राम से, गुप्तकालीन एक सूर्य प्रतिमा प्राप्त हुई है जिसके ऊपर दो अप्सराएं पुष्पाहार लेकर उड़ती हुई प्रदर्शित की गयी है।[91] मत्स्य पुराण मे सूर्य के सम्मुख अप्सराओ के नृत्य गीत के प्रदर्शन का उल्लेख प्राप्त होता है।[92] इसी प्रकार विष्णु पुराण मे भी विवरण मिलता है कि सूर्य के रथ के सामने गन्धर्व गण यशोगान करते है, अप्सराएं नृत्य करती

89- शर्मा, जी० आर० - हिस्ट्री टू प्री० हिस्ट्री, पृ० 30

90- स्वामी, आनन्द कुमार - इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० 71

91- भट्टाशाली, एन० के० - आइक्नोग्राफी आफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचर इन ढ़ाका म्युजियम, प्लेट 47, पृ० 161, ढ़ाका- 1929

92- गन्धर्वाश्चाप्सरश्चैव गीतनृत्यैरूपासते। - मत्स्य पुराण, 126/26

हुई रथ के आगे-आगे चलती है।[93]

अत पौराणिक विवरणो के अनुसार सूर्य के साथ अप्सराओ का उल्लेख प्राप्त होता है, जिनका प्रतिबिम्बन कला मे भी दृष्टिगत है। एक और सूर्य प्रतिमा के ऊपर दोनो तरफ पुष्पाहार लेकर उड़ती दो अप्सराएं चित्रित है जिसके शीर्ष भाग पर भयानक राक्षस आकृति बनी हुई है।[94] अत· अप्सराओ का चित्रण सुन्दर परिचारिकाओ के रूप मे प्राप्त होता है।

सोडानी से एक शिलाखण्ड प्राप्त हुआ है जो ग्वालियर सग्रहालय मे सुरक्षित है, उस पर आकाश मे उड़ने वाले गन्धर्व तथा अप्सराओ की मूर्तिया उत्कीर्णित है। सारनाथ से प्राप्त गुप्त युगीन शिल्प मे स्त्री नर्तकी का चित्र प्राप्त हुआ है जो भावपूर्ण हस्तमुद्रा के साथ नृत्यरत दिखाई देती है। यह सम्भवत· किसी अप्सरा का चित्र है। ग्वालियर के पवैया नामक स्थान से प्राप्त शिल्प मे अन्त:पुर मे प्रचलित संगीत का चित्र अंकित है। नृत्यागना ललित मुद्रा मे सलग्न है, जिसके साथ वाद्यवृन्द के साथ संगति की जा रही है, जिसमे एक वंशी, दो वीणा तथा दो अवनद्ध वाद्य चित्रित है।

गुप्तकालीन संगीत के दृश्य अजन्ता के भित्ति-चित्रो तथा शिल्पो से उपलब्ध होते है, जिनसे तत्कालीन नृत्य तथा वाद्यो के आकार-प्रकार की जानकारी उपलब्ध होती है। अजन्ता के एक चित्र मे तीन स्त्रियो को गान करते हुए अकित किया गया है तथा संगति वाद्य के रूप मे ढ़ोलक चित्रित किया गया है। जिससे अप्सरा रूपी नृत्यांगना का आभास प्राप्त होता है। गुफा नं० 17 के एक भित्ती चित्र मे मजीरा बजाती हुई अप्सराओ का एक समूह दिखाया गया है वे साड़ियां पहनी हुई, कमर बन्ध बांधे हुए है उनके दुपट्टे पीछे फंहराते हुए दिखाई देते है।[95] गुफा नं० 17 मे ही एक अप्सरा का सिर एक बौद्ध संघ के बरामदे मे चित्रित किया गया है जिसको स्टेला क्रैमरिश ने अपनी पुस्तक 'दि आर्ट आफ

93- स्तुवन्ति चैनं मुनयो गन्धर्वोगीयते पुर।
नृत्यन्त्यप्सरसो यान्ति सूर्यस्यानु निशाचरा:॥ - विष्णुपुराण, 2/11/16

94- चन्दा, आर० पी० - मेडिवल इण्डियन स्कल्पचरस इन दि ब्रिटिश म्युजियम, पृ० 67, प्लेट 20, लन्दन, 1936

95- हेरिपम - अजन्ता फ्रेस्कोज, गुफा 17, प्लेट 2

इण्डिया' मे उद्धत किया है। गुफा नं० 1 की लेण मे सिद्धार्थ के प्रव्रज्या के साथ सगीत प्रदर्शन चित्रित किया गया है। इसमे अर्द्धविहंगाकार किन्नर सरोद के समान वीणा तथा अन्य वाद्यो को बजाकर हर्षोल्लास की अभिव्यक्ति कर रहे है। इसी गुफा मे महाजन जातक की कथा चित्रित है जिसमे अवरोध सगीत का दृश्य दिखाया गया है। नृत्यागना, भाव भगिमा मे निमग्न है, नृत्य के साथ बीणा, वंशी, कांस्य, मृदग तथा ढोलक जैसे वाद्य बजाए जा रहे है।[96] इन चित्रणो से ज्ञान होता है कि इस समय गान्धर्व विद्या के अन्तर्गत अप्सराओ का विशेष रूप से प्रचार था।

बाघ गुहा के भित्ती चित्रो मे स्त्रियो का सामूहिक तथा मण्डलाकार नृत्य अंकित है, ज़िसमे मुख्य नर्तकी के चारो ओर नर्तकियां गीत, वाद्य नृत्य मे संलग्न है।[97] गुफा न० 5 के भित्ती चित्र मे गायिकाओ का सामूहिक नृत्य गीत का अंकन है।[98] हरिवंश पुराण मे इस प्रकार के सामूहिक नृत्य का उल्लेख प्राप्य है जिसे हल्लीसक या छलिक नृत्य कहा गया है जिसमे श्रीकृष्ण वंश वाद्य के साथ हल्लीसक नृत्य रहे थे अर्जुन मृदग बजा रहे थे तथा अप्सराएं अन्य वाद्य बजा रही थी। आसारित के बाद अभिनय का अर्थ तत्व का ज्ञान रखने वाली रम्भा नामक अप्सरा उठी जो अपने अभिनय कला के लिए विख्यात थी।[99] भूमरा के शिव मन्दिर में भी संगीत के कुछ चित्र उत्कीर्ण किये गए है जिसमे गीत, नृत्य के साथ श्रृंग, हुडुक्क, शहनाई, ढोल तथा वीणा आदि वाद्यो के चित्र अंकित है।[100] इसी प्रकार औरगाबाद की गुहा नं० 7 मे सात संगीतकारो की संगीत आराधना का अकन है। जिसमे नृत्यांगना के चारो ओर कास्य, वंशी, मृदग तथा ढोलक आदि वाद्य बजाए जा रहे है।[101] इस चित्र से यह ज्ञात होता है कि बौद्ध मठ की पूजा अर्चना के साथ यह सामूहिक संगीतायोजन

96- याजदानी, जी० - हिस्ट्री आफ दक्कन, खण्ड-1, भाग 8, प्लेट 12-13
97- मोती चन्द्र - प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 230, प्रयाग सं० 2007
98- बाघ की गुफाएं - एम० डी० खरे, म० प्र० ग्रंथ अकादमी, 1991
99- हरिवंश पुराण - 89/68-69
100- मोती चन्द्र - प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 204, आकृति 343-46
101- याजदानी, जी० - अजन्ता, भाग 1, पृ० 123

किया जा रहा है, जिसमे नर्तकी की कल्पना किसी अप्सरा के रूप मे किया गया है। अत यह मान्यता दृढ़ होती है कि गुप्तकालीन कला मे अप्सराए नर्तकी के रूप मे स्थापित हो चुकी थीं।

गुप्तकालीन अभिलेखो मे भी प्राचीन भारत मे प्रचलित गांधर्व विद्या का उल्लेख प्राप्त होता है, जिसमे गन्धर्व तथा अप्सराए क्रमश गायक एव नर्तकी माने जाते थे। समुद्रगुप्त के प्रयाग-प्रशास्ति लेख मे राजा के सगीत प्रेम का वर्णन प्राप्त होता है। वह नारद से भी वीणावादन मे दक्ष माना गया है।[102] जिससे उपयुक्त विद्या का सकेत प्राप्त होता है। आदित्य सेन के अपसढ़ अभिलेख मे कहा गया है कि मौखारि नरेश दामोदर गुप्त युद्ध मे, हूणो की सेनाओ को ऊपर फेकने वाले, आगे बढ़ते हुए शक्तिमान हाथियो की घटा का विघटन करते हुए मूर्छित हो गया (अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हुआ), तथा पुन: स्वर्ग मे जाकर (अमुक अथवा अमुक) मेरी है, यह कहते हुए सुरवधुओ के बीच चयन करते हुए उनके पाणिपकजो के सुखद स्पर्श द्वारा चेतन हुआ।[103] इससे अप्सरा का पौराणिक रूप मानस पटल पर उपस्थित हो जाता है।

गुप्तो के बाद अप्सराओ की मूर्तियो का निर्माण भारतीय कला मे पूर्व मध्यकाल मे भी निरन्तर होता रहा। जैसे बिहार मे रोहतास के मुण्डेश्वरी मन्दिर से सातवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति प्राप्त हुई है, जो पटना सग्रहालय मे सुरक्षित है। यह अप्सरा सम्पूर्ण पटिया पर उत्कीर्णित है जो लीला की भगिमा मे प्रदर्शित है, उसके हाथ मे पान पात्र है। यद्यपि यह मूर्ति काफी क्षतिग्रस्त है तथापि केश विन्यास, अधोभाग की साड़ी, कानो मे कर्णफूल, बाहो मे कंगन स्पष्टत: परिलक्षित होते है, इसे भद्रपीठ पर स्थापित किया गया है। तथापि

I02- गंधर्व ललितैव्रीडितमिदशपति गुरूतुम्बरू नारदाये। - अग्रवाल, वासुदेव शरण प्राचीन भारतीय अभिलेख पृ० 312

103- यो मौखरे· समितिषू द्वतहूण सैन्या।
वल्गद्घटा विघटयन्नुरूवारणानाम् ।
सम्मूच्छित. सुखधूर्वरयन्ममेति।
तत्पाणिपकज सुखस्पर्शाद्विबुद्ध । -एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 37, पृ० 185, दिल्ली, 1985

अप्सराओ का विस्तृत विवरण खजुराहो की मूर्तिकला मे प्राप्त होता है।

खजुराहो मध्य प्रदेश के छतरपुर जनपद के जिला मुख्यालय से 27 मील पूर्व की ओर स्थित है। इसके समीप का भू-प्रदेश आज भी अपनी सास्कृतिक गौरव की गाथा गाता हुआ प्रतीत होता है। आज भी 20-25 मन्दिरो का समूह अच्छी स्थिति मे प्राप्य है। खजुराहो की मूर्तिकला पर कला समीक्षको ने सरचना शैली और भाव सबोध की दृष्टि से व्यापक विचार किया है। खजुराहो मे वैष्णव, शैव, शाक्त और जैन धर्म से सम्बन्धित मन्दिर है। यहा की सम्पूर्ण मूर्तियो को कृष्णदेव ने पांच वर्गों मे विभाजित किया है- प्रथम वर्ग देवी देवता की मूर्तियो का है, जो समभंग मुद्रा मे खड़ी है। दूसरा वर्ग सहायक देवताओ का है, जिनमे विद्याधर, नाग, गण, दिक्पाल आदि है। तीसरा वर्ग अप्सराओ या सुन्दर नारी मूर्तियो का है। चौथा वर्ग धार्मिक विषयो से असम्बद्ध मूर्तियो का है। जिनमे घरेलू विषयो गुरू-शिष्य, नर्तक, गायक, शिकार, सेना-प्रयाण तथा काम भाव से युक्त स्त्री पुरूष की मूर्तिया है तथा पांचवे वर्ग मे पशुपक्षी, बेलबूटे, प्राकृतिक दृश्य आदि रखे गए है।[104]

अप्सराओ की मूर्तियां खजुराहो मन्दिरो की जघाओ, रथिकाओ स्तम्भो और दीवारो आदि पर अंकित है। लक्ष्मण मन्दिर की दक्षिणी वाह्य भित्ति पर उत्कीर्ण अप्सरा की प्रतिमा बड़ी सुन्दर है। कण्ठ मुक्ताहारो से भरा है, कटि मेखला मे अनेक लड़े है। अप्सरा अपना दाहिना हाथ पीछे किये है और उसका बांया हाथ दाहिने वक्ष स्थल के समीप है।[105] लक्ष्मण मन्दिर के ही वाह्य पश्चिमी भित्ति पर एक अप्सरा उत्कीर्णित की गयी है। इसके दोनो हाथ ऊपर की ओर उठे हुए है। शरीर अगडाई के कारण तिरछा प्रतीत होता है।[106] कन्दारिया महादेव मन्दिर पर नेत्रो को बन्द करके शान्त मुद्रा मे खड़ी दो अप्सराओ की प्रतिमाएं प्राप्त हुई है। पहली अप्सरा के केश किसी वस्तु से ढ़के है, शरीर पर मोतियो के आभूषण दिखाए

104- कृष्णदेव - दी टेम्पुल आफ खजुराहो इन सेन्ट्रल इण्डिया
एशियन इण्डिया, नं० 15, पृ० 63-64, नई दिल्ली, 1987

105- विद्या प्रकाश - खजुराहो, प्लेट 35, बम्बई, 1967

106- वही- प्लेट 39

गए है। दूसरी अप्सरा खड़ी है जिसके कटि मे मेखला की लड़ी घुटनो से नीचे तक लटक रही है।[107] आदिनाथ मन्दिर मे एक नृत्यरत अप्सरा की प्रतिमा प्राप्त हुई है।[108] पार्श्वनाथ मन्दिर मे एक आख मे अंजन लगाती हुई[109] तथा एक पैर से काटा निकालते हुए एक दूसरी अप्सरा की प्रतिमा प्रदर्शित की गयी है।[110] ये सभी प्रतिमाए सदैव नृत्य वाद्य मे रत दिखाई गयी है।

खजुराहो के प्राय: सभी जैन मन्दिरो पर अप्सरा का कलात्मक अंकन किया गया है।[111] इसमे अप्सराओ और नायिकाओ की वे समस्त मूर्तियां सम्मिलित है जो विभिन्न भाव भगिमाओ मे निर्मित की गयी है। यद्यपि इनमे नग्नता दृष्टिगत होती है तथापि मुद्राओ एंव भाव-भंगिमाओ की दृष्टि से कलात्मक उत्कृष्टता को अभिव्यक्त करती है। कही अप्सरा एक लज्जावान स्त्री की भांति अंकित है, जो अपने प्रेमी को आते देखकर अपने मुख दोनो हाथो से ढंक लेती है, तो कही अपने प्रेमी को गर्व पूर्वक निहारती है। एक जगह सद्यस्नाना अप्सरा का अकन है तो दूसरी जगह एक अप्सरा अपने शरीर को घुमाकर अपने अंगो का अवलोकन कर रही है। कुछ अप्सरा मूर्तिया कही अपने वक्ष को स्पर्श करती हुई प्रदर्शित है तो कही बांसुरी बजाते हुए, नृत्य करते हुए, प्रेमी को पत्र लिखते हुए, अपने पैरो से कांटा निकालते हुए, दर्पण मे मुख देखते हुए अंकित है।[112] ये सभी मूर्तियां अत्यन्त ही जीवन्त है तथा मन्दिरो के वाह्य और आन्तरिक दीवारो पर गर्भगृह मे भक्तो के मध्य पूजा गृह मे पूजा करते हुए अंकित की गयी है। इनके निर्माण मे प्रतिमा शास्त्रीय निर्देशो का पालन किया गया है। उर्मिला अग्रवाल के अनुसार वास्तव मे इन मूर्तियो में सौन्दर्य सर्जना के द्वारा आध्यात्मिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति कराने की प्रक्रिया का आरम्भ तो गुप्त काल मे ही

107- विद्या प्रकाश-खजुराहो, प्लेट 8,9
108- वही, प्लेट 50
109- वही, प्लेट 52
110- वही, प्लेट 55
111- वर्मा, रत्नेश कुमार - खजुराहो के जैन मन्दिरो की मूर्ति कला पृ० 59
112- अवस्थी, रामाश्रय - खजुराहो की देव प्रतिमाए, पृ० 20, 22,69 आगरा, 1967

हो चुका था परन्तु इसका सम्यक परिपाक खजुराहो की मूर्तियो मे ही हुआ।[113] इनमे भावनाओ को मूर्त रूप प्रदान करने के साथ-साथ यथार्थता पर भी बल दिया गया है।[114]

सामान्य रूप से अप्सराओ का अंकन खजुराहो के हिन्दू और जैन सभी मन्दिरो पर प्राप्त होता है किन्तु पार्श्वनाथ और आदिनाथ मन्दिरो पर उत्कीर्णित अप्सराएं वास्तव मे तत्कालीन कलात्मक श्रेष्ठता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती है। इन पर काम-भाव से युक्त स्त्री पुरूषो की मूर्तियाँ उत्कीर्ण है, जिनमे कुछ विशेष रूप से अश्लील है।[115] मन्दिरो पर रतिक्रीड़ा से युक्त इन मूर्तियो के प्रदर्शन का कारण कला विशेषज्ञो ने अनेक बताए है जैसे- सृष्टि की सर्जनात्मक शक्ति का प्रदर्शन, प्राकृतिक दुर्घटनाओ से मन्दिरो की रक्षा, शिल्पियो की रागात्मक वृत्ति, वाम मार्गी विचारधारा का प्रभाव, वज्रयान सम्प्रदाय का प्रभाव, राजशाही विलासिता आदि।[116] सोमपुरा ने एक लोकोक्ति भी उद्धृत किया है कि हेमवती नामक स्त्री द्वारा चन्द्रमा के साथ समागम करने के प्रायश्चित स्वरूप खजुराहो के मन्दिरो मे अश्लील मूर्तियो का निर्माण किया गया।[117] भगवत शरण उपाध्याय के अनुसार देवालयो का ऐसा रूप मात्र खजुराहो तक सीमित नही था, इसका प्रादुर्भाव बौद्ध स्तूपो से हो जाता है, फिर क्रम से भुवनेश्वर, कोर्णाक, पुरी के जगन्नाथ, एलोरा के कैलाश और खजुराहो के मन्दिरो तक पहुॅचकर इस रूप मे आ गया। काशी के नेपाली मन्दिर मे भी रति विषयक उत्कृष्ट मूर्तियो की रचना उन्ही आधारो पर हुई। इसका सूत्रपात बेसनगर की यक्षी मूर्ति से होता है। इस प्रकार इस इतिहासकार ने इसके प्रचलन का श्रेय बौद्ध धर्म के हीनयान मत को दिया है।[118]

113- अग्रवाल, उर्मिला - खजुराहो स्कल्पचरस एण्ड देयर सिग्निफिकेन्स, पृ० 44, दिल्ली 1964

114- वर्मा, रत्नेश कुमार - खजुराहो के जैन मन्दिरों की मूर्तिकला पृ० 60

115- त्रिपाठी, एल० के - दि इरोटिक सेन्सेज आफ खजुराहो एण्ड देयर प्रावेवुल एक्सप्लेनेशन, भारती नं०3, पृ० 89

116- श्रीवास्तव, वृजभूषण - प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एव मूर्ति कला, पृ० 384, वाराणसी, 1981

117- सोमपुरा, पद्मश्री प्रभाशकर ओं० - भारतीय शिल्प संहिता, प्रस्तावना, पृ० 5

118- उपाध्याय, भगवत शरण - दि जर्नल आफ दि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, भाग 5, अंक 2, 1940, पृ० 227, 234

इस युग के शिल्प ग्रन्थो मे भी मिथुन बन्ध आकृतियो को उत्कीर्ण करने का निर्देश दिया गया है।[119] नग्न मूर्तियो का प्रदर्शन भारतीय कला की पुरातन मनोवृत्ति मानी जाती है। शुंग कालीन यक्ष यक्षियो की मूर्तियां जो साची, भरहुत के तोरणो पर लगी है, वे अर्द्ध नग्न है। कुषांण और गुप्त काल तक इनकी बहुलता हो जाती है तथा खजुराहो की मन्मथ मूर्तियां इन्ही के विकास का परिणाम है। [120] मन्दिरो मे जीवन के महत्वपूर्ण पक्षो धर्म और काम का निरुपण कर एक ही साथ सामान्य जन को सासारिक और अध्यात्मिक मन स्थिति मे लाना और अन्तत. धर्मिक भावना मे लिप्त करना भी शिल्पी का उद्देश्य हो सकता है।

अत: गुप्त तथा गुप्तोत्तर कला के आधार पर कहा जा सकता है कि इस काल तक अप्सराएं वारांड़नाओ, नर्तकियो एवं नाट्य कला के विभिन्न अभिनयो मे पारंगत समझी जाने लगी थीं। इन्हे पौराणिक देववर्ग मे भी स्थान प्राप्त था। ये देवलोक के उत्सवो तथा विशिष्ट समारोहो मे मनोरंजन का कार्य भी करती थी। भारतीय कला मे, इनके विभिन्न गुणो के आधार पर परियो के रूप मे भी चित्रित किया जाने लगा। म०प्र० से, 8वी शताब्दी मे निर्मित एक परियो के समूह का चित्रण प्राप्त होता है, जो डेवनर कला सग्रहालय[121] मे सुरक्षित है। इस चित्रण मे विभिन्न परियां अपने हास्य विनोद में मग्न है। इनमे सभी आभूषणों से लदी दिखाई गयी है। कुछ बैठी है तो कुछ खड़ी है और कुछ परिया नृत्यरत मुद्रा मे दृष्टिगत है। यह चित्रण इन्द्र के दरबार मे अवस्थित अप्सराओ के हास्य विनोद को रेखांकित करता है।

अप्सराओ का चित्रण पूर्व मध्य काल के लगभग प्रत्येक मन्दिर मे किया गया है। ये मन्दिरो के जंघाओ, रथिकाओ, स्तम्भो, द्वारो आदि पर स्थापित की गयी है। इन्हें देवांगना, देवकन्या, सुर-सुन्दरी, नृत्यांगना आदि नामो से अभिहित किया जाता है। पालयुगीन एक

119- शृणु मिथुन बन्धाश्च कस्मिन्यत्रादिनिर्णय·।
नानामिथुन बन्धा हि कामशास्त्रानुसारत. ।
मुख्या हि केवलं केलि: न पातो न च सगम· ।
केलि: बहुबिधा शास्त्रे केवलं क्रीड़ा माषिता ।। -शिल्प प्रकाश, अध्याय 2

120- मिश्र, केशव - चन्देल और उनका राजत्व काल, पृ० 249

121- द्रष्टव्य चित्र संख्या- 4

अप्सरा[122] मूर्ति किसी दरवाजे के चौखट पर खडी है। उसका सिर दाहिनी ओर मुड़ा हुआ है, शरीर आकर्षक ढंग से झुका है। बडी-बडी आँखे तथा भौहे कमान सी बनायी गयी है। अप्सरा बाजूबन्द,कड़ा धारण किये हुए है। नौ लड़ियो की करधनी, पैर मे पाजेब, गले मे एकावलि, केश विन्यास वक्र तरंगवत दृष्टिगोचर होते है। उसकी आखे मदभरी, बोझिल एव शरीरांग सुडौल दिखाए गये हैं। यह मूर्ति पटना संग्रहालय मे सुरक्षित है।

चिदम्बरम मन्दिर, तमिलनाडु से नवीं शताब्दी ई0 की एक नृत्यरत अप्सरा मूर्ति[123] उपलब्ध है जो स्वास्तिक मुद्रा मे खडी दिखाई गयी है। अप्सरा पूर्ण रूपेण आभूषणो से अलंकृत है और उसके दाहिने हाथ मे एक विदारिणी है जो अपर अर्थात् आकाश तरफ खड़ी की गयी है। अप्सरा के बांए हाथ को अर्द्ध चन्द्र हस्त के रूप मे प्रदर्शित करते हुए उसे उसके नितम्बो के साथ जोड दिया गया है। मूर्ति के बाएं तरफ एक तोता अंकित है। इस मुद्रा मे उसे शारीरिक दृष्टिकोण से भव्य प्रमाणित नही करके बल्कि उसे एक सामान्य और सख्त स्त्री के रूप मे प्रमाणित किया गया है। यह मूर्ति अत्यन्त विलक्षण प्रतीत होती है।

कुम्भकोन, तंजाउर से प्राप्त 886 ई० की एक अप्सरा मूर्ति[124] प्राप्त हुई है, जिसे गन्धर्वो की राजमहिषी बताया गया है। अत्यन्त विलक्षण मूर्ति के रूप मे इसको अंकित किया गया है। राजमहिषी नाना प्रकार के अलंकरणो से युक्त है। इस प्रकार की अन्य मूर्तियां भी मन्दिर के विमान एवं मण्डप पर उत्कीर्णित की गयी है। यह मूर्तिया चोल राजमहिषी की प्रतिकृति प्रतीत होती है। 1010 ई० की वृहदीश्वर मन्दिर के दीवार पर एक नृत्यरत अप्सरा का अंकन प्राप्त होता है। अप्सरा एक कुशल नर्तकी के रूप मे चित्रित है जो उसके भाव-भंगिमाओ से दृष्टिगोचर होता है। इसका उल्लेख स्टेला क्रैमरिश ने 'दि आर्ट ऑफ इण्डिया'-फलक 113 मे किया है।

122- पटना संग्रहालय- चित्र सख्या 10376
123- द्रष्टव्य चित्र संख्या- 5
124- द्रष्टव्य चित्र संख्या- 6

राष्ट्रकूट काल की नवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति[125] बीजापुर सग्रहालय मे सुरक्षित है, जो एक चौकोर पटिया पर उत्कीर्ण की गयी है। यह त्रिभग मुद्रा मे अपने बाए पैर को थोडा ऊपर उठाए है, दाया हाथ सम्भवत दर्पण लिए हुए है। हाथ क्षतिग्रस्त स्थिति मे है तथा चेहरा भी क्षतिग्रस्त है। सिर के केश कन्धो पर लहरा रहे है। अप्सरा को आभूषणो से अलकृत किया गया है। गले मे हार कमर मे मेखला, कानो मे कर्णफूल तथा पैरो मे नुपूर है। अधोभाग साड़ी से ढंका हुआ है अप्सरा की कमर पतली है तथा वक्ष उभरा हुआ स्पष्ट दिखता है। सुप्रभेदामागम मे अप्सरा की यह विशेषता प्राप्त होती है।[126]

खजुराहो, छतरपुर की दसवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति [127] भारतीय सग्रहालय, कंलकत्ता मे सुरक्षित है। यह अप्सरा अपने प्रेमी को पत्र लिखने मे निमग्न है। इसके दक्षिण एवं वाम पार्श्वो मे दो सेवक खडे है। बालो को जूड़े के रूप मे बांधे हुए, मूर्ति आभूषणो से अलंकृत है, कानो मे कर्णफूल, बाहो मे कगन तथा कटिमेखला। अधोभाग साड़ी से आवृत्त है। पैरो मे नुपूर स्पष्ट है। पत्रवल्लरी से आच्छादित अप्सरा कुछ सकोच का भाव प्रदर्शित कर रही है।[128]

खजुराहो के पार्श्वनाथ मन्दिर के गर्भगृह की उत्तरी जंघा पर दसवी शताब्दी की नृत्योद्यता अप्सरा[129] प्राप्त हुई है। यह अप्सरा छरहरी सुकुमार देह यष्टि वाली है। अपना एक पैर घुटने से मोड़कर उसमे नुपूर बांध रही है। उसका सेवक दूसरा नुपूर हाथ मे लेकर खड़ा है।अप्सरा के अधोभाग पर साड़ी, वक्ष पर कंचुकी तथा सिर पर करण्ड मुकुट है। अप्सरा विभिन्न आभूषणो से युक्त है। गले मे हार, माला, कटिमेखला, बांह मे मणिबन्ध एवं कंगन दृष्टिगोचर होते है। अप्सरा के होठो पर मन्दस्मित मुस्कान द्रष्टव्य है।

125- बीजापुर संग्रहालय- नं० 1078,

126- मध्यक्षामसमायुक्ता पीनोरूजघनस्तना - सुप्रभेदागम, अध्याय 48
उदधृत- राव, गोपीनाथ - एलिमेण्ट्स आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी जिल्द 2, भाग 2, पृ० 275

127- भारतीय सग्रहालय, कलकत्ता - नं० ए 24228

128- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 7

129- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 8

पार्श्वनाथ मदिर के ही दक्षिणी जघा पर स्थित अप्सरा अपने पैर से कांटा निकाल रही है।[130] उसका सेवक उसके पैर को सभालते हुए खडा है। केश विन्यास सवारकर पीछे जूड़े के रूप मे बाधे गये है। कान मे कर्णफूल, गले मे माला, हाथ मे कगन तथा मणिबन्ध दृष्टिगत होते है। अधोभाग साड़ी से ढका है। अप्सरा के आसपास सिह, ब्याल, एव मकर ब्याल दिखाया गया है। शिल्प संहिता मे ऐसी प्रतिमा को शुभगामिनी कहा गया है।[131]

खजुराहो के लक्ष्मण मन्दिर के गुधा मण्डप पर दक्षिणी तरफ दसवी शताब्दी की सुर-सुन्दरी मूर्ति द्विभंग मुद्रा मे सहज भाव से खड़ी प्रदर्शित की गयी है। सुर-सुन्दरी का मुखाग्र क्षतिग्रस्त है। यह विभिन्न आभूषणो से सज्जित है । केश को सज्जित कर वीथि से विभक्त किया गया है। कान मे कर्णफूल, गले मे हार, लम्बे लड़ियो की माला, कमर से लिपटा रत्नाभूषण अंकित है। अधोभाग मे साड़ी है, कन्धे पर पड़ा दुपट्टा नीचे घुटने तक लटका हुआ है। बांए हाथ मे पत्र तथा दाहिने हाथ मे कमल लिये हुए खड़ी है। प्रतिमा के निर्माण मे शिल्पी ने बड़ी स्वाभाविकता का परिचय दिया है। पत्र लिखते समय सकोच एव अपनत्व के भाव का प्रदर्शन शिल्पी ने दक्षता पूर्वक किया है। शिल्प सहिता मे ऐसी अप्सरा को पत्र लेखा कहा गया है।[132]

खजुराहो के आदिनाथ मंदिर की दक्षिणी जंघा पर दर्पण देखती एवं नृत्य करती हुई एक अप्सरा प्रदर्शित की गयी है। यह अप्सरा दर्पण देखती हुई अपने मांग मे सिन्दूर लगा रही है तथा द्विभंग मुद्रा मे खड़ी है। होठो पर मन्दस्मित मुस्कान, कान मे कर्णफूल,गले में हार, बांह मे मणिबंध एवं कंगन दृष्टिगोचर होते है। सुसज्जित केश विन्यास को जूड़े से बांधा गया है। वस्त्र को कमर से नीचे तथा घुटने तक दिखाया गया है। अप्सरा के साथ अन्य सहायक आकृतियां भी है। भारतीय शिल्प संहिता मे दर्पण से श्रृंगार करती अप्सरा को विधिचित्ता कहा गया है।[133]

130- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 9

131- शुभा कंटक (मृक) निर्गता - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65

132- दक्षिण हस्ते कमले ताडपत्र च धरित्रींका।
ललाटे चंन्द्ररेखा च सनाम विस्तरे सदा।। - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 66

133- विधिचित्ता स्व दर्पण। - वहीं, पृ० 65

इसी मन्दिर के वाम भाग मे दूसरी अप्सरा उत्कीर्णित है। इसका दाहिना पैर केहुनी सीधा ऊपर उठा हुआ एव इसी भाव में बांए हाथ की कोहुनी ऊपर उठी है। केश सुसज्जित है, कानो मे कर्णफूल, गले में माला,बाहो मे मणिबन्ध एव कगन, कटिमेखला दिखाई देता है। अधोवस्त्र हवा मे लहरा रहा है। अप्सरा के दाए-बाए सहायक आकृतिया बनी हुई है। ऊपर उठे पैर के नीचे एक वामनक आकृति सम्भवत पैर को सहारा दिए हुए है। दांया हाथ वरद मुद्रा युक्त, बांया हाथ नृत्य मुद्रा मे मस्तक पर रखकर नृत्य करती अप्सरा को नृत्यांगना (सर्वकला) कहते है।[134]

मध्य प्रदेश के अन्य क्षेत्रो से भी अप्सराओ की प्रातिनिधिक मूर्तियां प्राप्त हुई है जिनसे तत्कालीन कला की उत्कृष्टता का ज्ञान तो होता ही है साथ ही अप्सरा की चारित्रिक विशेषताओ का भी द्योतन होता है।

हिगलाजगढ़, मन्दसौर[135] से दसवी शताब्दी की सुर सुन्दरी मूर्तियो को किसी मन्दिर की दीवार पर एक पंक्ति मे उत्कीर्णित किया गया है। ये मूर्तियां विभिन्न क्रियाकलापो मे अनुरक्त प्रतीत होती है जैसे-एक सुर-सुन्दरी द्विभंग मुद्रा मे खड़ी है, बांए हाथ से दर्पण पकड़े हुए है तथा दाहिने हाथ से काजल लगा रही है। वक्ष कचुकी से ढका हुआ है। अधोभाग साड़ी से ढंका हुआ है। मूर्तियां आभूषणो से अलंकृत है, गले मे हार, माला, कानों मे कर्णफूल, कमर मे मेखला एवं कटि सूत्र स्पष्टत दृष्टिगोचर होते है। केश विन्यास सुसज्जित है। शिल्प संहिता मे हाथ मे दर्पण लिए या बिन्दी लगाती हुई अप्सरा को 'विधिचित्ता[136] कहा गया है।

हिंगलाजगढ़ मन्दसौर[137] से ही दसवी शताब्दी की अन्य सुर सुन्दरी मूर्ति प्राप्त हुई है जो केन्द्रीय संग्राहलय इन्दौर मे सुरक्षित है। यह सुर-सुन्दरी एक बन्दर के साथ क्रीड़ा मे

134- नृत्यन्ति च सर्वकला वरदा दक्षा जणिज्ञ।
मस्तके वाम हस्ते च चितन मुद्रा संयुतम।। - सोमपुरा, भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65

135- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 10

136- विधिचित्ता स्वदर्पण - सोमपुरा, भारतीय शिल्प सहिता पृ० 65

137- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 11

निमग्न है। बडे सहज भाव मे बन्दर अप्सरा का साड़ी एव दुपट्टा पकड़कर पैरो के बल खड़ा है। अप्सरा के केश जूड़े के रूप मे बधे है तथा मूर्ति को कुछ आभूषणो से सजाया गया है जैसे-हार नुपूर कगन, कर्ण फूल आदि।

केन्द्रीय सग्रहालय, इन्दौर मे ही एक अन्य सुर-सुन्दरी[138] दसवी शताब्दी की सुरक्षित की गयी है। यह सुर सुन्दरी दाहिने हस्त मे कमल लिए हुए द्विभंग मुद्रा मे खड़ी है। अप्सरा का सेवक दाहिने पार्श्व मे पैर के पास अजलि मुद्रा मे प्रार्थना करते हुए उत्कीर्ण है। अप्सरा क़रण्ड मुकुट युक्त है, उसकी आंखे ध्यान मुद्रा मे प्रदर्शित है। मूर्ति आभूषणो से अलंकृत है। कन्धे पर पड़ा दुपट्टा बांए हाथ से संभाल रही है, अधोभाग साड़ी से ढका है।

रीवा कोतवाली से प्राप्त, दसवी शताब्दी की अप्सरा मूर्ति[139] अत्यन्त आकर्षक है इसकी दोनो भुजाएं खण्डित है, द्विभग मुद्रा मे खड़ी अप्सरा के केश पीछे कन्धो पर लहरा रहे है। इसका मुखाग्र भी क्षतिग्रस्त है फिर भी होठो पर मुस्कान स्पष्टत छलकता है। मूर्ति आभूषण युक्त है, गले मे हार, माला, कटि मेखला तथा मोतियो की लड़े,जंघो पर लटक रहे है। कन्धे से लेकर नीचे तक दुपट्टा लहरा रहा है।

रीवा कोतवाली से ही दूसरी अप्सरा मूर्ति[140] भी मिली है जोअपने दाहिने हाथ में कमल लिए खड़ी है, बांया हाथ खण्डित है। दृष्टि नासाग्र पर टिकी है, गले मे हार, बाह मे कंगन, कमर मे मेखला तथा कान मे कर्ण-फूल है। केश संवारे गए है। यह मूर्ति भी दसवी शताब्दी की है। ऐसी ही अप्सरा का उल्लेख मत्स्यपुराण मे मिलता[141] है।

मध्य प्रदेश के उसी स्थान से तीसरी मूर्ति दसवी शताब्दी की प्राप्त है[142] जिसे त्रिभंग मुद्रा मे दर्शाया गया है। इसकी गर्दन दाहिने तरफ तथा कमर और घुटना भी दाहिने तरफ मुड़ा हुआ प्रदर्शित है। अप्सरा के बांए हाथ मे कमल तथा दाहिने हाथ मे किसी वृक्ष की

138- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 12
139- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 13
140- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 14
141- पद्हस्तं महाबाहुं स्थापयामि दिवाकरम्। -मत्स्य पुराण 265/38
142- द्रष्टव्य चित्र सख्या - 15

पत्ती प्रदर्शित की गयी है। मस्तक पर करड मुकुट, गले मे हार, माला, कमर मे मेखला, बांह मे कगन, पैर मे नुपूर तथा कान मे कुण्डल दर्शनीय है। कमर के नीचे घुटने तक वस्त्र दिखाया गया है। मूर्ति के अगल-बगल सिंह, ब्याल दिखाए गए है, चेहरे पर मन्दस्मित मुस्कान मूर्ति को सजीवता दिलाती है।

रीवा कोतवाली से एक नृत्यरत अप्सरा मूर्ति[143] भी प्राप्त है, जो दसवी शताब्दी की ही है। इसके वक्ष तथा दोनो बांहे खण्डितावस्था मे है। दांया हाथ ऊपर उठा है। अप्सरा नानाभूषणो से अलंकृत है। गले मे हार, माला, कानो मे कर्णफूल, बाह मे मणिबन्ध एवं कंगन कटि मेखला, तथा मोतियो की लड़े जघो पर लटक रही है। शिल्प संहिता मे ऐसी अप्सरा को सुन्दरी कहा गया है।[144]

मध्य प्रदेश के रीवा के, गुर्गी नामक स्थल से अप्सरा[145] की दसवी शताब्दी की एक मूर्ति मिली है जो रीवा कोतवाली सग्रहालय मे सुरक्षित है। इस मूर्ति के पैर, बांह एवं मस्तक पूर्णरूपेण क्षतिग्रस्त है। दाहिनावक्ष भी खण्डित है। यह पूर्णत: नग्न मूर्ति है। गले मे माला एवं हार धारण किये हुए है। देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि नग्नता के कारण कुछ शर्मीले भाव से खड़ी है।

गुर्गी से ही प्राप्त रीवा कोतवाली मे सुरक्षित दसवी शती की एक अन्य नृत्यरत अप्सरा[146] प्राप्त होती है। यह मूर्ति भी काफी क्षतिग्रस्त है। अप्सरा का बांया हाथ ऊपर उठा प्रतीत होता है, दाहिना पीछे कमर पर स्थित है। कमर के नीचे वस्त्र का अंकन है। कन्धे पर दुपट्टा, हाथो मे कंगन तथा मणिबन्ध मे द्रष्टव्य है। मस्तक क्षति ग्रस्त होने से उसके बारे मे विश्लेषण नही किया जा सकता[147]।

143- द्रष्टव्य चित्र सख्या - 16
144- सुन्दरी नृत्या मुक्ता च - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65
145- रीवा कोतवाली संग्रहालय - नं० जी 406
146- रीवा कोतवाली संग्रहालय - नं० जी 82
147- द्रष्टव्य चित्र सख्या - 17

इलाहाबाद, जमसोत से, दसवी शताब्दी की एक नृत्यरत सुर-सुन्दरी[148] मूर्ति प्राप्त हुई है। जो इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित है। सुर-सुन्दरी नृत्य मे निमग्न प्रदर्शित की गयी है, उसका बांया पैर नृत्य के लिए उद्यत है जबकि दाया अपने स्थान पर स्थिर है। वह अपने दाहिने हाथ को ऊपर उठाकर सिर के ऊपर करके अगडाई लेने की मुद्रा प्रदर्शित करती है। बाल सवारे हुए है, होठो पर मन्दस्मित मुस्कान दृष्टिगत होता है, दोनो पैरो मे कड़ा, कमर मणिमेखला, जिसकी लड़िया जांघ पर लटक रही है गले मे हार, माला, माथे पर मुकुट धारण किए हुए है। सुर-सुन्दरी के दांए पैर पर बन्दर चढते हुए प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति के ऊपर आम वृक्ष के फलो को गुच्छेनुमा छत्र के रूप मे प्रदर्शित किया गया है। शिल्प संहिता मे नृत्य करती अप्सरा को सुन्दरी कहा गया है।[149] इसे यक्षी मूर्ति भी कहा जाता है। अप्सराओ एवं यक्षियो का वनस्पतियो से विशेष सानिघ्य था। इसी अध्याय मे इस तथ्य को स्पष्ट किया जा चुका है। अर्थात् भरहुत वेदिकाओ से लेकर जमसोत तक अप्सराओ को वृक्ष के साथ चित्रित किया जाता रहा ।

रीवां, म०प्र० से ग्यारहवी शती की एक मूर्ति प्राप्त है जो वृक्षिका[150] नाम से इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। इस मूर्ति के हाथ और पैर भग्न है। फिर भी नायिका त्रिभग मुद्रा मे प्रदर्शित होती है नायिका विविध आभूषणो से युक्त है। गले मे कण्ठाहार तथा माला धारण किये हुए है, जो तीन लडियो मे बनाया गया है। नायिका के कमर मे पहने हुए करधनी की लड़ियां जंघो पर लटक रहे हैं। सम्भवत मूर्ति के ऊपर आम के पेड़ का अंकन रहाहोगा जो क्षतिग्रस्त है। नायिका के केशगुथ करके भव्य जूड़ा बनाया गया है जो तीन बार घूमा हुआ प्रदर्शित किया गया है। इसके अधोवस्त्र पर चित्रकारी किया गया है। इस नायिका का चित्रण, शिल्परत्न एवं नाट्यशास्त्र मे वर्णित अप्सरा विषयक रूप से काफी साम्य रखता है। अप्सराएं राजा सोम से सम्बन्धित होने के कारण वनस्पतियो के साथ

148- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 18
149- सुन्दरी नृत्या मुक्ता च। भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65
150- कृष्णदेव, त्रिवेदी एस० डी० - स्टोन स्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम

चित्रित की जाती है, इसका भी उदाहरण यह नायिका मूर्ति प्रस्तुत करती है।[151] शुग कालीन कला मे वृक्षिका नाम से अप्सराओ या यक्षियो की मूर्तिया बहुतायत मे बनती थी। इसका उल्लेख वासुदेव शरण अग्रवाल ने भारतीय कला मे किया है, जिसमे चित्र संख्या 237 मे एंक वृक्षिका, यक्ष की सहायता से वृक्ष पर आरोहण करती चित्रित की गयी है।[152]

खजुराहो, छतरपुर,म०प्र० से ग्यारहवी शताब्दी की एक मूर्ति[153] प्राप्त हुई है, जो इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। इस चित्रण मे सद्यस्नाता सुर-सुन्दरी चित्रित की गयी है। नायिका स्नान के बाद अपने बालो से पानी निचोड रही है, उसके पैरो के पास हस ऊपर को मुह किये चित्रित किया गया है, वह नायिका के बालो से गिरने वाले पानी को पीने के लिए उत्सुक प्रतीत होता है[154] नग्न या मग्न भाव से स्नान करती अप्सरा को कर्पूर मजरी[155] कहा जाता है।

इलाहाबाद संग्रहालय मे ही एक प्लेट पर बनी खजुराहो से प्राप्त दो मूर्तिया[156] सुरक्षित है एक अप्सरा अपने गोद मे शिशु लिए चित्रित की गयी है तथा दूसरी बांए हाथ मे दर्पण लिए हुए है, जिसमे अपना मुख देख रही है। दोनो मूर्तियां आभूषणो से युक्त, प्रदर्शित की गयी है, उनका शरीर अर्द्धनग्न है।[157] अभय मुद्रा वाली जिसके कक्ष मे बालक हो, ऐसी अप्सरा को गूढ़शब्दा[158] तथा हाथ मे दर्पण लेकर मुख दर्शन करती अप्सरा को विधिचित्ता[159] कहा गया है।

151- इलाहाबाद सग्रहालय - न० 266
152- अग्रवाल, वासुदेव शरण - भारतीय कला
153- इलाहाबाद सग्रहालय - नं० 255
154- कृष्ण देव, त्रिवेदी, एस०डी० - स्टोनस्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम, खण्ड-2, नई दिल्ली 1996
155- नग्न भावे कृतस्नाना नाम्ना कर्पूर मजरी। - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65
156- इलाहाबाद सग्रहालय - न० 434
157- कृष्णदेव, त्रिवेदी, एस०डी० - स्टोनस्कल्पचर इन दि, इलाहाबाद म्युजियम
158- अभयदा शिशुयुक्ता पद्मनेत्रा सा उच्वते । -भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65
159- विधिचित्ता स्वदर्पण । वही, पृ० 65

बारा, इलाहाबाद से एक द्वार स्तम्भ खण्ड प्राप्त है[160] जो इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित है। इस स्तम्भ पर एक अप्सरा चित्रित की गयी है जो अपने दाए हाथ से धनुष पकडे हुए है। मूर्ति त्रिभगमुद्रा मे चित्रित की गयी है। अप्सरा का बाया हाथ वक्ष पर रखा प्रदर्शित किया गया है। अप्सरा आभूषणो से सुसज्जित है, गले मे हार, कमर मे करधनी पहने हुए है, उसके केश विन्यास सवार कर जुडे के रूप मे बनाये गए है।[161] बायी ओर दृष्टि रखकर धनुष-बाण देखती देवांगना को भारतीय शिल्प सहिता मे मरीचिका[162] कहा गया है।

बारा, इलाहाबाद से ही एक दूसरी मूर्ति [163] भी प्राप्त हुई है, जो इलाहाबाद संग्रहालय मे है। इस मूर्ति मे अप्सरा अपने दोनो हाथो से धनुष पकड़े चित्रित की गयी है। वह अपने सिर को पीछे की ओर घुमाकर देख रही है। सम्भवत: वह अपने पीछे से आते हुए किसी शिकार को देख रही है।[164]

खजुराहो से ग्यारहवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति[165] प्राप्त हुई है जो खजुराहो आर्कियोलाजिकल म्युजियम मे सुरक्षित है। अप्सरा का बाया पैर उठा हुआ है जो नृत्य मुद्रा का प्रदर्शन करता है, तथा दाहिना पैर आसन पीठिका पर सीधे खड़ा है। अप्सरा कन्दुक क्रीडा मे लीन है, एक वामनिका कन्दुक लिए खडा है। मूर्ति आभूषणों से सुसज्जित है। अधोभाग साड़ी से आच्छादित है,कान मे कर्णफूल, हाथ मे कंगन, गले में हार, मोती की माला, पैर मे नुपूर बने है। पतली कमर, उन्नत उरोज स्पष्ट है। मस्तक पर चन्द्र की रेखा बनी हुई है। इसे कन्दुक क्रीड़ा मे निमग्न अप्सरा कहा जा सकता है।

खजुराहो से बारहवी शताब्दी की सुर-सुन्दरी मूर्ति[166] इलाहाबाद संग्रहालय मे संग्रहीत है। नाना प्रकार के आभूषणो से अलंकृत पतली कमर वाली यह सुर-सुन्दरी अत्यंत

160- इलाहाबाद सग्रहालय - नं० 296
161- कृष्णदेव, त्रिवेदी, एस०डी० - स्टोनस्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम
162- धनुर्बाणम्यं सधाता वाम दृष्टि मरीचिका। - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 66
163- इलाहाबाद संग्रहालय - नं० 290
164- कृष्णदेव, त्रिवेदी एस०डी० - स्टोनस्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम
165- खजुराहो आर्कियोलाजिकल म्युजियम - नं० 2669
166- इलाहाबाद संग्रहालय - न० 282

सजीव जान पड़ती है। गले मे हार, चार लडियो की माला, कमर मे मेखला, कमर के नीचे वस्त्र स्पष्ट है। केश सवार कर जूडे मे आगुण्ठित है। सुर-सुन्दरी भद्रपीठ पर खड़ी नृत्यरत है, दोनो हाथ ऊपर उठे हुए मस्तक पर रखे हुए है।[167] शिल्प रत्न मे अप्सरा को दुकूल पहने क्षीण कटि, प्रसन्न चित्त, स्मित हास्य अनेक आभूषणो से युक्त भद्रपीठ पर समभंग मे खड़ी बताया गया है। यह मूर्ति शिल्प रत्न के अप्सरा विषयक चित्रण का प्रतिनिधित्व करती है।[168]

जमसोत, इलाहाबाद से बारहवी शताब्दी की, इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित एक प्रतिमा वीणावादन रत प्रदर्शित की गयी है।[169] हाथ करते प्रतिमा की एक भुजा खण्डित है परन्तु उसके दोनो हाथ वीणावादन करते प्रदर्शित है। सिर पर मुकुट, कान मे कर्णफूल, गले मे हार, माला, पैर मे कड़ा स्पष्टतः चित्रित है। मूर्ति त्रिभग मुद्रा मे खड़ी है। कमर अति पतली दिखाई गयी है। दुपट्टा हवा मे लहरा रहा है। मूर्ति के ऊपर आम्र फलो का छत्र बनाया गया है। चूंकि यक्षियो अप्सराओ का भारतीय कला एव साहित्यो मे वृक्षो से विशेष सम्बन्ध रहा है इसलिए ऐसा अंकन किया गया है।[170]

जमसोत, इलाहाबाद से इलाहाबाद संग्रहालय मे नृत्यरत सुर-सुन्दरी मूर्ति[171] प्राप्त हुई है। सुर-सुन्दरी का बांया पैर नृत्य की मुद्रा मे ऊपर उठकर द्रुतलय की अवस्था मे है जबकि दाहिना पैर शिलासन पर अवस्थित है। कान मे कर्णफूल, गले मे हार, माला, हाथ मे कंगन एव कमर मे मेखला प्राप्त है। नृत्य मे निमग्न अप्सरा के वस्त्र एवं दुपट्टा हवा मे लहराते हुए प्रदर्शित है। आखे खुली हुई तथा चेहरे पर मनस्मित मुस्कान दिखाई देती है।[172] शिल्प संहिता मे सर्वकला मे निमग्न अप्सरा को मृगाक्षी[173] कहा गया है। यह मूर्ति भी

167- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम, दक्कन कालेज पूना, 1966
168- शिल्परत्न, खण्ड 2, पृ० 166
169- इलाहाबाद सग्रहालय - न० 1051
170- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 19
171- इलाहाबाद संग्रहालय - न० 1009
172- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम
173- मृगाक्षी सफला नृत्या। - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 69-70

बारहवी शताब्दी की है।

जमसोत से ही एक अन्य मूर्ति जो बाहरवी शताब्दी की बनी हुई है।[174],इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित है। सुर-सुन्दरी के दोनो हाथ नृत्य की अवस्था को प्रकट कर रहे है, जबकि दक्षिण पद नृत्य की ताल पर पड़ते हुए तथा वाम पद आसन पीठिका पर स्थिर है। उन्नत उरोज, पतली कमर से युक्त सुर-सुन्दरी के केश सवार कर जूड़े से बंधे हुए है। गले मे हार, लटकती मणिमाला, बांह मे मणिबन्ध एव कगन द्रष्टव्य है। कमर के नीचे का भाग वस्त्र से आच्छादित है। नासिका थोडी क्षतिग्रस्त है फिर भी चेहरे की बनावट स्पष्ट है[175] दाहिना पैर ऊपर रखकर दोनो हाथ मस्तक पर रखकर विविध अग वाली नृत्यांगना को सुस्वभावा[176] कहा गया है।

इलाहाबाद के जमसोत से मन्दिर की दीवाल पर उत्कीर्ण सुर-सुन्दरी[177] की बारहवी शताब्दी की अन्य मूर्ति प्राप्त हुई है, जो लाल बलुए पत्थर से निर्मित की गयी है। यह मूर्ति भी इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। अप्सरा का बांया हाथ ऊपर उठा जान पड़ता है, दाहिना पीछे कमर पर स्थित है। कमर के नीचे वस्त्र का अकन है। कन्धे पर दुपट्टा बाह मे कगन तथा मणिबन्ध द्रष्टव्य है मस्तक क्षतिग्रस्त होने से उसके बारे मे विश्लेषण नही किया जा सकता।[178]

जमसोत इलाहाबाद से, बारहवी शताब्दी की ही, इलाहाबाद संग्रहालय में सुरक्षित एक प्रतिमा अतिभग मुद्रा मे नृत्य करते हुए प्रदर्शित की गयी है।[179] प्रतिमा के पैर एव भुजाए खण्डित है फिर भी अप्सरा नृत्य की मुद्रा मे तल्लीन प्रतीत होती है। सिर पर मुकुट, कान मे कर्णफूल, गले मे हार एवं माला स्पष्टत दिखाए गए है, अधोभाग साड़ी से

174- इलाहाबाद सग्रहालय, न० 1041
175- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन दि इलाहाबद म्युजियम
176- उर्ध्वपादे चर्तुमृगी स्वभाव करौ मस्तके। - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 69
177- इलाहाबाद सग्रहालय नं० 1058
178- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन दि इलाहाबाद म्युजियम
179- इलाहाबाद संग्रहालय नं० 1028

आच्छादित है। पैरों में पाद वलय दिखाए गए हैं। मूर्ति का बांया पैर, नृत्य के ताल पर पड़ता प्रतीत होता है।[180] शिल्प संहिता में ऐसी मूर्ति को सुन्दरी[181] नाम दिया गया है।

जमसोत, इलाहाबाद से इलाहाबाद संग्रहालय में सुरक्षित मूर्ति प्राप्त[182] हुई है जो श्रृंगार कर रही है। यह बारहवीं शती की है। सुर-सुन्दरी बांया पैर ऊपर उठाकर पायल पहन रही है। जबकि दांया पैर शिलासन पर अवस्थित है। अप्सरा के केश संवार कर जूड़े के रूप में आगुण्ठित किये गए हैं। कानों में कर्णकुण्डल, गले में हार, माला, बाहों में कंगन एवं कमर में मेखला प्राप्त होती है। श्रृंगार में निमग्न अप्सरा दुपट्टा बाहों में लपेटे हुए है। आंखे खुली हुई तथा चेहरे पर मन्दस्मित मुस्कान दिखाई देती है। इसकी नासिका थोड़ी क्षतिग्रस्त है बांए हाथ की भुजा भी टूटी हुई है[183]। शिल्प संहिता में पैर का श्रृंगार करती हुई झांझर पहनती हुई, कमल जैसे लोचनयुक्त को हंसावली कहा गया है।[184] इस मूर्ति के ऊपर भी आम के गुच्छों का छत्र प्रदर्शित किया गया है।

जमसोत, इलाहाबाद से ही एक अन्य मूर्ति[185] जो बाहरवीं शताब्दी की बनी हुई है, इलाहाबाद संग्रहालय में सुरक्षित है। सुर-सुन्दरी के दोनों हाथ नृत्य की अवस्था को प्रकट कर रहे हैं, जबकि दाहिना पैर शिलासन पर स्थित है तथा वाम पद भग्न है। परन्तु मूर्ति की भाव भंगिमा से स्पष्ट है कि दोनों पैर नृत्यावस्था को प्रदर्शित करते हैं। उन्नत, उरोज, पुतली कमर से युक्त सुर-सुन्दरी के केश संवार कर जूड़े में बंधे हुए हैं। गले में हार, लटकती मणिमाला, बांह में मणिबन्ध एवं कंगन द्रष्टव्य है। कमर के नीचे का भाग वस्त्राच्छादित है अप्सरा का दुपट्टा हवा में लहरा रहा है। यह अति सुन्दर मुकुट धारण किये हुए है जो उसकी भव्यता को प्रदर्शित करता है। मूर्ति के ऊपर यहां भी आम फल के छत्र का अंकन प्राप्त है।[186]

180- प्रमोद चन्द्रा - इलाहाबाद म्युजियम
181- सुन्दरी नृत्य मुक्ता च। - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65
182- इलाहाबाद संग्रहालय नं० 1050
183- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 20, पाद श्रृंगार कर्त्री च हंसा कमल लोचना।
184- गाथा उच्चारण वाथ ।। सर्व पठान्तर कर्णश्रृंगार भूषिता ।। - भारतीय शिल्प संहिता, पृ० 65
185- इलाहाबाद संग्रहालय नं० 1048
186- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 21

जमसोत, इलाहाबाद के मन्दिर की एक दीवार पर उत्कीर्ण सुर-सुन्दरी की बाहरवी शताब्दी की एक अन्य मूर्ति प्राप्त हुई है जो लाल बलुए पत्थर से निर्मित है।[187] यह मूर्ति भी इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। यह सुर-सुन्दरी मूर्ति नृत्य की मुद्रा मे स्थित है। इसके बांह पूर्णत क्षतिग्रस्त है। बायां पैर द्रव्ष्टव्य है जबकि दाया पैर क्षतिग्रस्त है, फिर भी नृत्य का सहज भाव प्रदर्शित है। सुर-सुन्दरी विविध प्रकार के आभूषणो को धारण किए हुए है। कर्ण कुण्डल, हार, माला, मेखला केयूर आदि उल्लेखनीय है। मूर्ति भद्र पीठ पर खड़ी है।[188]

जमसोत, इलाहाबाद से ही बारहवी शताब्दी की एक सुर-सुन्दरी मूर्ति[189] मन्दिर के स्तम्भ पर उत्कीर्ण की गयी है जो इलाहाबाद सग्रहालय में सुरक्षित है। द्विभग मुद्रा मे खडी प्रतिमा के घुटने के नीचे का भाग पूर्णरूपेण क्षतिग्रस्त है। अप्सरा अपने दोनो हाथो को ऊपर उठाकर सिर पर रखे हुए है। आभूषणो मे हार, माला, कगन आदि मुख्य है तथा अधोभाग पर वस्त्र पहनाया गया है। मस्तक पर करण्ड मुकुट धारण किए हुए है। उसके अग्रभाग पर चक्र बना हुआ है। शिल्प संहिता मे चक्र को धारण करके नृत्य करती नृत्यांगना को सुगन्धा[190] कहा गया है।

इलाहाबाद मे जमसोत से बारहवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति उड़ती हुई[191] प्रदर्शित की गई है। यह मूर्ति इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। यह अप्सरा मूर्ति एक चौकोर पत्थर की पटिया पर उत्कीर्ण खण्डित अवस्था मे है। होठो पर मुस्कान साफ दिखाई देता है, जो उड़ने मे निमग्न है। इसका दाहिना हाथ हवा मे लहराते हुए दिखाई देता है। वृक्ष उभरे हुए, गले मे हार एवं माला, कान मे कर्ण फूल तथा केश विन्यास संवारे हुए है।[192]

187- इलाहाबाद संग्रहालय न० 1058
188- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन इलाहाबाद म्युजियम
189- इलाहाबाद सग्रहालय न० 1033
190- ऊर्ध्वपादे चतुर्मृगी स्वभाव करौ मस्तके। - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 69-70
191- इलाहाबाद सग्रहालय नं० 1010
192- प्रमोद चन्द्रा - स्टोन स्कल्पचर इन इलाहाबाद म्युजियम

जमसोत, इलाहाबाद से एक उड़ती हुई अप्सरा[193] की सुन्दर मूर्ति, इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित की गई है, जो बारहवी शताब्दी की है। चौकोर प्रस्तर की पटिया पर उत्कीर्ण अप्सरा गले मे हार तथा माला धारण किए है। कान मे कुण्डल पहने हुए है। उसका दुपट्टा कधे से लटकता हुआ हवा मे लहरा रहा है। क्षीण कटिप्रदेश, उन्नत उरोज स्पष्ट है, केशहवा मे बिखरे हुए है। उडने के कारण मूर्ति मे गति एव लय प्रतीत होता है।[194]

जमसोत, इलाहाबाद से एक सुर-सुन्दरी[195] मूर्ति प्राप्त है जो इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित है। यह प्रतिमा पतली कमर वाली तथा पीन पयोधरो से युक्त है। मूर्ति का दाहिना हाथ तथा जंघा क्षतिग्रस्त है। बांए हाथ मे दर्पण लिए हुए है। दांया पैर ऊपर उठा हुआ है, सिर पर करंड मुकुट है, कानो मे कर्णफूल, गले मे हार, माला, वक्ष पर कंचुकी दिखाया गया है, कटि मेखला, हिक्का सूत्र, केयूर, कगन स्पष्ट है।[196] शिल्प सहिता मे हाथ मे दर्पण लेकर मुख दर्शन करती हुई अप्सरा को विधिचित्ता[197] कहा गया है। यह मूर्ति सुप्रभेदागम[198] का भी अनुसरण करती है।

जमसोत, इलाहाबाद से ही दूसरी सुर-सुन्दरी[199] मूर्ति प्राप्त हुई है जो इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित है। अप्सरा का वाम हस्त भग्न है यह सम्भवत कमल पुष्प से युक्त रहा होगा। दाहिने हाथ के द्वारा वस्त्र को को सभालने की कोशिश को दिखाया गया है। पीनपयोधरो से युक्त, पतली कमर वाली, मोटे जघो वाली, कुछ मुस्कुराती हुई, सुन्दर कटाक्षो से युक्त मूर्ति भद्र पीठ पर स्थित है। आखे बड़ी-बड़ी दिखती है। सुर-सुन्दरी विभिन्न

193- इलाहाबाद संग्रहालय नं० 1061
194- प्रमोद चन्द्रा - इलाहाबाद म्युजियम
195- इलाहाबाद सग्रहालय नं० 1014
196- द्रष्टव्य चित्र संख्या 22
197- विधि चिन्ता स्व दर्पण - भारतीय शिल्प सहिता, पृ० 65
198- मध्यक्षाम समायुक्ता: पीनोरूजघनस्तना· ।
-सुप्रभेदागम - अध्याय 48, उद्धृत गोपीनाथ राव - एलिमेण्ट्स आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी, मद्रास 1914-16, जिल्द 2, भाग-2, पृ० 275
199- इलाहाबाद सग्रहालय न० 1036

आभूषणो से अलकृत है, जिसमे हार, माला, केयूर, कंगन, मणिबन्ध आदि दर्शनीय है।[200] सुर-सुन्दरी बारहवी शताब्दी की है तथा शिल्प रत्न का[201] अनुमोदन करती प्रतीत होती है।

इलाहाबाद के जमसोत से ही बारहवी शताब्दी की निर्मित एक अन्य सुर-सुन्दरी प्रतिमाए[202] एक दीवार पर चित्रित की गयी है, जो इलाहाबाद सग्रहालय मे सुरक्षित है। इन सुर-सुन्दरी मूर्तियो के सिर पर करण्ड मुकुट प्रदर्शित किया गया है। सम्मुख प्रतिमा के घुटने के नीचे का भाग पूर्णतः भग्न है। फिर भी कमर, वक्ष, मुख को बनाने मे शिल्पी की कुशलता का आभास प्राप्त होता है। मूर्ति आभूषणो से अलकृत है जिसमे हार, माला, कर्णफूल मुख्य है।[203]

धुवेला संग्रहालय मे सुरक्षित अप्सरा मूर्ति[204] भी उल्लेखनीय है जो मध्य प्रदेश से प्राप्त है। मूर्ति द्विभग मुद्रा मे बडे ही सहज रूप मे प्रदर्शित की गई है। इसके केश वीथि मे विभक्त कर कधे के ऊपर लहरा रहे है। गले मे कण्ठहार एव माला, वक्ष कंचुकी से ढका है, तथा हाथो मे कंगन पहनाए गए है। पैरो मे नुपूर एवं कमर मे मेखला द्रष्टव्य है। मूर्ति का बांया हाथ खण्डित है जबकि दाहिने हाथ मे कमल नाल है। अप्सरा के दक्षिण पार्श्व मे सेवक बड़े सहज भाव से खड़ा है।[205]

ग्यारहवी-बारहवी शताब्दी की एक मनोहारी अप्सरा की मूर्ति[206] नारायणपुर, कर्नाटक से प्राप्त हुई है, जो गवर्नमेट म्युजियम कल्याणी मे सुरक्षित है। अप्सरा का वक्ष के ऊपर का भाग ही बचा हुआ है। मूर्ति विभिन्न आभूषणो से युक्त है। माला, ग्रेवेयक, हार,

---

200- द्रष्टव्य चित्र सख्या - 23
201- दुकूलवसनास्सर्वा पीनोरूजघनस्तना।
मध्ये क्षौवादिवर्णाव तिसौम्यपश्च किचित्प्रहसितानना ॥
नानालकार सयुक्ता भद्रपीठोपरि स्थिता।
समभंडगसमायुक्तास्सप्तसडखयोप्सरो स्मृता ॥ - शिल्परत्न, अध्याय 25
202- इलाहाबाद सग्रहालय न०1016
203- प्रमोद चन्द्रा - इलाहाबाद म्युजियम
204- धुवेला सग्रहालय नं० 97
205- द्रष्टव्य चित्र सख्या - 24
206- द्रष्टव्य चित्र संख्या - 25

कान मे कर्णफूल दृष्टिगत होते है। केश कन्धे तक लटकते हुए प्रदर्शित है। आखे खुली हुई है। मूर्ति अत्यन्त सजीव प्रतीत होती है।

बारहवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति[207] उमापुर, कर्नाटक से प्राप्त हुई है जो गवर्नमेट म्युजियम कल्यानी मे सुरक्षित है। मूर्ति नाना आभूषणो से सुसज्जित है। कमर के नीचे का भाग तथा भुजाए खण्डित है। ऐसा आभासित होता है कि अप्सरा नृत्य की मुद्रा मे रही होगी। इस मूर्ति मे मस्तक पर ओढ़नी के ऊपर शिरोभूषण प्रदर्शित किया गया है जो अन्यत्र दुर्लभ है। मुखाग्र भाग क्षतिग्रस्त है। कानो मे कर्ण कुण्डल, गले मे हार, मणिमाला तथा बाह मे कगन स्पष्टत परिलक्षित होते है।

हेलेविड से एक अप्सरा मूर्ति[208] होयसल काल की प्राप्त हुई है जो गवर्नमेट म्युजियम बगलौर मे सुरक्षित है। यह अप्सरा किसी मन्दिर के भाग का अश रही होगी जो ग्रेनाइट पत्थर पर उत्कीर्ण की गयी है। इस मूर्ति के दोनो हाथ भग्नावस्था मे है। बाया पाद ऊपर उठा नृत्य मे तल्लीन है, दायां पाद आसन पर ही स्थित है। अप्सरा को घाघरा पहने दिखाया गया है, साथ ही विभिन्न अलंकरणो से उसे अलकृत किया गया है। कान मे कर्णफूल, हार, माला, एव दुपट्टा, पैर मे वलय दिखाई देते है। बायी तरफ मृदड गवादक तथा दक्षिण तरफ कोई अन्य वाद्य वादक उत्कीर्ण किया गया है। यह गन्धर्वो का रूपांकन प्रतीत होता है।

कर्नाटक मे बेलगाम के तेलसग नामक स्थान से, बारहवी-तेरहवी शताब्दी की एक प्रतिमा[209] गवर्नमेंट म्युजियम, धारवाड़ मे सुरक्षित है। यह अप्सरा नृत्यरत दिखाई गयी है। इसके दोनो पैर द्रतलय पर थिरकते जान पड़ते है। इसके दोनो हाथ भग्न है, मूर्ति विभिन्न आभूषणो से अलंकृत है। जिससे उसके नर्तकी रूप का आभास प्राप्त होता है। यह होयसल कला की मदनिका है। पृष्टांकन को पत्र वल्लरियो मे सज्जित किया गया है।

गवर्नमेट म्युजियम, धारवाड़ मे सुरक्षित एक दूसरी अप्सरा मूर्ति[210] भी बारहवी-

---

207- गवर्नमेण्ट म्युजियम, कल्यानी न० 1041
208- गवर्नमेण्ट म्युजियम, कल्यानी न० 2078
209- गवर्नमेण्ट म्युजियम, कल्यानी नं० 2121
210- गवर्नमेण्ट म्युजियम, कल्यानी न० 2124

तेरहवी शताब्दी की सुरक्षित है, जो कर्नाटक मे बेलगाम के तेलसग से प्राप्त है। यह प्रतिमा काकतीय काल की स्वीकार की गयी है। पुष्प वल्लरियो से आच्छादित अप्सरा नृत्य मुद्रा मे प्रतीत होती है। बांह मे मणिबन्ध तथा कगन, गले मे हार एव माला, कान मे कर्णफूल स्पष्टत: दृष्टिगत होते है। अप्सरा के मस्तक के ऊपर नृत्यशील आकृतियां भी प्रदर्शित है।

गवर्नमेट म्युजियम धारवाड़ मे बारहवी-तेरहवी शताब्दी की ही एक अन्य अप्सरा मूर्ति[211] द्रष्टव्य है। द्विभग मुद्रा मे खडी अप्सरा,पुष्पअलकरण से युक्त सहज भाव मे शुक क्रीडा मे लीन है उन्नत उरोज, पतली कमर से युक्त अप्सरा अलंकरणो से परिवेष्ठित है। अप्सरा के बडे-बड़े नेत्र शुक को निहार रहे है। केश सवारे गए है, वह बांए हाथ से शुक को पकडे हुए है तथा दाहिना हाथ कमर पर स्थित है। कान में कर्णफूल, गले मे ग्रैवेयक, हार, माला बाह मे मणिबन्ध, कंगन, कटिसूत्र, पैरो मे नुपूर तथा पाद वलय बनाए गए है।

प्राचीन काल मे भारत की सास्कृतिक परम्पराएं, भारत से बाहर पास-पड़ोस के देशो मे भी विकसित हुईं। दक्षिणपूर्व एशिया मे ईशा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे ही भारतीय सस्कृति का प्रचार प्रसार हो गया था तथा बारहवी-तेरहवी शताब्दी तक उनके कई देश भारतीय सस्कृति के प्रमुख केन्द्र थे। दुनिया के प्रत्येक भाग मे कला का विकास राजाओ के संरक्षण मे हुआ। अंकोरवाट के मन्दिरो मे अप्सराओ की उत्कृष्ठ नक्काशी कला की सजीवता के रूप मे प्राप्त होती है। इन मूर्तियो पर स्थानीय कला का प्रभाव परिलक्षित होता है। खमेर कला से पूर्व, जो मूर्तिया कम्पूचिया के क्षेत्र से प्राप्त होती है, वे मध्ययुगीन भारत की मूर्तियो से इतनी अधिक समता रखती हैं कि उन्हे या तो भारत से ले जाया समझ जा सकता है या उन शिल्पियो द्वारा बनाया गया समझ जा सकता है। जो भरत से कम्पूचिया गए थे। भारत मे लोकप्रिय पौराणिक कथाओ का अंकन कम्पूचिया की कला मे मिलती है ऐसा ज्ञात होता है कि अप्सराओ के विचार का अभ्युदय भी भारतीय परम्पराओं एवं मान्यताओ मे निहित है।[212] पौराणिक इनसाइक्लोपीडिया मे परिलक्षित किया गया है कि

211- गवर्नमेण्ट म्युजियम, कल्यानी न० 5138

212- श्रीवास्तव, के०एम० - अकोरवाट एण्ड कल्चरल टाइज विथ इण्डिया, पृ० 64

अप्सरा एक देव स्त्री है, इनकी उत्पत्ति क्षीर सागर के मथन से हुई।[213]

कम्पूचिया से प्राप्त अप्सराए मुकुट पहने हुए तथा विभिन्न प्रकार के आभूषणो से सुसज्जित मिलती है। इनके सिर पर लम्बे बाल खुले हुए दिखाए गए है। कुछ के बाल, मुकुट की तरह शोभनीय है, जो फीते से बाधे गए है। वह कमल पुष्प लिए हुए तथा कीमती पत्थरो से निर्मित लाछनो को धारण किए हुए हैं। इनके शुद्ध एव सरल बनावट को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि इनमे खमेर कला की सुन्दरता का समावेश किया गया है। कुछ मूर्तियो मे अप्सरा अपने हाथ से वक्ष को स्पर्श करते हुए प्रदर्शित है तथा उनका कटि प्रदेश पतला एवं नितम्ब पुष्ट है।[214] भारत से प्राप्त अप्सराओ की मूर्तियो मे अलकरणो का प्रयोग सुन्दरता से हुआ है। भुजबन्द कष्ठहार, आदि पहने हुए है। उनके हाथो का प्रदर्शन विभिन्न भावो मे किया गया है। वे उदर को स्पर्श करते हुए झुकी रहती है। उनके हाथ या तो पीछे स्थिर रहता है या तो दोनो हाथ शीर्षाभूषण को छूते हुए प्रदर्शित किये गये है। प्राय अप्सराएं विभिन्न आकार के दर्पण या क्रीड़ा की वस्तुए लिए हुए चित्रित है। आनन्द कुमार स्वामी ने अंकोरवाट से प्राप्त बारहवी शताब्दी की एक अप्सरा मूर्ति, को अप्सरा मूर्ति के आदर्श के रूप मे उद्घृत किया है।[215] उन्होने सिगरिया, सीलोन से पांचवी शताब्दी के एक अप्सरा मूर्ति के चित्रण को उद्घृत किया है। यह अप्सरा दीवाल पर अपने दासी के साथ मोहक भाव-भगिमा मे चित्रित की गयी है।[216] रौलेण्ड, बेंजामिन ने नवी शताब्दी की एक कांस्य निर्मित अप्सरा को भारत के बाहर स्थित अप्सराओ के मूर्तियो मे, एक मानक के रूप मे प्रस्तुत किया है। यह मूर्ति बेयान से प्राप्त है जो बोस्टन संग्रहालय मे सुरक्षित है।[217]

भारतीय कला के उपर्युक्त प्रतिबिम्बनो से अप्सरा का रूप, कार्य-व्यवसाय स्वत·

213- वैत्तम मणि- पौराणिक इनसाइक्लोपीडिया, पृ० 46, दिल्ली, 1979, श्रीवास्तव, के० एम० - वही पृ० 74

214- श्रीवास्तव, के० एम० - वही पृ० 78-79

215- स्वामी आनन्द कुमार - हिस्ट्री आफ, इण्डियन एण्ड इन्डोनेशियन आर्ट, लन्दन 1927, पृ० 371

216- कुमारस्वामी, आनन्द - वही, पृ० 406

217- रौलेण्ड, बेजामिन- दि आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर आफ इण्डिया लन्दन, 1956, पृ० 419

स्पष्ट हो जाता है। इन मूर्तियो मे अधिकाशत दसवी शताब्दी से लेकर बारहवी-तेहरवी शताब्दी की है। ग्यारहवी शताब्दी के देवगिरि के यादव राजा महादेव का येनमदल अभिलेख माधव को पृथ्वी का शासक बताता है, जिसके राज्यसभा मे प्रसिद्ध अप्सराए लोगो का अभिनन्दन करती थी।[218] अर्थात् अप्सरा के इसी रूप का चित्रण तत्कालीन मूर्ति कला मे किया गया। बारहवी सदी के विजय सेन के देवपाडा प्रशस्ति मे सामन्तसेन के यश को गाती हुई अप्सराओं का उल्लेख प्राप्त होता है।[219] जिससे स्पष्ट होता है कि अप्सराए स्वर्ग की नर्तकी है तथा ऐसी स्मृति लोगो के मन मे बनी हुई थी कि युद्ध मे मरे हुए योद्धाओं का अभिनन्दन स्वर्ग मे अप्सराओ द्वारा किया जाता है। यद्यपि इस काल तक अप्सराओ का व्यक्तित्व पृथ्वी लोक पर गणिकाओ मे समाहित हो गया था। इसीलिए भारतीय कला मे अप्सराओ को सुन्दर स्त्रियो के रूप मे चित्रित किया गया है।

218- जातो माधव भूपतिर्गुणागिरिस्तस्मानमहीवल्लभाद।
यस्सुप्त्वासुमहाह्वे गजवधूकुम्भद्वयस्योपरि ॥
प्रख्याताप्सरसस्तनद्वयतटे प्राबोधियोधाग्रणीर
लोकेख्यात विशाल निर्मल यशावीरश्रियामाश्रय: ॥
-एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 37, पृ० 187

219- उद्गीयन्ते यदीया: स्खलदुदधि जलोल्लशीतेषुसेतो:
कच्छान्तेष्ठवप्सरोभिदर्दशरथ तनयस्पर्धया युद्धगाथा॥
- एपिग्राफिया इण्डिका, भाग 1, पृ० 307, श्लोक 5

उपसंहार

उपसंहार

रामधारी सिह 'दिनकर' ने 'उर्वशी' नामक खण्ड काव्य की रचना की है जिस पर उन्हे 1972 मे ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इस खण्ड काव्य मे उन्होने उर्वशी-पुरूरवा संवाद को प्रस्तुत किया है। यह काव्य दो खण्डो मे है- प्रथम मे पुरूरवा द्वारा उर्वशी से पूछे गए प्रश्न है, तो दूसरे मे उर्वशी प्रश्नो के सन्दर्भ मे, स्वयं अपने कार्य एव रूप को स्पष्ट करती है। उसमे स्पष्टत उर्वशी वर्णित करती है कि वह व्यग्र, व्याकुल और चचल होकर घूमड़ने वाली वायु है, जो कामनाओ की तरंगे पैदा करती है और विश्व के नर मात्र के हृदय की अतृप्त इच्छाओ के समुद्र मे जन्म लेने वाली अप्सरा है। उर्वशी वर्णित करती है कि वह अपने रूप का गुलाम शूरवीर और हिंसक प्रवृत्ति वाले पशु पक्षियो को भी बना सकती है। यह स्पष्ट है कि अप्सरा के रूप मे उर्वशी, अपने आप को रूप और सौन्दर्य की उस प्रतिमा के रूप मे प्रस्तुत करती है, जो मनुष्यो को ही नही बल्कि देवताओ को भी अपने आलिगन पाश मे बांधने की क्षमता रखती है। दूसरी तरफ उर्वशी स्वत: को मन्दिरो के पूजन सस्कार से जोडकर धरती पर भी अपनी उपस्थिति को देवकन्या या देवदासियो के रूप मे प्रस्तुत करती है। यहां उर्वशी वर्णित करती है कि जो मन्दिरो मे घण्टियो की ध्वनियां सुनायी देती है वह वाद्यो की स्वर लहरी नही है बल्कि उसके नुपूरो की झंकार मात्र है और यह भी घोषित करती है कि पृथ्वी और आकाश मे संगीत की जितनी भी ध्वनियां हो रही हैं, उन सबमे उसके ही प्रणय की मधुर रागिनी है। उपर्युक्त विश्लेषण अपने आप मे यह प्रमाणित करता है कि अप्सराएं ईश्वरीय भी है और मानवीय रूप भी धारण करती है। इसे ऐसे भी वर्णित किया जा सकता है कि जब देवताओ ने देवलोक का परित्याग कर पृथ्वी लोक को अपना स्थान बनाया, तो अप्सराएं देवताओ के परिचारिकाओ के रूप मे, पृथ्वी लोक को अपना कार्यस्थली बना लेती है और इस प्रकार इनका मानवीकरण हो जाता है।

विभिन्न काल मे, विभिन्न साहित्यो मे अप्सराओ को विभिन्न नामो से विभूषित किया जाता है। ये कभी साहित्य और वास्तु कला मे यक्षी का रूप धारण करती है, तो कभी देवदासी का और मनुष्य के पाशविक इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करते हुए ये गणिका का रूप

भी धारण कर लेती है अर्थात् अप्सराए विभिन्न परिवर्तित परिस्थितियो मे भी अपने मौलिक कार्य और रूप का परित्याग नही करती है बल्कि सिर्फ इनका नामाकरण परिवर्तित हो जाता है।

प्रथम अध्याय मे वैदिक काल के विभिन्न स्रोतो का वर्णन करते हुए यह विश्लेषित किया गया है कि अप्सराओ की उत्पत्ति ऋग्वैदिक काल मे ही हो जाती है। इसको प्रमाणित करने के लिए ऋग्वेद मे वर्णित उर्वशी-पुरूरवा सवाद को विस्तृत रूप से विश्लेषित किया गया है और अप्सराओ के सौन्दर्य का विश्लेषण करते हुए उन्हे जल मे निवास करने वाली माना गया है, जिसमे कभी वे स्त्रियो का मानवी रूप धारण करती है, तो कभी जलीय पक्षी का रूप धारण कर देवता, गन्धर्व और मनुष्य का ध्यान आकर्षित करने की चेष्टा करती है, तो कभी वे सूर्य की किरणो का प्रतिनिधित्व करती है। सूर्य के किरणो के रूप मे उनका विश्लेषण इस सन्दर्भ मे किया गया है कि जिस तरह सूर्य अपनी तीव्र किरणो के द्वारा मानव के जीवन को प्रभावित कर सकता है, उसी प्रकार अप्सराएं अपने दहकते हुए रूप और लावण्य को प्रस्तुत कर मानव को वशीभूत कर सकती है। इसीलिए उन्हे कभी सूर्य का किरण माना गया है तो कभी उन्हे अग्नि का सन्तान माना गया है। यह अलकारिक समीकरण है जिसमे अप्सराओ को सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति मानते हुए उनके शारीरिक आकर्षण को कभी सूर्य की किरण माना गया है, तो कभी अग्नि की जलती लव। इसका विश्लेषण मैक्समूलर ने भी अपनी पुस्तक 'दि सेलेक्टेड एस्सेज' मे किया है। ऋग्वेद का वर्णन करते हुए प्रथम अध्याय मे यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है कि पुरूरवा और उर्वशी दोनो पारलौकिक नही बल्कि ऐतिहासिक पात्र है और दोनो के प्रेम को पारलौकिक और ईश्वरीय माना गया है। ऋग्वेद के अनुसार उर्वशी एक गन्धर्व कन्या है तथा पुरूरवा एक आर्य सन्तान। अर्थात् दोनो ही सन्दर्भो में पुरूखा और उर्वशी को ऐतिहासिक स्वरूप हासिल होता है। ऋग्वेद के उद्धरण मे उर्वशी तथा पुरूरवा के साहचर्य में तीन शर्तो का उल्लेख किया गया है और यह तीन शर्तें भी उपर्युक्त दोनों पात्रो को ऐतिहासिक रूप प्रदान करती है। इस अध्याय के अन्तर्गत ऋग्वेद के उल्लेखो का प्रयोग करते हुए यह प्रमाणित करने की चेष्टा

की गयी है कि उर्वशी वैसी रूपवन्ती स्त्री है जिसकी परिकल्पना मानव एक अप्सरा के रूप मे ही कर सकता है क्योकि अप्सरा उस अद्वितीय सौन्दर्य और शारीरिक सरचना का प्रतिनिधित्व करती है, जिसकी सिर्फ परिकल्पना की जाती है और यही परिकल्पना ऋग्वेद मे प्रस्तुत की गयी है। यौवन की प्रहरी के रूप मे उर्वशी को प्रस्तुत किया गया है और यह प्रहरी कभी सूर्य की तीव्रतम किरणो का प्रतिनिधित्व करती है तो कभी अग्नि की अर्थात् तीनो मे समीकरण है।

उत्तर वैदिक काल मे ऋग्वैदिक अप्सराए कई रूप धारण करती है, कभी ये उर्वशी है तो कभी मेनका, कभी रम्भा है तो कभी तिलोत्तमा। इनका नामाकरण विभिन्न हो सकता है किन्तु जिस रूप मे उर्वशी को प्रस्तुत किया गया है वही रूप लावण्य एवं सौन्दर्य आकर्षण उपर्युक्त अप्सराओ को भी प्रदान किया गया है, किन्तु विशेषता यह है कि ये अब अपने रूप के आकर्षण से नर और नारायण दोनो को समान रूप से आकर्षित कर सकती है। यजुर्वेद से प्रारम्भ होकर तैत्तिरीय आरण्यक तक के विश्लेषणो से यह स्पष्ट है। शतपथ ब्राह्मण मे शकुन्तला का वर्णन है और इसी शकुन्तला का वर्णन कालिदास भी करते है अर्थात् शतपथ ब्राह्मण मे भी यह ऐतिहासिक है और कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' मे भी। वैदिक ग्रंथो मे अप्सराओ को कुशल नृत्यांगनाओ के रूप मे प्रस्तुत किया गया है लेकिन नृत्य, सगीत के बिना बिल्कुल अधूरा होता है और इसीलिए वैदिक ग्रंथो मे नृत्य और संगीत के सम्बन्ध को स्थापित करने के लिए अप्सराओ को नृत्यांगनाओ और उनके सहयोगियो को गन्धर्व अर्थात् संगीतज्ञ के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। इसीलिए तैत्तिरीय संहिता मे गन्धर्वो और अप्सराओ को एक साथ ही उल्लिखित किया गया है। ब्राह्मण ग्रंथो मे भी अप्सराओ और गन्धर्वो को एक साथ उल्लिखित किया गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत वैदिक साहित्य के माध्यम से अप्सराओ के विभिन्न स्वरूपो का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

वैदिक साहित्यो मे कभी उन्हे हंसिनी के रूप मे माना गया है जो जल मे क्रीड़ा करती है अर्थात् हंसिनी जो रूपवान पक्षी का प्रतिनिधित्व करती है, उसे अप्सरा का रूप दे दिया

गया। कमल पुष्प का माला लिए वह प्रदर्शित की गयी है। कमल कोमलता और नाजुकता का प्रतिनिधित्व करता है तथा इसी का प्रतिनिधित्व अप्सराएं भी करती है। वैदिक साहित्य के उद्धरणो से यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है कि अप्सराएं कभी जलीय पक्षी है तो कभी प्रकृति के रूपो का प्रतिनिधित्व करती है। वैदिक साहित्य मे इन्हे राजा सोम से सम्बन्धित करके, वनस्पति से सम्बन्धित कर दिया गया है। अर्थात् वनस्पतियां वैदिक साहित्य मे वे रूप धारण कर लेती है, जो सौन्दर्य का प्रतिनिधित्व तो करती ही है, साथ ही मानव के लिए सर्वत्र उपलब्ध है। जिस प्रकार जल की धाराए अपनी अठखेलियो के लिए प्रसिद्ध है, उसी प्रकार अप्सराए भी अपनी चचलता और कामुकता के लिए प्रसिद्ध है। तात्पर्यत. वैदिक साहित्य के आधार पर अप्सराओ को शोध पत्र के प्रथम अध्याय मे उस रूपांगना के रूप मे प्रस्तुत किया गया है, जो प्राकृतिक रूप धारण करती है किन्तु लक्ष्य नर और नारायण को, ऋषि और सर्व साधारण को अपने मोहपाश मे बांधना है। इनके सौन्दर्य की व्याख्या इस प्रकार से वैदिक साहित्य मे की गयी है कि वे पारलौकिक प्रदर्शित हो परन्तु उनके क्रियाकलापो को लौकिकता प्रदान की गयी है।

द्वितीय अध्याय मे महाभारत, रामायण और पुराणो मे अप्सराओ के सन्दर्भ मे वर्णित प्रसंगो का उल्लेख किया गया है। महाभारत मे अप्सराओ को इन्द्र की परिचारिकाओ के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। महाभारत मे अप्सराओ को इन्द्र से जोड़कर उनका दैवीकरण किया गया है इसीलिए उन्हे भारद्वाज और गौतम ऋषि इत्यादि के तप को भग करने के लिए धरती पर भेजा जाता है। धरती पर अप्सराएं नृत्य, गीत और शारीरिक आसक्ति को प्रदर्शित कर ऋषियो के तप को भंग करती है अर्थात् इनका रूप तो दैवीय है परन्तु क्रिया कलाप मानवीय। महाभारत मे उर्वशी के रूप, यौवन और सौन्दर्य का आलंकारिक वर्णन करते हुए उसकी तुलना चन्द्रमा की किरणो से की गयी है और इसी सन्दर्भ मे अर्जुन का कथन वर्णित किया गया है कि उर्वशी, कुन्ती, माद्री, शची का प्रतिनिधित्व करती है अर्थात् अप्सराओ को यहां मातृ रूप भी प्रदान किया गया है।

महाभारत में रम्भा का भी वर्णन मिलता है, जिसे विश्वामित्र के तपोभंग के लिए

भेजा जाता है अर्थात् इस उद्धरण से यह प्रमाणित होता है कि रम्भा, अप्सरा का वह रूप थी जो ऋषियो के तप को भग कर सकती थी तथा इसका आधार उसका रूप और लावण्य था। महाभारत मेनका का वर्णन करता है जिसने विश्वामित्र के तप को भंग किया और मानवीय रूप धारण करके उसने विश्वामित्र को सहवास के लिए भी बाध्य किया जिससे शकुन्तला की उत्पत्ति होती है। यह, यह प्रमाणित करता है कि अप्सराएं वस्तुत उन स्त्रियो का प्रतिनिधित्व करती है जो अपने शारीरिक भाव भगिमा से किसी को भी आकर्षित करने की क्षमता रखती है। महाभारत मे जिस प्रकार तिलोत्तमा, मिश्रकेशी, घृताची, अद्रिका जैसी अप्सराओ की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है, उससे भी यह प्रमाणित होता है कि अप्सराएं उस प्राकृतिक सौन्दर्य को प्रस्तुत करती है जो पूर्णरूपेण मानवीय है।

रामायण मे अप्सरा की उत्पत्ति समुद्र मंथन से बतायी गयी है और यह भी घोषित किया गया है कि इन अप्सराओ को देवताओ और दानवो ने भी पत्नी के रूप मे स्वीकार नही किया परिणाम स्वरूप ये सर्व साधारण के लिए सुलभ हो गयी। इन्होने सर्व साधारण को आकर्षित करने के लिए नृत्य और संगीत व्यवसाय अपना लिया। अप्सराएं जो अद्वितीय रूप और कला का प्रतिनिधित्व करती थी उन्हे एक तरफ मर्यादा पुरूषोत्तम राम के दरबार मे स्थान मिला तो दूसरी तरफ मेघनाद के दरबार मे भी उन्हे स्थान प्राप्त था। तात्पर्यत रामायण मे वर्णित आख्यानो से इन्हे तीन रूप प्रदान किया जा सकता है- प्रथमतया देवलोकीय उपभोग के वस्तु के रूप मे, द्वितीय ऋषियो के तपभग कर्त्ता के रूप मे और तृतीय सर्वसाधारण के लिए उपलब्ध नृत्य और संगीत मे पारगत रूपांगनाओ के रूप मे।

वायु, विष्णु, ब्रह्माण्ड और मत्स्य पुराण के अनुसार गन्धर्व और अप्सराओ का सहवास सुमेरू पर्वत पर होता था। इस कथन से यह प्रमाणित होता है कि पुराणो मे भी अप्सराओं को सांसारिक स्त्रियां माना गया है। विभिन्न पुराणों मे अप्सराओ को विभिन्न रूपो मे वर्णित करते हुए इन्हे दिव्य नर्तकियां घोषित किया गया है। यहां दिव्य का तात्पर्य स्वर्ग या ईश्वर लोक से नही लगाया गया है बल्कि ये वे रूपसी स्त्रियां है जिसकी कल्पना मात्र की जा सकती है अतः इन्हे दिव्य घोषित किया गया है। पुराण मे कई सन्दर्भ है जहां इन्हे

निम्न कोटि की स्त्रियो मे परिगणित करके वारवनिताओ के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। विष्णुपुराण मे तो इन्हे राजकुमारियो के रूप मे वर्णित किया गया है तथा यह भी घोषित किया गया है कि ये अप्सराए वैवाहिक जीवन बिताने तथा पति प्राप्त करने की आकाक्षी थीं। वायुपुराण के अध्यायो मे गन्धर्व तथा अप्सराओ के चौदह कुलो का वर्णन दिया गया है अर्थात् अप्सराओ को उनके रूप, सौन्दर्य, शारीरिक आकर्षण और कार्य की दक्षता के आधार पर वर्गीकृत कर दिया गया है। कभी इन्हे अमृत से, तो कभी वायु से और कभी प्रकृति से उत्पन्न होने वाली स्त्रिया घोषित किया गया है। पृथ्वी से भी इनकी उत्पत्ति को जोडा गया है। पुराणो के विवरणो का प्रयोग करते हुए इस अध्याय मे अप्सराओ को दिव्य और अलौकिक सौन्दर्य की प्रतिमा प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी है जो मनुष्य के आकांक्षा और कल्पना की रूप प्रतीत होती है।

तृतीय अध्याय 'मौर्य काल से लेकर गुप्तोत्तर कालीन साहित्यो मे अप्सराओं का प्रतिबिम्बन' प्रस्तुत करता है। बौद्ध पालि ग्रंथो मे अप्सराए सौन्दर्य और विशिष्ट आकर्षणो का केन्द्र बिन्दु समझी जाने लगी थी। 'ललित विस्तर' मे वर्णित है कि कामदेव ने अप्सराओ को पृथ्वी पर बोधिसत्वो की परीक्षा के लिए भेजा, जिन्होने अपने रूप की ऐसी लीला बिखेरी जो बोधिसत्वो को भी मन्त्र मुग्ध कर देती थीं अर्थात् बौद्ध साहित्य भी अप्सराओ को उन कामजन्य स्त्रियो के रूप मे प्रस्तुत करता है जो तपस्वियो के तपोभंग मे प्रयुक्त की जाती थी। यहां अप्सराएं पुनः अपना स्वरूप परिवर्तित करती है और गणिका का रूप धारण करती है। अत· अप्सराओ का बौद्ध साहित्यो मे मानवीकरण किया गया है। यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि अप्सराए ऋग्वैदिक, उत्तरवैदिक साहित्यो और महाकाव्यो मे गायन, वादन और नृत्य कला के प्रस्तुत कर्त्ता के रूप मे स्वीकृत की गयी है, उनकी स्वीकृति बौद्ध साहित्य भी प्रदान करते है। अम्बपाली का आतिथ्य बुद्ध ने भी स्वीकार किया अर्थात् अप्सराए गणिका के रूप मे वे स्त्रिया थी जो बुद्ध को भी प्रभावित कर सकती थी। बौद्ध धर्म से सम्बधित विभिन्न साहित्यों में गणिकाओ को वही सम्मानित स्थान प्राप्त है जो इन्द्र के दरबार मे अप्सराओ को प्राप्त था। गणिका और अप्सरा का व्यवसाय एक है, दोनो अपने

रूप से देवता, ऋषि और सर्वसाधारण को आकर्षित करने की क्षमता रखती है। देवलोक मे जो कार्य अप्सराओ को प्रदान किया गया है वह बौद्ध साहित्यो के अनुसार पृथ्वी लोक पर गणिकाए सम्पादित करती थीं।

जैन साहित्य मे भी गणिकाओ का उल्लेख है। इन्हे कलाओ मे निपुण और मानव की कामाग्नि को उत्पन्न करने वाली, सुशिक्षित और नृत्य कला मे पारंगत घोषित किया गया है। जैनियो ने जिन स्वरूपो मे गन्धर्व अप्सरा और किन्नरो का वर्णन किया है उनका वही स्वरूप वैदिक साहित्यो मे भी मिलता है। इस सन्दर्भ मे जैन साहित्य मे इन्द्र के सभा मे उपस्थित अप्सराओ का भी चित्रण किया गया है और इन्हे देव नर्तकी की उपाधि दी गयी है लेकिन जैन साहित्य के एक अन्य प्रसग मे गधर्वो के साथ इनके नृत्य का उल्लेख है। जैन परम्परानुसार गन्धर्व भी उन्ही कलाओ मे निपुण है जिन कलाओ मे अप्सराए निपुण घोषित की गयी है। अर्थात् उनके कला ज्ञान, भाव भंगिमा के प्रयोग का समीकरण, जैन साहित्य मे गणिकाओ के साथ कर दिया गया है। 'उत्तराध्यायनसूत्र' मे वर्णित है कि जो सांसारिक समारोह आयोजित किये जाते थे उसमे रूपवान स्त्रियो की भी भागीदारी होती थी, जो नृत्य और सगीत का कार्य करती थी। 'न्यायधम्मकहा' मे इन्हे धनाढ्य व्यक्तियो के दरबार मे नर्तकियो के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। बौद्ध और जैन साहित्य का यहां उल्लेख करने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार देवताओ का अवतरण सांसारिक पुरूषो के रूप मे होना प्रारम्भ होता है, उसी तरह अप्सराएं भी गणिकाओ के रूप मे, सांसारिक स्त्री रूप मे अवतरित होती है।

पतजंलि ने अपने 'महाभाष्य' मे अप्सराओ का उल्लेख किया है और उनके मतानुसार गीत, नृत्य मे निपुण नारियो का एक वर्ग अप्सरा के रूप मे वर्णित किया गया है। यह विश्लेषण भी अप्सराओ का मानवीय रूप प्रस्तुत करता है। कौटिल्य यद्यपि अप्सरा शब्द का प्रयोग नही करता है किन्तु अप्सराओ से जुड़े वृत्ति का उल्लेख करते हुए गणिका का वर्णन करता है और इन्हें भी वह कुशल नृत्यांगनाओ के रूप मे प्रस्तुत करता है जो इन्द्र के दरबार मे अप्सराएं प्रस्तुत करती थी। 'नाट्शास्त्र' मे भी उन चौसठ कलाओ मे निपुण

नर्तकियो का वर्णन है जिसमे उर्वशी, मेनका, तिलोत्तमा दक्ष घोषित की गयी है। 'मनुस्मृति' के समय तक अप्सराओ को तो विधाता की आदिम सृष्टि के रूप मे वर्णित किया गया है, जिसका तात्पर्य है कि अप्सराए सृजनात्मक शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है।

ऋग्वेद मे यदि उर्वशी का उल्लेख है, तो कालिदास के 'विक्रमोर्वशीयम्' मे भी उर्वशी को मुख्य पात्रा बताया गया है और इसे कुशल नृत्यांगना घोषित किया गया है। इसमे स्पष्ट रूप से वर्णित है कि इन्द्र के शाप से उर्वशी को पृथ्वी लोक मे आना पडा और यहां आकर वह एक राजा की आसक्ति मे बंध जाती है तथा पुत्र उत्पन्न करती है। अर्थात् उर्वशी पृथ्वी लोक की कन्या के रूप मे परिवर्तित हो जाती है। कालिदास का प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' की नायिका शकुन्तला, मेनका की पुत्री के रूप मे वर्णित की गयी है और वह दुष्यन्त के प्रेम पाश का शिकार हो जाती है। यह विश्लेषण भी वर्णित करता है कि अप्सराएं गुप्त काल तक सांसारिक नारी का रूप धारण कर लेती है। कालिदास के साहित्य मे यह भी वर्णित है कि इनका प्रयोग तपस्वियो की तपस्या भग करने मे किया जाता है और इसलिए अप्सराओ का मानवीकरण कर दिया गया है।

मौर्य काल से लेकर गुप्तोत्तर कालीन संस्कृत साहित्यो के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अप्सराओ का दो रूप था। यह अर्द्धदैवीय स्वरूप और गणिका स्वरूप भी धारण करती है। विभिन्न साहित्यकारो ने इनके कामुक स्वरूपो का वर्णन करते हुए इनका रसिक वर्णन किया है। वात्स्यायन के अनुसार ये चौसठ कलाओ मे निपुण घोषित की गयी है और ये कलाएं मानव को सम्मोहित करने की शक्ति रखती है। नाट्शास्त्र यह भी वर्णित करता है कि गणिका के रूप, सौन्दर्य, गुण तथा कला का उपयोग समाज के सदस्य शुल्क देकर कर सकते थे और ये गणिकाएं रूप, गुण, शील, यौवन और माधुर्य से संयुक्त थी। इस विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अप्सराएं अपने रूप, सौन्दर्य, यौवन और कला का जो प्रतिबिम्बन देवलोक में करती है, उनके इन्ही रूपों और कलाओं का प्रतिबिम्बन पृथ्वी लोक पर गणिकाएं करती है।

चतुर्थ अध्याय मे 'हर्ष काल से लेकर बारहवी वी शती तक साहित्यो मे अप्सराओ

के प्रतिबिम्बन' का मूल्यांकन किया गया है। विभिन्न साहित्यो के मूल्याकन से यह स्पष्ट होता है कि हर्ष कालीन साहित्यो मे जो अप्सराओ का रूप, कार्य, व्यवसाय वर्णित किया गया है वह पौराणिक विवरणो से मिलता जुलता है। बाणभट्ट ने अपने ग्रथ 'कादम्बरी' मे कादम्बरी और महाश्वेता को अप्सराओ के कुल से सम्बन्धित घोषित किया है लेकिन दोनो को एक रूपवान कन्यायो के रूप मे पृथ्वी लोक पर ही अवस्थित किया गया है। भतृहरि ने अपने ग्रंथ 'श्रृंगार शतक' मे वर्णित किया है कि कठिन तपस्या के बाद व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है और इस स्वर्ग प्राप्ति का उद्देश्य अप्सराओ का भोग करना भी है। इससे यह प्रतीत होता है कि ये सौन्दर्यतम और दिव्यतम स्त्रिया है, जो मुनष्य के लौकिक आर पारलौकिक दोनो जीवन से सम्बन्धित होती है। भारवि ने अप्सराओ का विहार स्थल हिमालय की चोटि बताया है और यह भी वर्णित किया है कि अर्जुन की तपस्या भग करने के लिए इन्द्र ने अप्सराओ को भेजा था। अप्सराओ के सृजनकर्त्ता के रूप मे ब्रह्मा को प्रस्तुत किया गया है। यहां ब्रह्मा, इन्द्र और अर्जुन तीनो से अप्सराओ को जोड दिया गया है।

हर्षोत्तर काल मे सामन्तवाद की उत्पत्ति के बाद उत्तर तथा दक्षिण भारत मे शासको को देवत्व का रूप प्रदान किया जाने लगा तथा इसे सार्थकता प्रदान करने के लिए अप्सराओ को पृथ्वी लोक पर भी देवताओ का सानिध्य प्रदान करने के लिए इन्हे देवदासी के रूप मे प्रस्तुत किया गया।

सातवी से नवी शताब्दी के मध्य 'वोटाओ' का उल्लेख इस अध्याय मे किया गया है, जिन्हे भगवान शिव की सेवा करने के लिए मन्दिरो को अर्पित कर दिया जाता था। ये वोटाएं, देवदासियो का ही एक रूप है। इस अध्याय मे ह्वेनसांग, अलबरूनी, कल्हण इत्यादि के विवरणो को उद्धृत करते हुए देवदासियो के प्रचलन को प्रमाणित किया गया है। उत्तरभारत मे देवदासियां सिर्फ देवो को प्रसन्न करने वाली वस्तु के रूप में ही नही बल्कि भगवान के प्रसाद के रूप में वितरित की जाने वाली वस्तु के रूप मे परिवर्लित कर दी गयी है। अलबरूनी का वर्णन है कि अप्सराओ का रूप और स्वरूप हर्षोत्तर काल मे भी नही बदला, बल्कि जब देवताओ ने स्थान परिवर्तित करके पृथ्वी लोक पर आकर बसना प्रारम्भ

किया तो अप्सराएं भी अपना स्थान परिवर्तित कर लेती है। यहा यह विदित करना आवश्यक है कि ऋग्वैदिक काल से ही अप्सराओ को देवताओ की सहगामिनी के रूप मे प्रस्तुत किया जाता रहा है, तो यह स्वाभाविक था कि जब देवताओ को समुण रूप मे पृथ्वी लोक पर अवतरित कर दिया गया तो अप्सराएं भी अपना स्थान परिवर्तित कर लेती है तथा देवलोक से पृथ्वी लोक पर आकर बसना प्रारम्भ कर देती है।

क्षेत्रीय आधार पर भी इनके स्वरूप मे परिवर्तन होता है। उत्तर और दक्षिण मे ये रूपवती अप्सराएं, देवदासियो का रूप धारण करते हुए देवताओ की सहगामिनी बनी रही तो पूर्वी भारत मे सन्ध्याकर नन्दि और जीमूत वाहन के आधार पर उन्हे भोग्या नारियो के रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है। पाल वश के अन्तर्गत अप्सराएं पूर्ण रूपेण अपने पारलौकिक स्वरूप का परित्याग कर लौकिक रूप धारण कर लेती है जो राजा और मामान्य जनता के भोग के लिए उपलब्ध है। जब मन्दिरो के लिए धन की आवश्यकता पडती थी तो ये अप्सराए, गणिकाओ का रूप धारण कर अपने आप को वेश्याओ मे परिवर्तित कर देती थी ताकि अर्थ हासिल कर मन्दिरो मे अवस्थित देवताओ की सेवा की जा सके। सोमनाथ मन्दिर, राजा विक्रमांकदेव के मन्दिर, चोल कालीन बृहदीश्वर मन्दिर सभी मे नृत्य और संगीत मे पारंगत देवदासियो की उपस्थिति थी।

पंचम अध्याय मे भारतीय कला मे अप्सराओ का प्रतिबिम्बन प्रस्तुत किया गया है और यहां भी उपसंहार के प्रथम पृष्ठ मे वर्णित विचारधार की ही अभिव्यक्ति होती है कि अप्सराएं विभिन्न स्वरूप धारण करती है जैसे मौर्यकालीन कला मे यह यक्षी के रूप मे दिखाई देती है और जिस तरह देव लोक मे अप्सराएं गन्धर्वो की पत्नियां थी उसी प्रकार पृथ्वी लोक पर ये यक्षो की पत्नी के रूप मे प्रस्तुत की गयी है।

भरहुत स्तूप पर बनी विशेष प्रकार की नारी मूर्तियां वृक्ष की शाखा झुकाये, या तने को शरीर से लगाए, या उनके नीचे प्रदर्शित की गयी है। इन मूर्तियो के नाम भारतीय कला समीक्षा मे वृक्षिका, शालभंजिका, यक्षी, यक्षिणी आदि बताया गया है। यक्ष-यक्षी का सम्बन्ध प्राचीन भारतीय लोक समाज मे वृक्षों से जोड़ा गया है और इन्हे उर्वरा शक्ति से

सम्पन्न माना गया है। जल तथा वृक्ष दोनो ही उर्वरा शक्ति के साधन माने जाते हे, दोनो मे ही उनका निवास है। मातृशक्ति एवं प्रजनन की देवी के रूप मे इनके स्वरूप को स्पष्ट करने हेतु ही उनके उन्नत स्तन तथा भारी नितम्ब बनाए गए है। इसी प्रकार गन्धर्व तथा अप्सरा को भी जल तथा प्रजनन से सम्बन्धित माना गया है। प्रजनन के देवता होने के कारण ही गन्धर्व तथा अप्सरा को प्रजापति ने मिथुन रूप मे उत्पन्न किया है। जल से सम्बन्धित होने के कारण ही अप्सरा को अपनी चोच मे पद्मपुष्प अथवा माला लिए प्रदर्शित किया गया है। इस तरह यहा यक्ष-यक्षी तथा गन्धर्व और अप्सरा मे समानता दिखाई देती है। भरहुत स्तूप पर चार अप्सराओ का नाम उल्लिखित है जो सुभद्रा, पद्मावती, मिश्रकेशी और अलंबुषा है।

विभिन्न साहित्यो जैसे महाभारत, रामायण, मत्स्य पुराण मे अप्सराओ का जो चित्रण प्रस्तुत किया गया है उसी को आधार मानकर प्राचीन और पूर्वमध्य कालीन कला मे इनका चित्रण प्रस्तुत किया गया है और यही कला और साहित्य का संगम ही अप्सराओ के रूप और स्वरूप को प्रस्तुत करता है। दक्षिण भारत के द्रविड़ शैली के कला मे प्राचीन साहित्यो मे वर्णित अप्सराओ को देखा जा सकता है। उसी प्रकार पूर्वी भारत मे कलिग, उड़ीसा के मन्दिरो जैसे भुवनेश्वर, कोणार्क और जगन्नाथ पुरी के मन्दिरो मे जो अप्सराओं का चित्रण किया गया है वे न सिर्फ स्थापत्य कला के विशिष्ट उदाहरण है बल्कि अप्सराओ के देव कन्याओ के रूप मे चित्रण को भी प्रस्तुत करते है। उसी प्रकार उत्तरभारत और मध्यभारत के मन्दिरो मे भी अप्सराओ को चित्रण प्राप्त होता है। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण अप्सराओ का प्रतिबिम्बन भरहुत स्तूप से प्राप्त होता है। अप्सराओ की कलात्मक अभिव्यक्ति यह भी प्रमाणित करता है कि ये सभी सम्प्रदायो से जुड़े हुए मन्दिरो मे समानता के आधार पर अंकित की गयी हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि अप्सराएं सभी सम्प्रदायो से जुड़े हुए देवताओ को प्रसन्न करने वाले विषय के रूप मे प्रस्तुत की गयी है। हर जगह इनका एक ही रूप प्रस्तुत किया गया है अर्थात् ये सौन्दर्य, लावण्य और कामुकता से परिपूर्ण प्रदर्शित की गयी है और इन्हें नर्तकी या गायिका के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। इससे यह प्रमाणित

होता है कि अप्सराए वास्तविकता मे वह कामुक स्त्रिया है जो मानव के हृदय की अतृप्त इच्छाओ को परिपूर्ण करती है। इस सन्दर्भ मे रामधारी सिंह दिनकर का 'उर्वशी' खण्ड काव्य का वर्णन किया जा सकता है जिससे उर्वशी ने स्वत: घोषित किया है कि वह मनुष्य के चेतना के जल मे रूप, रंग, रस और गन्ध से परिपूर्ण कमल की मूर्ति है जिससे मानव की सभी इन्द्रियां तृप्त होती रहती है और इसी भावना का चित्रण खजुराहो के मूर्तियो मे भी अभिव्यक्त किया गया है। इन पर भी काम भाव से युक्त स्त्री-पुरूषो की मूर्तिया उत्कीर्ण है, किन्तु यह अश्लील नही बल्कि पुरूष और स्त्री के मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध और मनोभावना का प्रदर्शन करती है तात्पर्यत पचम अध्याय मे जो विभिन्न कला कृतियो का इस सन्दर्भ मे विवरण दिया गया है वे वस्तुत स्त्रियो के कार्य और मनोविज्ञान को स्पष्ट करता है और यही उत्कृष्ट कलाकृति है जिसने विश्वभर के वास्तुकारो को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है।

अत. इस शोध प्रबन्ध मे प्रयुक्त स्त्रोतो के आधार पर यह वर्णित करने की चेष्टा की गयी है कि जब देवताओ ने सगुण रूप धारण किया तो पौराणिक साहित्यो मे वर्णित अप्सराओ ने भी अपने रूप और कार्य स्थली मे परिवर्तन किया। इतिहास का यह मूल मन्त्र है कि जब स्थितिया, परिस्थितियां, स्थान, पर्यावरण और प्रकृति मे परिवर्तन होता है तो इतिहास के पात्र और घटनाए स्वत परिवर्तित हो जाते है। इसी ऐतिहासिक निरन्तरता और क्रमिकता का प्रतिनिधित्व अप्सराए करती है जो न सिर्फ अपनी कार्यस्थली बल्कि अपने स्वरूपो को भी परिवर्तित करती है अर्थात् देवलोक से कार्यस्थली पृथ्वीलोक हो जाता है और स्वरूपो मे वह कभी गणिका, यक्षी तो कभी देवदासी का रूप धारण करती है। परन्तु उनके सौन्दर्य और शारीरिक लावण्य मे आकर्षक शक्ति स्थिर बनी रहती है।

अत: देवताओ की तरह अप्सराएं भी ऋग्वैदिक साहित्य से लेकर बारहवी शती तक साहित्य और कला मे निर्गुण भी है और सगुण भी, दोनो मे गुण स्थिर है लेकिन रूप परिवर्तित होता रहता है और यही प्रमाणित करना शोध का लक्ष्य है। इसी विषय को रामधारी सिंह दिनकर ने अपने उर्वशी खण्डकाव्य मे उल्लिखित और प्रमाणित किया है।

सन्दर्भ, ग्रन्थ-सूची

प्राथमिक श्रोत

ऋग्वेद सहिता	एफ मैक्समूलर /स / लन्दन, वैदिक सशोधन मण्डल, पूना, आग्ल अनुवाद, एच एच विल्सन, पूना
शुंक्ल यजुर्वेद माध्यदिनीय सहिता	निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1939
कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय संहिता	काशीनाथ शास्त्री आगोरा / म /पूना 1904
अथर्ववेद	एस डी सातवलेकर / म / स्वाध्याय मण्डल, औंध, 1939
सामवेद	अनुवाद सहित बेनफे, लिपजिग. 1848
वाजसनेयी संहिता	ए बेबर, लन्दन, 1852 वी एस सातवलेकर, सूरत,
तैत्तिरीय सहिता	ए बेबर, बर्लिन, 1871-72
ऐतरेय ब्राह्मण	आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, 1930
कौशीतकि ब्राह्मण .	सायण भाष्य सहित, ए एस.एस न 65
गोपथ ब्राह्मण	आर एल मित्रा, एच विद्याभूषण, कलकत्ता. 1872
तैत्तिरीय ब्राह्मण	आर शामा. शास्त्री /स /मैसूर, 1921 बि इ कलकत्ता, 1959
शपपथ ब्राह्मण	अल्बर्ट, वेबर /सं /लिपजिग, 1924.
ऐतरेय अरण्यक :	ए.एस.एस न. 37, पूना, 1898 अनु. ए बी. कीथ, आक्सफोर्ड, 1909
तैत्तिरीय उपनिषद .	आनन्दाश्रम प्रेस, पूना, 1911
ऐतरेय उपनिषद .	अनु. शंकर के भाष्य सहित, गीता प्रेस,

गोरखपुर, 1961

वृहदारण्यक उपनिषद — आनन्दाश्रम, सस्कृत सीरीज, पूना, 1914

कठोपनिषद, केनोपनिषद, छान्दोग्य उपनिषद, माण्डुक्य उपनिषद, कौशितकि उपनिषद, मुण्डक, मैत्री, श्वेताश्वरोपनिषद — हिन्दी अनु शकर भाष्य महित, गीता प्रेम, गोरखपुर,

आश्वलायन गृह्य सूत्र — म म गणपति शास्त्री द्वारा सम्पादित, त्रिवेन्द्रम, 1923

पारास्कर गृह्य सूत्र — गोपाल शास्त्री नेने, वाराणसी,

वैखानस गृह्य सूत्र — डब्ल्यू कलन्द, कलकत्ता, 1929

मानव गृहय सूत्र — राम जी हर्ष जी शास्त्री /म /गा ओ सि स 35

गोमिल गृह्य सूत्र — चन्द्रकान्त तारकालकार /म , . वि इ कलकत्ता, 1880

मनुस्मृति — पंचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा वगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, वि0सं0 1320

नारद स्मृति — /अनु /जे जोली, एस बी इ ,33,1889

कात्यायन स्मृति — पी वी काणे, बाम्बे, 1933

वृहस्पति स्मृति — ए.फुहरर, लिपजिंग, 1879 अनु०जे० जोली,एस०बी०इ०,33,आक्सफोर्ड,1989

गौतम धर्मसूत्र — हरिनारायण आप्टे द्वारा सम्पादित, पूना, 1910

वशिष्ठ धर्मसूत्र — अनु./जी बुहलर, एस बी इ ,4-14,

	आक्सफोर्ड, 1879-82
आपस्तम्ब धर्मसूत्र	चित्र स्वामी /स /वाराणसी, 1932
बौधायन धर्मसूत्र	श्री निवासाचार्य द्वारा सम्पादित, मैसूर, 1907
महाभारत	श्री पाद दामोदर सातवलेकर द्वारा सम्पादित, बम्बई 1892-1907
महाभारत	1 क्रिटिकल एडिशन, पूना, प्रताप चन्द्र राय स कलकत्ता, 2 अनुवाद / ग्रंथ सहित/ गीता प्रेस, गोरखपुर / तृतीय सस्करण/, 1968
रामायण	1 अनुवाद / हिन्दी/ पाण्डेय प रामनारायणदत्त शास्त्री, गीताप्रेस, गोरखपुर सं 2017 2 वाल्मीकिकृत/ नारायण स्वामी/स / मद्रास, 1933 3. एच पी. शास्त्री/सं./लन्दन,1952-59 4 वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, 1912-20
भागवद्गीता	गीता प्रेस, गोरखपुर, 1960
ब्रह्म पुराण	गुरुमण्डल ग्रन्थमाला सीरीज, कलकत्ता, 1954. ए एस एस. पूना, 1895
ब्रह्माण्ड पुराण	वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, 1913
ब्रह्मवैवर्त पुराण	गुरुमण्डल ग्रन्थमाला सीरीज, कलकत्ता, 1955. श्री वेकटेश्वर स्ट्रीम प्रेस, बम्बई, स. 1966

तारिणीश झा/ स / हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1981

वामन पुराण — नाग प्रकाशन, दिल्ली वेकटेश्वर प्रेस सस्करण, बम्बई,। अनु गीताप्रेस, गोरखपुर, 1962 ई

वायु पुराण — गुरुमण्डल, ग्रन्थमाला / मनसुख राय मोर/ कलकत्ता, 1959 ए एस एस ,पूना,1995

वाराह पुराण — पी एच शास्त्री, बी झाई, कलकत्ता, 1895

अग्नि पुराण — गुरुमण्डल ग्रन्थमाला 17 / मनसुख मोर, कलकत्ता, 1957

कूर्म पुराण — अंग्रेजी अनुवाद सहित/ सर्व भारतीय काशी राज न्यास/, रामनगर, वाराणसी, 1972। एन मुखोपाध्याय, बी इ कलकत्ता, 1890

पद्म पुराण — गुरुमण्डल ग्रन्थमाला / मनसुख राय मोर/ कलकत्ता, 1957

मत्स्य पुराण — आनन्दाश्रम सस्कृत ग्रन्थावली, ग्रन्थाक 54. वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, 1895

हिन्दी अनुवाद, राम प्रताप त्रिपाठी, प्रयाग, सं. 2003.

श्री राम शर्मा आचार्य / सं./ प्रथम संस्करण, बरेली, 1970.

भागवत पुराण — गीता प्रेस, गोरखपुर, सं. 2018.

विष्णु पुराण — श्री मुनिलाल गुप्त /सं./ गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 1990.

वृहन्नारदीय पुराण	पी एच शास्त्री, बी आई ,कलकत्ता, 1891
लिग पुराण	जे विद्यासागर, बी इ कलकत्ता, 1885
मार्कण्डेय पुराण	बि इ , कलकत्ता,1855-63 अंग्रेजी अनुवाद -पार्जिटर, व्यासदेव रचित, कलकत्ता, 1962.
विष्णुधर्मोत्तर पुराण	श्री वेकटेश्वर स्ट्रीम प्रेस, बम्बई,म 1969, तृतीय खण्ड, प्रियबाला शाह /म / बड़ौदा, 1958
शिव पुराण	श्री राम शर्मा आचार्य/ स / बरेली, 1972 जे एल शास्त्री / सं / मोती लाल बनारसी दास,दिल्ली, 4 खण्ड, 1970,
साम्व पुराण	अनु वी सी श्रीवास्तव, इलाहाबाद, 1975
सौर पुराण	सम्पा / वी जी आप्टे, ए एस एस ,पूना, 1924
स्कन्द पुराण	वाराणसी सं./ नागर खण्ड, ए बी एल अवस्थी / स / द्वितीय संस्करण, कैलाश, भाग 1, लखनऊ, 1976
हरिवंश पुराण	आर किजवाडेकर, पूना, 1936 अनुवाद /हिन्दी/ गीताप्रेम, गोरखपुर / चतुर्थ स./1981
अंगुत्तर निकाय	सं. आर मारिस तथा इ हार्डी, पी. टी एस., लन्दन, 1885-1900.
दिव्यावदान	सं. कावेल, कैम्ब्रिज, 1886
ललित विस्तर	अनुवादक, शांति भिक्षु शास्त्री, उ.प्र हिन्दी

सस्थान, लखनऊ 1984

विनय पिटक — अनुदित, रीज डेविड्स, टी डब्ल्यू आर ओल्डेन वर्ग, सेक्रेड बुक्स ऑफ दि ईस्ट, जि 13, 17,20, आक्सफोर्ड, 1881-85 हिन्दी, महापडित राहुल सांकृत्यायन, महाबोधि सभा, सारनाथ, 1935

सयुक्त निकाय — लियोन फियर, एम और मिसेज रीज डेविड्स पी टी एस , लन्दन, 1884-1904

मज्झिम निकाय — ट्रेकनर, वी और चामर्स, आर पी टी एस , लन्दन, 1914

दीघनिकाय — अनुदित महापडित राहुल सास्कृत्यायन, महाबोधि सभा, सारनाथ, 1936

मिलिन्दपन्हो — सम्पादित, वाडेकर, आर डी , बम्बई, 1940,

आचारांग सूत्र — अनुदित, जकोबी, सेक्रेड बुक ऑफ दि ईस्ट जिल्द 22 / जैन सूत्र/ आक्सफोर्ड, 1884

थेरोगाथा — सम्पादित एन.के., बम्बई, 1937.

धम्मपद अट्ठकथा — सम्पादित महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन, रगून, 1930.

निरुक्त / यास्क — पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर, 1934

महाभाष्य / पतंजलि — एफ कील हार्न द्वारा सम्पादित, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई 1935

अष्टाध्यायी		काशिकावृत्ति, चौखम्भा पुस्तकालय, वाराणसी, 1952
अर्थशास्त्र/कौटिल्य		स गणपति शास्त्री, त्रिवेन्द्रम, 1921-25 / अनु / शामाशास्त्री,मैसूर, 1957
अमरकोश		स गुरु प्रसाद शास्त्री, वाराणसी, 1950ई
मालविकाग्निमित्रम्		एस कृष्णराव द्वारा सम्पादित, मद्रास, 1930
विक्रमोर्वशीयम्		एस पी पडित/ तृतीय सस्करण/ बी एम एस , बम्बई, 1901
अभिज्ञान शाकुन्तलम्		सतीश चन्द्र बसु द्वारा सम्पादित, वाराणसी 1897
मेघदूत / कालिदास		शूद्रक, द्वारा सम्पादित, विक्रम परिषद, काशी, वि स 2007
ऋतुसहार		कालिदास ग्रन्थावली, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, वि.सं 2007
रघुवश		कालिदास ग्रंन्थावली, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, वि स 2007
बृहत्सहिता		कर्न द्वारा सम्पादित, कलकत्ता, 1865
राजतरगिणी		दुर्गा प्रसाद द्वारा सम्पादित, म 1984 अंग्रेजी अनु स्टीन एव आर एस पाण्डेय, इलाहाबाद, 1935
कादम्बरी / बाणभट्ट	:	मथुरानाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1948
काव्यमीमांसा	.	सी डी. दलाल द्वारा सम्पादित, बड़ौदा,

	1917
प्रबध चित्तामणि/मेरुतुग	अग्रेजी अनु सी एच टानी, हिन्दी सम्करण मुनि जिन विजय, सिन्धी सीरीज न 1, 1933
कुट्टनीतम/ दामोदर गुप्त	सम्पा० मधु सूदन कौल, 1944
दायभाग/ जीमूतवाहन	जे विद्यासागर, द्वितीय सस्करण, कलकत्ता 1885, एच टी कोल्बुक,
वाइड रामचरित्रम्	निर्णय सागर प्रेस, पचम सम्करण, 1999 (सन्ध्याकरनन्दी)
पवनदूतम् /धोयी	ऐड० सी चक्रवर्ती, कलकत्ता, 1926 मोहराज पराजय (जिनपालसूरी)
चौर पंचाशिका/विल्हण	चौखम्बा सस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1971
विक्रमाक देव चरित/ विल्हण	चौखम्बा सस्कृत सीरीज वाराणसी, 1971
अह सुनत तकासीम फी मारफतिल अकालीम	बुशारी मुकद्दसी, द्वि०स० लीडन, 1906, हिन्दी अनु०,आ०भा०स०)
किताबुल हिन्द/अलबरुनी	ई०सी० सखाऊ का अग्रेजी अनुवाद 2, जिल्द मे, लन्दन 1914
प्रतिमा लक्षण	भारतीय वास्तु शास्त्र ग्रन्थ 4, भाग 2/ द्विजेन्द्र नाथ शुक्ल/ सं./ लखनऊ सं 2014.
शिल्प रत्न / कुमार	त्रिवेन्द्रम, सस्कृत सीरीज, त्रिवेन्द्रम, 1922. 1929
अशुमदभेदागम	आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, अंक 41,

पूना 1900 परिशिष्ट, /टी ए /गोपीनाथ राव/ एलिमेट्स ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी, जिल्द,भाग 2, जिल्द 2, भाग 2।

मानसोल्लास — द्वितीय स , जी के श्री गोन्डेकर, बडौदा 1939

वृहत्सहिता / वराहमिहिर/ — सरस्वती प्रेस, कलकत्ता, 1880

अंशुभेदागम, सुप्रभेदागम, पूर्वकारणागम, कामिकागम, कारणागम, मयमत तथा सकलागमसार सग्रह-के आवश्यक अश टी ए जी राव द्वारा इ एच आइ मे उद्धृत

चर्तुवर्गचिन्तामणि — हेमाद्रि/ व्रत खण्ड, खण्ड 2, बि इ कलकत्ता, स 1934, काशी सस्कृत सीरीज, न 235 / पुनर्मुद्रित/1985

काश्यपशिल्प — सं. वी जी आप्टे / आनन्दाश्रम संस्कृत, सीरीज, नं 95/, 1926

रूप मण्डन /सूत्रधार मण्डन/ — बलराम श्रीवास्तव / स./वाराणसी, स 2001.

देवतामूर्ति प्रकरण तथा रूपमण्डन/ सूत्रधार मण्डन — कलकत्ता संस्कृत ग्रन्थ माला, 12, कलकत्ता, 1936.

समराइ.गणसूत्रधार/ भोज — गायकवाड आरियन्टल सीरीज, बड़ौदा, 1924-25.

प्रतिमाएं, स्मारक तथा अभिलेख

कुमारस्वामी, ए के	केटलाग ऑफ इण्डियन कलेक्शन इन द म्युजियम ऑफ फाइन आर्ट्स, वोस्टन, 1923
चन्दा, आर पी	मेडिवल इण्डियन स्कल्पचरस इन द ब्रिटिश म्युजियम, लन्दन, 1936.
एण्डरसन, जे	केटलाग ऑफ इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता, 1883
बर्गेश, जे	एन्शिएट मोनमेन्ट्स, टेम्पुल्स एण्ड स्कल्पचरस ऑफ इण्डिया, 2 वाल्युम, लन्दन, 1897
वोगेल, जे एफ	केटलाग ऑफ द आर्कियोलाजिकल म्युजियम ऐट मथुरा, इलाहाबाद, 1910.
वोगेल, जे पी , एण्ड साहनी, डी आर	कैटलाग ऑफ द म्युजियम ऑफ आर्कियोलाजी ऐट सारनाथ, कलकत्ता, 1941
भट्टशाली, एन.के	आइक्नोग्राफी ऑफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचरस इन द डेक्का म्युजियम, डेक्का, 1929.
ब्लोच	सप्लीमेन्ट्री कैटलाग ऑफ दि आर्कियोलॉजिकल केटलॉग इन दि इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता
अग्रवाल, वी.एस. :	1. हैण्ड बुक ऑफ द स्कल्पचरस इन द कर्जन म्युजियम ऑफ आर्कियोलॉजी, इलाहाबाद 1933,

2 ए शार्ट गाइड टू द आर्कियोलाजिकल सेक्सन ऑफ द प्राविन्सियल, म्युजियम, इलाहाबाद, 1940

3 ए केटलाग ऑफ द ब्राह्मनिकल इमैजेज इन मथुरा आर्ट, लखनऊ 1951

एपिग्राफिया इण्डिका — समस्त वाल्युम, विभिन्न सम्पादन, कलकत्ता, दिल्ली, 1982. से.

सरकार, डी सी — सलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स वियरिंग ऑन इण्डियन हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन, वाल्युम प्रथम, यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1942.

फ्लीट, जे एफ — कार्पुस इन्सक्रिप्शन्स इन्डिकेरम, वाल्युम तृतीय / इन्सक्रिप्शन्स ऑफ द अर्ली गुप्त किंग्स एण्ड देयर सक्सेसरस/,लन्दन, 1888.

मजूमदार, एन जी — इन्सक्रिप्शन्स ऑफ बंगाल, वाल्युम तृतीय, राजशाही, 1929.

मजूमदार, आर सी — इन्सक्रिप्शन्स ऑफ कम्बुज,कलकत्ता,1955.

पाण्डेय, राजबली — हिस्टोरिकल एण्ड लिटरेरी, इन्सक्रिप्शन.

राजगुरू, एस एन — इन्सक्रिप्शसन्स ऑफ उड़ीसा, वाल्युम तृतीय, भुवनेश्वर, 1961.

मेटी, एस के एण्ड मुखर्जी,पी. — कार्पुस ऑफ बंगाल इन्सक्रिप्शन्स, कलकत्ता, 1967

मैकडानेल,ए.ए.एण्ड कीथ,ए.बी — वैदिक इण्डेक्स ऑफ नेम्स एण्ड सबजेक्ट्स, 2 वाल्यूम्स, लन्दन, 1912.

शब्दकोश

बुक, सी डी — ए डिक्शनरी ऑफ सलेक्टेड साइनोनिम्स इन द प्रिन्सिपल इण्डो-यूरोपियन लैंगवेजेज, शिकागो, 1949

हेस्टिग्स, जे — इनसाइक्लोपीडिया ऑफरिलिजन एण्ड एथिक्स, वाल्यूम 1-13, न्यूयार्क, 1908

ले़रोसेस — फ्रेन्च-इग्लिश, इग्लिश-फ्रेन्च डिक्शनरी, कार्डिनल, सं , न्यूयार्क, 1956.

ब्लूफील्ड, एम — ए वैदिक कनकारडेन्स, दिल्ली / पुनमुद्रित 1964

केनी, एम ए — कल्चरल हेरिटेज ऑफ इण्डिया, 4 वाल्युम, रामकृष्ण मिशन इन्स्टीटयूट, कलकत्ता, 1937-53

ऐन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन, लन्दन 1921.

गो़डे, एन ए — ए बिबलियोग्राफी ऑफ रामायण, पूना, 1943

दाण्डेकर, आर ए — वैदिक बिबलियोग्राफी, वाल्यूम प्रथम खण्ड द्वितीय पूना, 1961.

राइस, आर पी — एनालसिस एण्ड इण्डेक्स ऑफ महाभारत.

राय राम कुमार — वाल्मीकि रामायण कोश, चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1955.

शर्मा राणा प्रसाद — पौराणिक कोश, वाराणसी, 1986.

सोर्नमन, एस — एन इण्डेक्स टू द नेम्स इन द महाभारत,

	2 वाल्यूम्स, दिल्ली, 1963
आप्टे, वी एस	सस्कृत हिन्दी शब्द कोश, वाराणसी, 1966
	द स्टूडेन्ट्स इग्लिश-संस्कृत डिक्शनरी, वाराणसी, 1969
	सस्कृति इंग्लिश डिक्शनरी, बाम्बे, 1922
मणि, वी	पुराणिक इनसाइक्लोपिडिया, दिल्ली, 1979
मोनियर, विलियम्स	ए संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी, आक्सफोर्ड, 1951

गौण स्रोत

अवस्थी, ए बी एल	स्टडीज इन स्कन्द पुराण, भाग 4, ब्रह्मनिकल आर्ट एण्ड आइक्रोग्राफी, लखनऊ 1977.
अल्तेकर, ए एस	दि पोजिशन ऑफ ओमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन्स,बी.एच. यू० 1938
आप्टे, वी एम	सोशल एण्ड रिलिजियस लाइफ इन द गृहयसूत्राज (संशोधित संस्करण) बाम्बे, 1954
अग्रवाल, कन्हैयालाल	भारत के सांस्कृतिक केन्द्र खजुराहो, दिल्ली, 1980
आप्टे, वी एम	सोशल एण्ड रिलिजियस लाइफ इन द 7 गृहयसूत्राज /संशोधित संस्करण/ बाम्बे, 1954
अग्रवाल, वी. एस.	1. इण्डियन आर्ट, वाल्यूम 1,

वाराणसी, 1966

2 भारतीय कला, अहमदाबाद, 1966

3 मथुरा कला, अहमदाबाद, 1964.

4 स्टडीज इन इण्डियन आर्ट, वाराणसी, 1965.

5 इण्डिया एज नोन टू पाणिनी, लखनऊ 1953

6 कादम्बरी एक सांस्कृतिक अध्ययन, वाराणसी, 1958

7 हर्ष चरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, पटना, 1953

8 द हेरिटेज ऑफ इण्डियन आर्ट, दिल्ली, 1964.

अग्रवाल, उर्मिला — खजुराहो स्कल्पचर्स एण्ड देयर सिगनिफिकेन्स, दिल्ली, 1964

अयगर, एस के — 1 सम कन्ट्रीब्यूशन्स ऑफ साउथ इण्डिया टू इण्डियन कल्चर, कलकत्ता, 1923.

2. अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैष्णाविज्म इन साउथ इण्डिया, लन्दन, 1920.

अय्यर, सी पी रामास्वामी — केसेज ऑफ रिलिजन एण्ड कल्चर, बाम्बे, 1949.

अय्यर, एस · एवोल्यूशन ऑफ हिन्दू मोरल आइडियाज, कलकत्ता 1923.

अय्यर, के पी. : इण्डियन आर्ट-ए शार्ट इन्ट्रोडक्शन, पूना,

	1958
अग्निहोत्री, प्रभु दयाल	पतजलि कालीन भारत, पटना, 1964
आचार्य, के पी	इण्डियन आर्किटेक्चर एकाडिग टू मानसार शिल्पशास्त्र, आक्सफोर्ड, 1921.
आप्टे, वी जी	सगीत रत्नाकर, आनन्दाश्रम प्रकाशन, वाराणसी, 1942
अवस्थी, रामाश्रय	खजुराहो की देव प्रतिमाएँ, आगरा, 1967
अवस्थी, ए बी एल	स्टडीज इन स्कन्द पुराण, भाग 4, ब्रहमनिकल आर्ट एण्ड आइक्नोग्राफी, लखनऊ 1977
अली, मुजफ्फर	दि ज्याग्रफी ऑफ दि पुराणाज, नई दिल्ली, 1966.
बी एण्ड आर. आल्वीन,	द बर्थ ऑफ इण्डियन सिविलाईजेशन, पेगयून बुक्स, 1968.
बार्थ, ए	द रिलिजन्स ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1882.
बाशम, ए एल	स्टडीज इन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, कलकत्ता, 1964.
बरुआ, बी एम	भरहुत, कलकत्ता, 1934-37
भट्टाचार्या, बी.	दि इण्डियन बुद्धिस्ट आइक्नोग्राफी, कलकत्ता, 1958.
भट्टाचार्या, बी सी	इण्डियन इमैजेज, वाल्यूम 1, ब्रामनिक आइक्नोग्राफी, कलकत्ता, 1931.
ब्राउन, सी.जे.	क्वायन्स ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, 1922.
बैरेट, डी	स्कल्पचर फ्राम अमरावती इन दि ब्रिटिश

म्युजियम, लन्दन, 1985

भण्डारकर, डी आर — सम ऐसपेक्टस ऑफ एन्शिएन्ट इण्डियन कल्चर, मद्रास 1940

भट्टाचार्या, डी सी — आइक्रोग्राफी ऑफ कम्पोजिस्ट इमैजेज, नई दिल्ली, 1980

भट्टाचार्या, एच — द कल्चरल हेरिटेज ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, 1983

बनर्जी, जे एन — डेवलपमेट ऑफ हिन्दू आइक्रोग्राफी, कलकत्ता, 1956

पचोपासना / बंगाली/, कलकत्ता, 1970

भट्टाचार्या, जे एन — हिन्दूज कास्ट्स एण्ड सेक्टस, कलकत्ता, 1896.

बचोफर, लुडविग — अर्ली इण्डियन स्कल्पचर, 2 वाल्यूम, पेरिस, 1929

ब्लूमफील्ड, एम. — द रिलिजन ऑफ द वेद, न्यूयार्क, 1908

बनर्जी, आर डी — हिस्ट्री ऑफ उड़ीसा, 2 वाल्यूम, कलकत्ता, 1939.

द एज ऑफ द इम्पीरियल गुप्ताज, बनारस, 1933.

बसाक, आर जी — हिस्ट्री ऑफ नार्थ ईस्टर्न इण्डिया, कलकत्ता, 1934

बागची, पी सी — स्टडीज इन द तन्त्रास, कलकत्ता, 1939

प्री-आर्यन एण्ड प्री द्रवीडियन इन इण्डिया, कलकत्ता, 1929.

ब्राउन, पर्सी — इण्डियन आर्किटेक्चर / बुद्धिस्ट एण्ड हिन्दू पीरियड्स/ बाम्बे, 1965

बोस, पी एन — प्रिन्सपल्स ऑफ इण्डियन शिल्पशास्त्र, लाहौर, 1926.

भट्टशाली, नलिनीकात — आइक्रोग्राफी ऑफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचरस इन द ढाका म्युजियम, ढाका, 1929

भट्टाचार्या एस — महाभारत कालीन समाज, कलकत्ता, 1958

भट्टाचार्या, पी के — आइक्रोग्राफी आफ स्कल्पचरस, कलकत्ता, 1983

बर्नेट, एल डी — हिन्दू गाड्स एण्ड हीरोज, लन्दन, 1923

एन्टीक्यूटीज ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1913

भण्डारकर, आर जी . अर्ली हिस्ट्री ऑफ द दकन, कलकत्ता, 1957

वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड अदर माइनर सेक्ट्स / पुनर्मुद्रित/ वाराणसी, 1965.

भट्टाचार्य, डी सी — आइक्नोलॉजी ऑफ कम्पोजिट इमैजेज, नई दिल्ली, 1980

भट्टाचार्य, ए के — दि कान्सेप्ट ऑफ सुर-सुन्दरी, कल्ट ऑफ देवदासी एण्ड अर्लिमेडिवल आर्किटेक्चर स्टेट्स इन पोजिशन ऑफ वोमेन, खण्ड 1, वाराणसी, 1988.

भाटिया, प्रतिपाल : दी परमाराज दिल्ली, 1970

चक्रवर्ती, सी. . द तन्त्रास, स्टडीज आन देयर रिलिजन

एण्ड लिटरेचर, कलकत्ता 1963.

चट्टोपाध्याय, सुधाकर : रेवोल्यूशन ऑफ हिन्दू सेक्ट्स, नई दिल्ली, 1970.

चतुर्वेदी, परशुराम : वैष्णव धर्म, इलाहाबाद, 1953.

चतुर्वेदी, सीताराम : कालिदास ग्रन्थावली, वाराणसी, 1980.

चम्पकलक्ष्मी, आर. : वैष्णव आइक्रोग्राफी इन द तमिल कन्ट्री, नई दिल्ली, 1981.

दास, ए.सी. : ऋग्वेदिक इण्डिया, वाल्यूम प्रथम, कलकत्ता, 1921.

धामा, बी.एल. और चन्द्रा, एस.सी. : खजुराहो /केदारनाथ शास्त्री द्वारा हिन्दी अनुवाद/ नई दिल्ली, 1962.

डुंब्रेल, जी.जे. : आइक्रोग्राफी ऑफ सदर्न इण्डिया, पेरिस, 1937.

दाहलक्यूस्ट, ए. : मेगस्थनीज एण्ड इण्डियन रिलिजन, उपसाला, 1962.

देसाई, देवांगना : इरोटिक स्कल्पचर ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 1975.

देसाई, कल्पना : आइक्रोग्राफी ऑफ विष्णु, नई दिल्ली, 1973.

डे., एम.सी., : माइ पिलग्रिमेज टू अजन्ता एण्ड बाघ, लन्दन, 1925.

डेनेक, एम. एम. : इण्डियन स्कल्पचर, लन्दन, 1963.

डे, एस. के. : एस्पेक्ट्स ऑफ संस्कृत लिटरेचर, कलकत्ता, 1959.

अर्ली हिस्ट्री ऑफ द वैष्णव फेथ एण्ड मोमेण्ट इन बंगाल, कलकत्ता,1961

दाण्डेकर, आर एन — हिस्ट्री ऑफ द गुप्ताज, पूना, 1941

दिवाकर, आर आर — बिहार थ्रू द एजेज, आरिएन्ट लांगमेन्स, कलकत्ता, 1959.

दासगुप्ता, एस एन — हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलासफी, 5 वाल्यूम, कैम्ब्रिज, 1932-1949

दीक्षितार, बी आर आर — मत्स्य पुराण-ए स्टडी, मद्रास, 1935

दूबे, लालमणी — अपराजितपृच्छा ए क्रिटिकल स्टडी. इलाहाबाद 1987

देसाई, पी बी — ए हिस्ट्री ऑफ कर्नाटक, धारवार, 1970

फ्रेबी, चार्ल्स — ए इन्ट्रोडक्शन टू इण्डियन आर्किटेक्चर, बाम्बे, 1963.

फर्कुहर, जे एन — एन आउटलाइन आफ द रिलिजियस लिटरेचर ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1920

फर्ग्युसन एण्ड बर्गेश — केव टेम्पुल्स ऑफ इण्डिया, लन्दन 1880.

फ्रेंच, जे सी — आर्ट ऑफ द पाल इम्पायर ऑफ बंगाल, आक्सफोर्ड, 1928.

फ्रेजर, जे जी — वरशिप आफ नेचर, लन्दन, 1926.

फ्रेडरिक, एल — इण्डियन टेम्पुल्स एण्ड स्कल्पचरस, लन्दन, 1959.

फर्ग्युसन, जेम्स : हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर (संशोधित) दिल्ली 1967.

फूशे, ए : दि विगिनिंग्स ऑफ बुद्धिस्ट आर्ट एण्ड

अदर एसेज, पेरिस, 1917

गोस्वामी, ए — इण्डियन टैम्पुल स्कल्पचर, कलकत्ता, 1959

ग्रिसवल्ड, ए डी — द रिलिजन ऑफ द ऋग्वेद, आक्सफोर्ड, 1923

ग्रुनवेडेल, ए — बुद्धिस्ट आर्ट इन इण्डिया, लन्दन, 1901

गगाधग्न, ए — गरुड पुराण-ए स्टडी, वाराणसी, 1972

घोष, अमलानन्द — जैन कला एव स्थापत्य, नई दिल्ली, 1975

गोस्वामी, बी के — द भक्ति-कल्ट इन एन्शिएन्ट इण्डिया, कलकत्ता, 1924

ग्रोसियर, बर्नाड — अकोर/ संशोधित संस्करण/, लन्दन, 1966

गागुली, डी सी — हिस्ट्री ऑफ द परमार डायनेस्टी, डेक्का, 1933

गेट, इ ए — हिस्ट्री ऑफ आसाम, कलकत्ता, 1963.

गोयेत्ज, एच — द आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ बीकानेर स्टेट, आक्सफोर्ड, 1950.

गोन्डा, जे : ऐसपेक्ट्स ऑफ अर्ली वैष्णविज्म, अर्टेच्ट, 1954.

गैरोला, वाचस्पति — भारतीय धर्म व्यवस्था, इलाहाबाद, 1962

गुप्ते, आर एस तथा महाजन, बी डी — अजन्ता एलोरा एण्ड औरंगाबाद केव्स, बम्बई, 1962.

गांगुली, एम.एन. : उड़ीसा एण्ड हरिमेन्स, कलकत्ता 1912.

गुप्ते, आर एस. : द आइक्रोग्राफी ऑफ दि बुद्धिस्ट स्कल्पचर्स ऑफ एलोरा, औरंगाबाद, 1964.

द आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ एहोल, बाम्बे, 1967

गागुली, ओ सी एण्ड चौधरी एस — कोणार्क, कलकत्ता, 1956.

घोष, एस पी — हिन्दू रिलिजियस आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर दिल्ली, 1982.

घोषाल, यू एन — द बेगनिंग्स ऑफ इण्डियन डिस्ट्रीयोग्राफी एण्ड अदर एसेस, कलकत्ता, 1944

हाजरा, आर सी — स्टडीज इन द उप-पुराणाज, वाल्यूम 1, कलकत्ता, 1958

हाजरा, आर सी — स्टडीज इन द पौराणिक रिकार्डस ऑन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, डेक्का, 1940

हाण्डा, देवेन्द्र . ओसियाँ हिस्ट्री, आर्कियोलाजी, आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर, दिल्ली, 1984

हॉपकिन्स, इ डब्ल्यू . एपिक माइथोलाजी, स्ट्रैंसवर्ग, 1915

द ग्रेट एपिक ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, 1969

द रिलिजन्स ऑफ इण्डिया, वोस्टन, 1895

हेनरी, काजेन्स : द चालुक्यन आर्किटेक्चर, कलकत्ता, 1926

हेराज, एच : स्टडीज इन पल्लव हिस्ट्री, बाम्बे, 1931

हैरिस, जे आर : द कल्ट ऑफ द हेवनली ट्विन्स, कैम्ब्रिज, 1906

हैवेल, इ बी — इण्डियन स्कल्पचर एण्ड पेण्टिंग (द्वितीय संस्करण), लन्दन, 1928

: द एन्शिएन्ट एण्ड मेडिवल आर्किटेक्चर

. ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1915

इलियट एण्ड डाउसन — भारत का इतिहास, जि०1, 1973, जि० 2-3,1974 आगरा, (हिन्दी अनु०)

जौहरी, मनोरमा, — चोल और उनकी कला, वाराणसी, 1977

जायसवाल, सुवीरा — द ओरिजिन एण्ड डेवलपमेट ऑफ वैष्णाविज्म, नई दिल्ली, 1967

जिम्मर, हेनरिच — द आर्ट ऑफ इण्डियन एशिया, 1955
मिथस एण्ड सिम्बल्स इन इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलाइजेशन, न्यूयार्क,1946

ज़ायसवाल, के पी — मनु एण्ड याज्ञवल्क्य, कलकत्ता, 1930

जैनास, एलिकी — खजुराहो, 1960.

जोशी, एन पी —
1 प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, पटना, 1979.
2 कुषाण कालीन विष्णु प्रतिमाएँ, वाराणसी, 1969.
3 आइक्रोग्राफी ऑफ बलराम, नई दिल्ली, 1979.
4. मथुरा की मूर्तिकला, मथुरा, 1966.

कनिघम, ए : दि स्तूप ऑफ भरहुत, लन्दन 10 दि एनशियन्ट ग्योग्राफी ऑफ इण्डिया, लंदन, 1870

कीथ, ए बी . ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर, आक्सफोर्ड, 1928.

कुमारस्वामी, ए के : हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन

		आर्ट, लन्दन, 1927 यक्षाज, वाशिंग्टन, 1928
कालिया, आशा		आर्ट ऑफ ओसियन टेम्पुल्स,नई दिल्ली, 1982
कुमारप्पा, बी.		द हिन्दू कान्सेप्शन ऑफ द डीटि, लन्दन, 1934
कौशाम्बी, डी डी		1 मिथ एण्ड रियल्टी, बाम्बे, 1962 2 द कल्चर एण्ड सिविलाइजेशन ऑफ एन्शिएन्ट इण्डिया, लन्दन, 1965 3. एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, बाम्बे, 1956.
कृष्णादेव	:	1. खजुराहो, नई दिल्ली, 1987. 2. इमैजेज ऑफ नेपाल, नई दिल्ली, 1984.
खरे, करुणा	:	प्रतिमाविज्ञान, लखनऊ 1981.
कविराज, गोपीनाथ,		भारतीय भक्ति कौर साधना, पटना
काणे, पी वी	:	हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पूना, वाल्यूम 1-5, 1930-1953.
कान्तेवाला, जी जी	·	कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द मत्स्य पुराण, बड़ौदा 1964.
क्रैमरिश, स्टेला	.	1. द हिन्दू टेम्पुल, 2 वाल्यूम, कलकत्ता, 1946. 2. इण्डियन स्कल्पचर, कलकत्ता, 1933.

	3 पाल एण्ड सेन स्कल्पचरस, कलकत्ता, 1939
लाल, कनवर	अप्सराज ऑफ खजुराहो, दिल्ली, 1966
	इमोर्टल खजुराहो, दिल्ली, 1965
लिपिन, एस्चिवन	इण्डियन मेडिकल स्कल्पचर, अमस्टरडम, 1978
मजूमदार, ए के	चालुक्याज ऑफ गुजरात, बाम्बे, 1956.
मैकडोनेल, ए ए	वेदिक ग्रामर, स्ट्रेसवर्ग, 1910.
	वैदिक माइथोलाजी, वाराणसी, 1963.
मैकडोनेल,ए ए एण्ड कीथ ए बी	वैदिक इण्डेक्स, वाराणसी, 1958
मुखर्जी, बी एन	ईस्ट इण्डियन आर्ट्स एण्ड स्टाइल ए स्टडी इन पैरलल ट्रेन्ड्स, नई दिल्ली, 1980.
मालवीय, बद्रीनाथ	श्री विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे मूर्तिकला, प्रयाग, 1960.
मित्रा, डी	भुवनेश्वर, नई दिल्ली, 1961.
मैक्समूलर, एफ	1. ए हिस्ट्री ऑफ एंशिएन्ट संस्कृत लिटरेचर, इलाहाबाद, 1917.
	2. लेक्चर्स आन द ओरिजिन एण्ड ग्रोथ ऑफ रिलिजन, वाराणसी, 1964.
मूर, जी सी	हिस्ट्री ऑफ रिलिजन्स वाल्यूम प्रथम, एडिनवर्ग, 1914.
मार्शल, जे.	गाइड टू सांची, कलकत्ता, 1918.

मेयर, जे जे — सेक्सुअल लाइफ इन एंशिएन्ट इण्डिया, लन्दन, 1930.

मोरगन, के डब्ल्यू — द रिलिजन्स ऑफ द हिन्दूज, न्यूयार्क 1953

मजूमदार, एन जी — ए गाइड टू दि स्कल्पचरस इन दि इण्डियन म्युजियम, भाग 1, दिल्ली 1937.

मजूमदार, आर सी .

1 इन्सक्रिप्शन ऑफ कम्बुज, कलकत्ता, 1953

2 द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, बाम्बे 1951.

3 हिन्दू कोलोनीज इन द फार ईस्ट, कलकत्ता, 1922.

4. हिस्ट्री ऑफ बंगाल, वाल्यूम प्रथम, डेक्का, 1943.

5 द एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, बाम्बे, 1955.

6. द वैदिक एज, लन्दन, 1954

माथुर, एन एल — स्कल्पचर इन इण्डिया, नई दिल्ली, 1972.

माथुर, विजयेन्द्र कुमार . ऐतिहासिक स्थानावली, शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1969.

मिश्र, जयशंकर : ग्यारहवीं शती का भारत, वाराणसी, 1968

मजूमदार, आर. सी. : दि स्ट्रगल फार अम्पायर, बम्बई, 1957.

मित्रा, इन्दुमति : प्रतिमा विज्ञान, प्रथम संस्करण, इन्दौर-2.

मिश्र, रमानाथ : भारतीय मूर्तिकला, प्रथम संस्करण, दिल्ली,

1978

मित्रा, आर एल — द एन्टीक्यूटीज ऑफ उड़ीसा, वाल्यूम 2, कलकत्ता, 1975-80

मुकर्जी, राधाकमल — ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन सिविलाइजेशन, वाल्यूम प्रथम, बाम्बे, 1958.

कास्मिक आर्ट ऑफ इण्डिया, न्यूयार्क, 1965

द कल्चर एण्ड आर्ट ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1959

द सोशल फंक्शन ऑफ आर्ट, बाम्बे, 1951.

मुखर्जी, एस सी — ए स्टडी ऑफ वैष्णविज्म, कलकत्ता, 1966.

मुन्शी, के एम — इण्डियन टेम्पुलस्कल्पचर, नई दिल्ली, 1956.

द सेज ऑफ एण्डियन स्कल्पचर, बाम्बे, 1957.

मुकर्जी, आर के — द गुप्त इम्पायर, बाम्बे, 1948.

हिन्दू सिविलाइजेशन, लन्दन 1936

मेहता, आर जे — मास्टर पीसर्स ऑफ इण्डियन स्कल्पचर, बाम्बे, 1968.

कोणार्क, दि सन टेम्पुल ऑफ लव, बाम्बे, 1969.

मास्टर पीसेज ऑफ दि फिमेल फार्म इन इण्डियन आर्ट, बाम्बे, 1972.

मैक्निकोल, एन — इण्डियन थीज्म, लन्दन, 1915.

मोतीचन्द्र — स्टोन स्कल्पचर्स, इन द प्रिन्स ऑफ वेल्स म्युजियम, बाम्बे, 1974
प्राचीन भारतीय वेशभूषा, प्रयाग, स 2007

मैके, इ जे एच — द इन्डस सिविलाइजेशन, लन्दन, 1935.

नागर, मदन मोहन — पुरातत्व संग्रहालय, मथुरा की परिचय पुस्तक, इलाहाबाद, 1947.

निवेदिता, एस एण्ड कुमारस्वामी, ए — मिथ्स ऑफ द हिन्दूज एण्ड बुद्धिस्ट्स, लन्दन, 1929.

ओल्डेन वर्ग, एच — एन्शिएण्ट इण्डिया, शिकागो, 1898.

पुषालकर, ए डी — द महाभारत इट्स हिस्ट्री एण्ड करेक्टर, कल्चरल हेरिटेज ऑफ इण्डिया, भाग2, स्टडीज इन द एपिक्स एण्ड पुराणाज, बाम्बे, 1955

पुरी, बी एन — 1 इण्डिया इन द टाइम ऑफ पतंजलि, बाम्बे, 1957.
2 सुदूर पूर्व में भारतीय संस्कृति और उनका इतिहास, लखनऊ 1975.

पाटिल, डी आर : कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द वायु पुराण, पूना, 1946.

पार्जिटर, एफ.इ . एन्शिएन्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडीशन, लन्दन, 1922.

पाण्डेय, जी सी : 1. ऐन एप्रोच टू इण्डियन कल्चर एण्ड

सिविलाइजेशन, वाराणसी, 1985

2 फाउन्डेशन ऑफ इण्डियन कल्चर, दिल्ली, 1984

3 भारतीय परम्परा के मूल स्वर, नई दिल्ली, 1981.

पाण्डेय, आर बी — हिन्दू संस्कार, वाराणसी, 1949.

पांण्डेय, वी पी — हरिवश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन, लखनऊ 1960

पाण्डेय, दीनबन्धु — देवताच्र्चानुकीर्तन (हिन्दू देव प्रतिमा विज्ञान), विद्याकिशोर निकेतन, वाराणसी 1978

पाठक, वी एस — हिस्ट्री ऑफ शैव कल्टस इन नार्दन इण्डिया फ्राम इन्सक्रिप्शन, वाराणसी, 1960.

एन्शिएन्ट हिस्टोरियन्स आफ इण्डिया, बाम्बे, 1966.

प्रकाश, विद्या — खजुराहो, बाम्बे, 1967.

प्रंमोद चन्द्र — स्टोन स्कल्पचर इन द इलाहाबाद म्युजियम, प्रकाशन संख्या 2, अमेरिकन इन्स्टीटयूट ऑफ इण्डियन स्टडीज, राम नगर, वाराणसी, 1965-66 / बाम्बे इण्डिया

प्रभु, पी एन — हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, बाम्बे, 1963.

पिग्गट, एस — प्रीहिस्टोरिक इण्डिया, लन्दन, 1961.

राय, सी क्रेवेन — ए कन्साइज हिस्ट्री ऑफ इण्डियन आर्ट, न्यूयार्क, 1979.

राय, गोविन्द चन्द्र — प्राचीन भारत में लक्ष्मी प्रतिमा, वाराणसी,

1964

रायचौधरी, एच सी
1 मैटेरियल्स फार द स्टडी आफ द अर्ली हिस्ट्री ऑफ द वैष्णव सैक्टस, कलकत्ता, 1920
2 पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एशिएन्ट इण्डिया, कलकत्ता, 1950
3 स्टडीज इन इण्डियन एन्टीक्यूटीज, कलकत्ता, 1932

रधवा, एम एस एण्ड रंधवा, डी एस — इण्डियन स्कल्पचर, बम्बई 1985

रंघवन, वी — द इण्डियन हेरिटेज, बंगलौर, 1953.

राजगुरू, एस एन — इन्सक्रिप्शन ऑफ उड़ीसा, वाल्यूम 2, भाग 2, भुवनेश्वर, 1961

राधाकृष्णान, एस — भगवद्गीता, लन्दन, 1938
हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ, लन्दन, 1939

राय, यू एन — प्राचीन भारत मे नगर तथा नागरिक जीवन, इलाहाबाद, 1965

रायकृष्णदास — भारतीय मूर्ति कला,/तृतीय संस्करण/ काशी, सं. 2009.

रांय, एस एन — पौराणिक धर्म एव समाज, इलाहाबाद, 1968.

राव, टी ए गोपीनाथ : एलिमेन्ट्स ऑफ हिन्दू आइवनोग्राफी, खण्ड 1, भाग 1, और 2, खण्ड 2, भाग 1 और 2, मद्रास,1914–16

रीनेच, एस : कल्ट्स मिथ्स एण्ड रिलिजन्स, लन्दन,

1912

रीनो, एल — वैदिक इण्डिया, कलकत्ता, 1857

रे, एन आर — मौर्य एण्ड शुग आर्ट, कलकत्ता, 1845

रें, एच सी — डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्दन इण्डिया, वाल्यूम 2, कलकत्ता, 1931-36

रैनाडे, पी बी — एलोरा पेण्टिग्स, औरंगाबाद, 1980

रैप्सन, इ जे — एशिएन्ट इण्डिया, कैम्ब्रिज, 1914

रौलैण्ड, बी — द आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ इण्डिया, लन्दन, 1956

सरकार, डी सी — स्टडीज इन द रिलिजियस लाइफ ऑफ एन्शिएन्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया, दिल्ली, 1970

संरस्वती, एस के : अर्ली स्कल्पचर ऑफ बंगाल, सम्बोधि (संस्करण), 1962

सहाय, भगवन्त . आइक्नोग्राफी ऑफ माइनर हिन्दू एण्ड बुद्धिस्ट डाइटीज, दिल्ली, 1975

स्मिथ, वी ए — अर्ली हिस्ट्री ऑफ इंडिया, (चतुर्थ सस्करण), आक्सफोर्ड, 1924

ए हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सिलोन (द्वितीय संस्करण),आक्सफोर्ड, 1930

सिद्दीकी, एस . ए पिक्चरल गाइड टू औरंगाबाद,दौलताबाद, एलोरा एण्ड अजन्ता (चौदहवां संस्करण) औरंगाबाद, 1977

मुधाकर, वी एम		क्रिटिकल स्टडीज इन द महाभारत, पूना, 1944
सूर्यकान्त		वैदिक देवशास्त्र, (ए.ए. मैकडोनेल लिखित वैदिक माइथोलाजी का हिन्दी रूपान्तर) दिल्ली, 1961
सोमपुरा, प्रभाशकर ओ०		भारतीय शिल्प सहिता, बम्बई, 1975
संकालिया, एच डी		प्री हिस्ट्री एण्ड प्रोटो हिस्ट्री ऑफ इडिया एण्ड पाकिस्तान, बाम्बे, 1963
मिन्हा, चितरजन प्रसाद		अर्ली स्कल्पचर ऑफ बिहार, पटना, 1980
सिन्हा, वी पी		आर्कियोलाजी एण्ड आर्ट ऑफ इण्डिया, दिल्ली, 1979
मिह, वी पी		भारतीय कला को बिहार की देन, पटना स 2014
मिह, श्रीभगवान		गुप्तकालीन हिन्दू देव प्रतिमाएँ, प्रथम खण्ड, दिल्ली, 1982
सिंह, एस बी		ब्राह्मनिकल आइकन्स इन नार्दन इण्डिया, सागर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1977
शर्मा, दशरथ	.	अर्ली चौहान डायनेस्टीज, दिल्ली 1955 राजस्थान थ्रू द एजेज, वाल्यूम 1, बीकानेर, 1966
शर्मा, तुलसी राम		भरहुत-स्तूप, दिल्ली, वाराणसी, 1975
शर्मा, डी एस	:	हिन्दूज्म थ्रू द एजेज, बाम्बे
शर्मा, आर एस	.	ऐसपेक्ट्स ऑफ पोलिटिकल आइडियास एंड इन्स्टीट्यूशन इन एन्शिएन्ट इण्डिया,

	दिल्ली, 1958
शर्मा, बी एन	जैन प्रतिमाएँ, दिल्ली, 1979
शर्मा, जवाहर लाल	श्रीमद् भागवत का सास्कृतिक अध्ययन, जयपुर, 1984
शर्मा, जी आर	हिस्ट्री टू प्री हिस्ट्री, प्राचीन इतिहास विभाग इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित 1981
शर्मा, दशरथ	अर्ली चौहान डायनेस्टीज, दिल्ली, 1959
शास्त्री, के ए एन	ए कम्प्रहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, बाम्बे, 1957
	हिस्ट्री ऑफ साउथ इण्डिया, बाम्बे, 1952
	डेवलपमेन्ट ऑप रिलिजन इन साउथ इण्डिया, बाम्बे, 1963
	सोर्सेज ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, बाम्बे, 1964
शास्त्री, एच के	साउथ इण्डियन इमैजेज ऑफ गाड्स एण्ड गाडेसेस, मद्रास, 1916
शिवरामभूर्ति, सी	इण्डियन स्कल्पचर, नई दिल्ली, 1961
शुक्ल द्विजेन्द्रनाथ	प्रतिमा-विज्ञान, लखनऊ, सं 2013
श्रीनिवासन, के आर	टेम्पुल्स ऑफ साउथ इण्डिया, नई दिल्ली, 1971
श्रीवास्तव, आनन्द	एलोरा की ब्राह्मण देव प्रतिमाएँ, इलाहाबाद, 1988
श्रीवास्तव, ए एल	लाइफ इन सॉची स्कल्पचर, नई दिल्ली, 1983
श्रीवास्तव, बलराम	आइनोग्राफी ऑफ शक्ति · ए स्टडी बेस्ड

आन श्रीतत्वनिधि, वाराणसी, 1981

श्रीवास्तव, बृजभूषण — प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान, वाराणसी, 1981

श्रीवास्तव, के एम — अकोरवाट एण्ड कल्चरल टाइस विथ इडिया, नई दिल्ली, 1987

श्रीवास्तव, वी सी — सन वरशिप इन एन्शिएन्ट इण्डिया, इलाहाबाद, 1972

सिंह, एम०पी० — लाइफ इन एन्शियण्ट इण्डिया, पृ० 134, वाराणसी, 1981

तकाकुस०, जे०ए० — ए रिकार्ड ऑफ दि बुद्धिस्ट रिलिजन, आक्सफोर्ड, 1986

टायलर, इ बी — रिलिजन इन द प्रीमिटिव कल्चर, न्यूयार्क, 1958

तिवारी, एस पी — हिन्दू आइक्रोग्राफी, नई दिल्ली, 1979

तिवारी, जे एन — गाडेस कल्टस इन एशिएन्ट इण्डिया, नई दिल्ली, 1985.

त्रिवेदी, आर डी — आइक्राग्राफी ऑफ पार्वती, नई दिल्ली, 1981

त्रिपाठी, आर एस — हिस्ट्री ऑफ कन्नौज, वाराणसी, 1937

त्रिपाठी, एल के — टेम्पुल्स ऑफ वारोली, वाराणसी, 1975.

थप्लियाल, के के — स्टडीज इन एन्शिएन्ट इण्डियन सील्स, लखनऊ 1972.

थामस, पी — एपिक मिथ्स एण्ड लेजेन्ड्स ऑफ इण्डिया, बाम्बे.

उपाध्याय, वासुदेव
1 प्राचीन भारतीय स्तूप गुहा एव मन्दिर, पटना, 1972
2 प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, वाराणसी, 1970

उपाध्याय, बलदेव
1 भारतीय दर्शन, वाराणसी, 1979
2 संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाराणसी, 1978.
3 भागवत सम्प्रदाय, काशी, स 2010
4. पुराण विमर्श, वाराणसी, 1965

उपेन्द्र मोहन — देवतामूर्ति प्रकरण एण्ड रूप मण्डन, कलकत्ता, 1936.

उपाध्याय, बी एस — कालिदास का भारत / दो भाग/, ज्ञानपीठ, वाराणसी, 1964

विश्वास, टी के एण्ड झा, भोगेन्द्र — गुप्त स्कल्पचरस, भारत कला भवन, नई दिल्ली, 1985.

वैद्य, सी वी — महाभारत ए क्रिटिसिज्म, बाम्बे, 905
एपिक इण्डिया, बाम्बे, 1907
हिस्ट्री ऑफ मेडिकल हिन्दू इण्डिया, वाल्यूम 3, पूना, 1921-26

वोगेल, जे फ — इण्डियन सर्पेन्ट-लोरे आर द नागाज इन हिन्दू लेजेण्ड्स एण्ड आर्ट, लन्दन, 1926

वेकटेश्वर, एस वी — इण्डियन कल्चर थ्रू द एजेज, वाल्यूम 2, लन्दन, 1928, 1932

वेवर, मैक्स — द रिलिजन्स ऑफ इण्डिया, इलिन्वास, 1958

वेलिस — कास्मोलाजी ऑफ ऋग्वेद, लन्दन, 1887

विद्यालंकार, सत्यकेतु — दक्षिण-पूर्वी और दक्षिणी एशिया मे भारतीय संस्कृति, नई दिल्ली, 1979

विन्टरनित्ज, एम — ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, खण्ड 1, (पुनर्मुद्रित), नई दिल्ली, 1977

विल्किन — हिन्दू माइथोलाजी, वैदिक एण्ड पौराणिक, कलकत्ता, 1882

विलियम्स, मोनियर — रिलिजियस थाट एण्ड लाइफ इन इण्डिया, लन्दन 1891

ब्राह्मनिज्म एण्ड हिन्दूज्म, लन्दन, 1883

वूडरोफे, सर जान — इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रसार (द्वितीय संस्करण), मद्रास, 1952

विल्सन, एच एच — रिलिजियस सेक्ट ऑफ द हिन्दूज, कलकत्ता, 1958

वाटर्स, थामस — आन युवान च्वाग (ट्रेवेल्स इन इण्डिया) लदन, 1904-5

याजदानी, जी (स.) — दक्कन का प्राचीन इतिहास, दिल्ली, 1977

यदुवशी, जे — शैव मत, पटना, 1955.

यादव, रूदल प्रसाद — प्राचीन भारतीय प्रतिमा शास्त्र, वाराणसी, 1985.

जर्नल

- आर्कियोलाजी सर्वे ऑफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट
- आर्कियोलाजी सर्वे ऑफ वेस्टर्न इण्डिया
- आर्टिवस एशियाई (स्विट्जरलैण्ड)
- इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली, कलकत्ता
- ईस्ट एण्ड वेस्ट (रोम)
- उडीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल
- एन्शिएन्ट इण्डिया (द जर्नल ऑफ द आर्कियोलाजिकल डिपार्टमेन्ट)
- एनल्स ऑफ भण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट (पूना)
- एपिग्राफी इण्डिका
- जर्नल ऑफ बाम्बे ब्रान्च ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी, बाम्बे
- जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी, बंगाल
- जर्नल ऑफ द ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ौदा
- जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता
- जर्नल ऑफ द बिहार एण्ड उडीसा रिसर्च सोसायटी
- जर्नल ऑफ आन्ध्र हिस्टोरिकल रिसर्च सोसायटी
- जर्नल ऑफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी
- जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, त्रिवेन्द्रम
- जर्नल ऑफ द ओरियन्टल रिसर्च, मद्रास
- जर्नल ऑफ द गुजरात रिसर्च सोसायटी, बम्बई
- जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसायटी, लेटरस, कलकत्ता
- जर्नल ऑफ द रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल
- जर्नल ऑफ द इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरियन्टल आर्ट
- जर्नल ऑफ द एन्शिएन्ट इण्डियन हिस्ट्री, कलकत्ता

- जर्नल ऑफ बिहार रिसर्च सोसायटी
- जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्टोरिकल सोसायटी
- जर्नल ऑफ दी बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी
- मेम्वायर ऑफ द आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, कलकत्ता
- ललित कला (बाम्बे)

चित्र सूची

चित्र	मूर्ति का नाम	प्राप्ति स्थल	संग्राहलय	काल
1	यक्षी	दीदारगज, पटना	पटना	तीसरी-दूसरी शती ई०पू०
2	चन्द्रायक्षी, चुलकोका देवता तथा सुदर्शनायक्षी	भरहुत स्तूप का तोरण द्वार	-	दूसरी शती, ई०पू०
3	अप्सरा	भरहुत, प्रसेनजित स्तम्भ	कलकत्ता	दूसरी शती, ई०पू०
4	परिया	म०प्र०	डेवनरकला	आठवी शती
5	अप्सरा	चिदम्बरम मन्दिर तमिलनाडु	-	नवी शती
6	अप्सग	कुम्भकोन, तजाउर	-	नवी शती
7	अप्सग	खजुराहो, म०प्र०	भारतीय संग्राहलय कलकत्ता न०ए० 24228	दसवी शती
8	अप्सरा	खजुराहो म०प्र० पार्श्वनाथ मदिर	-	दसवी शती
9	अप्सरा	खजुराहो म०प्र० पार्श्वनाथ मंदिर	-	दसवी शती
10	सुर-सुन्दरी	हिगलाजगढ, मन्दसौर, मन्दिर की दीवार पर	-	दसवी शती
11	सुर-सुन्दरी	हिगलाजगढ, मन्दसौर म०प्र०	केन्द्रीय संग्रहालय इन्दौर	दसवी शती
12	सुर-सुन्दरी	हिगलाजगढ़, मन्दसौर म०प्र०	केन्द्रीय सग्रहालय इन्दौर	दसवी शती
13	अप्सरा	म०प्र०	रीवा, कोतवाली	दसवी शती
14	अप्सरा	म०प्र०	रीवा, कोतवाली	दसवी शती

15	अप्सरा	म०प्र०	रीवा, कोतवाली	दसवी शती
16	अप्सरा	म०प्र०	रीवा कोतवाली	दसवी शती
17	अप्सरा	गुर्गी, म०प्र०	रीवा कोतवाली	दसवी शती
			न०जी० 82	
18	सुर-सुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	दसवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1047	
19	सुर-सुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	बारहवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1051	
20	मुर-सुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	बाहरवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1050	
21	मुर-मुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	बारहवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1048	
22	सुर-सुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	बाहरवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1014	
23	सुर-सुन्दरी	जमसोत	इलाहाबाद	बारहवी शती
		इलाहाबाद उ०प्र०	न० 1036	
24	अप्सरा	म०प्र०	धुवेला, न०97	बारहवी शती
25	अप्सरा	नारायणपुर, कर्नाटक	गवर्नमेट म्युजियम	बारहवी शती
			कल्याणी	
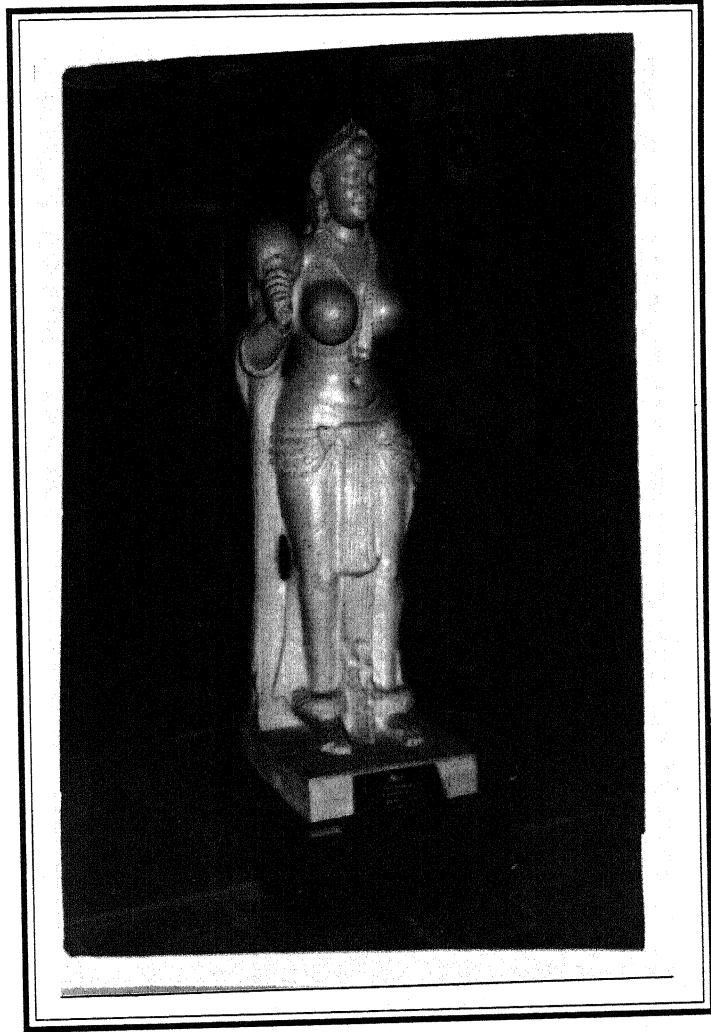
चित्र संख्या 1

चित्र संख्या 2

चित्र संख्या 3

चित्र संख्या 4
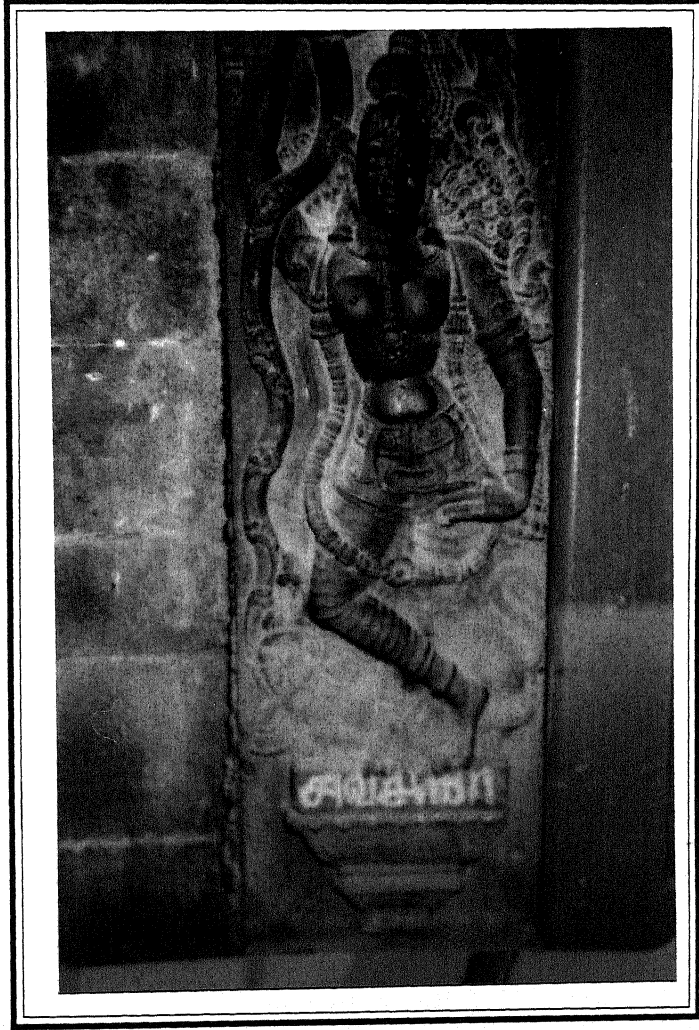
चित्र संख्या 5
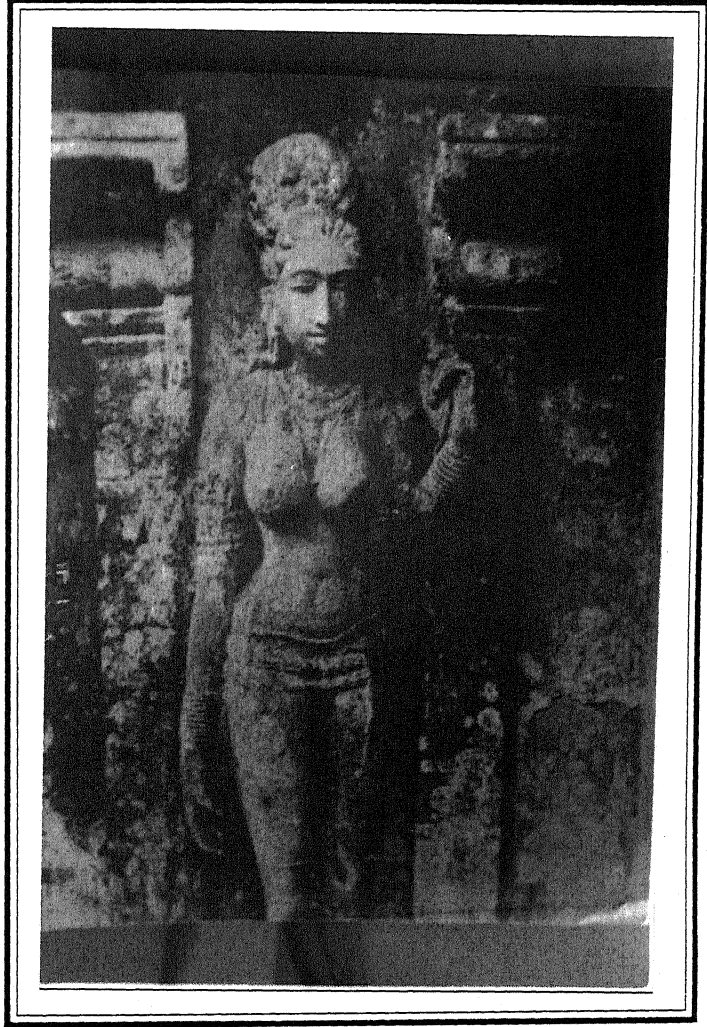
चित्र संख्या 6

चित्र संख्या 7
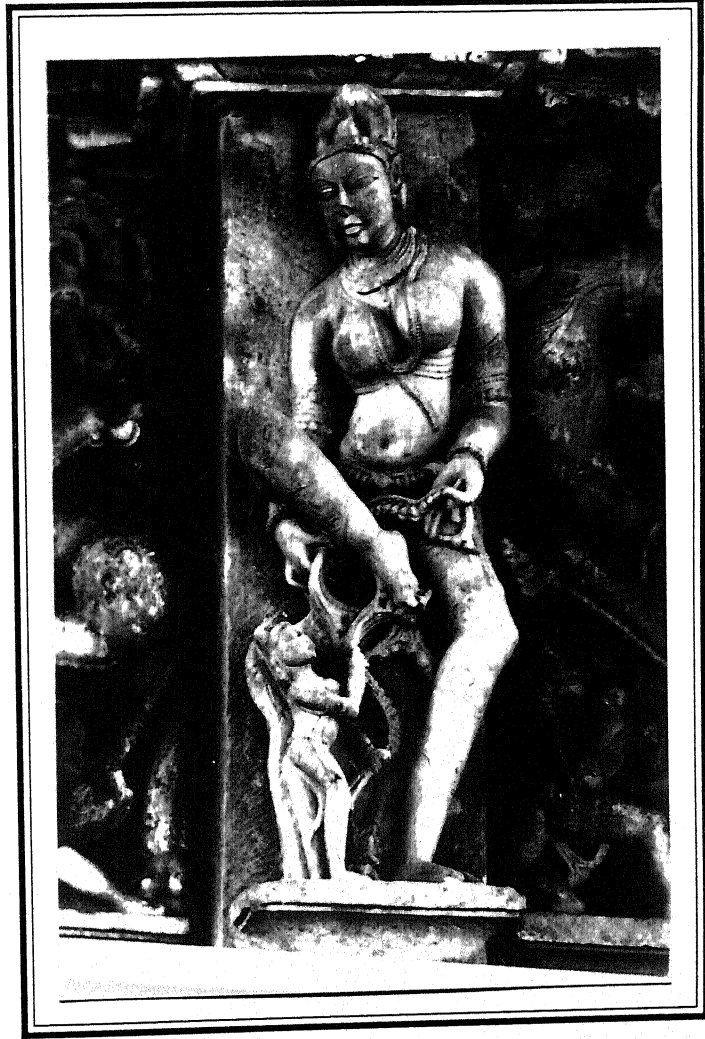
चित्र संख्या 8
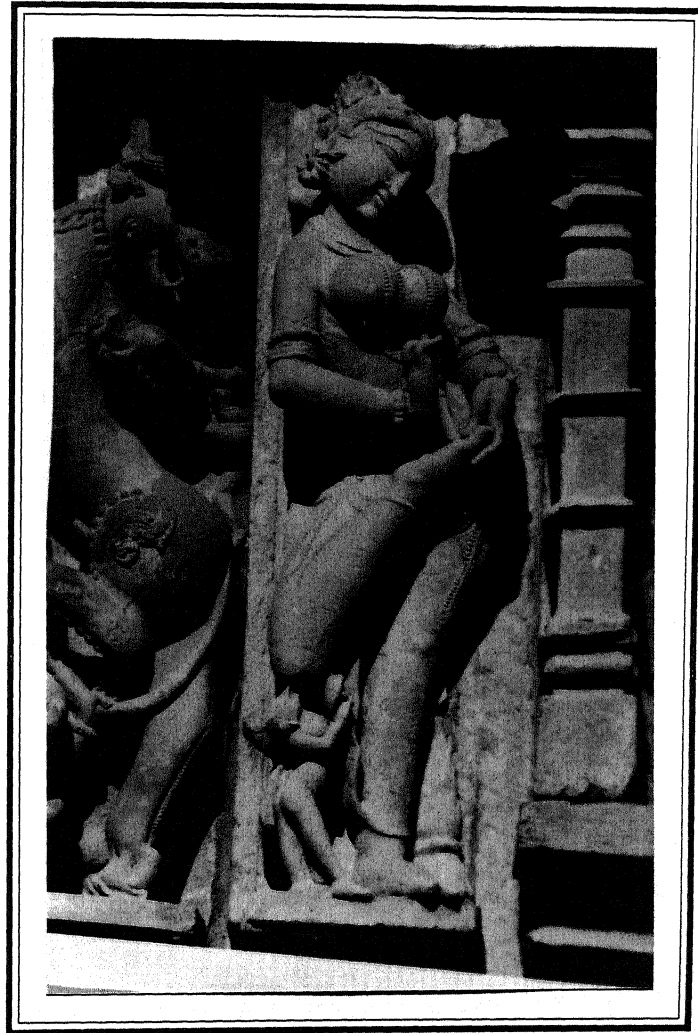
चित्र संख्या 9

चित्र संख्या 10
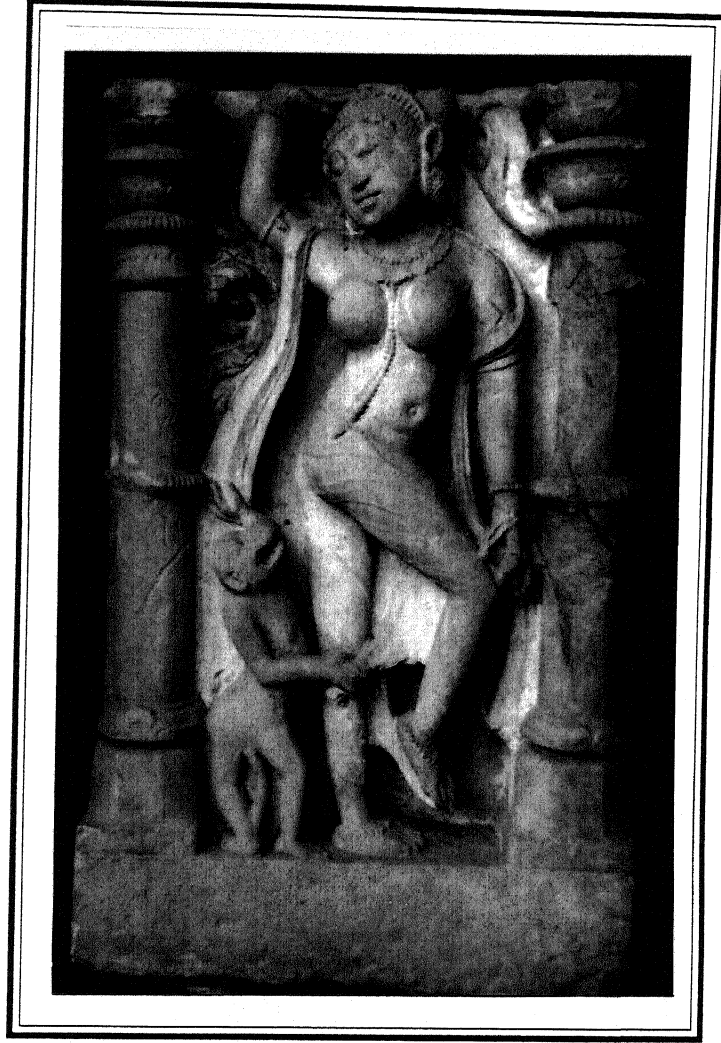
चित्र संख्या 11

चित्र संख्या 12
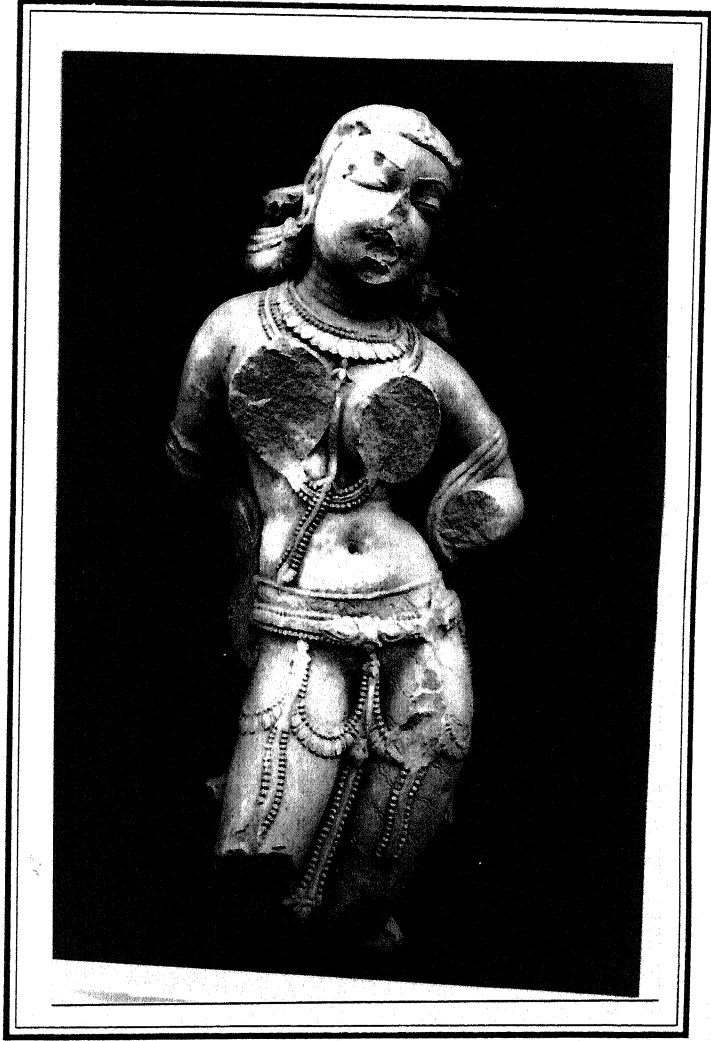
चित्र संख्या 13

चित्र संख्या 14

चित्र संख्या 15
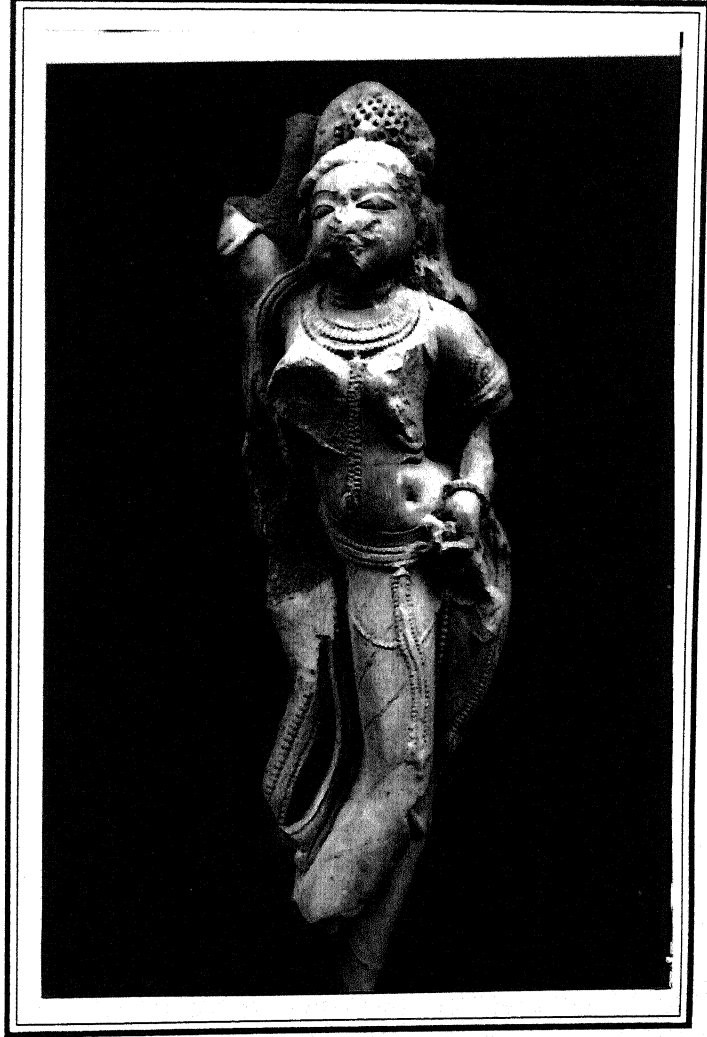
चित्र संख्या 16
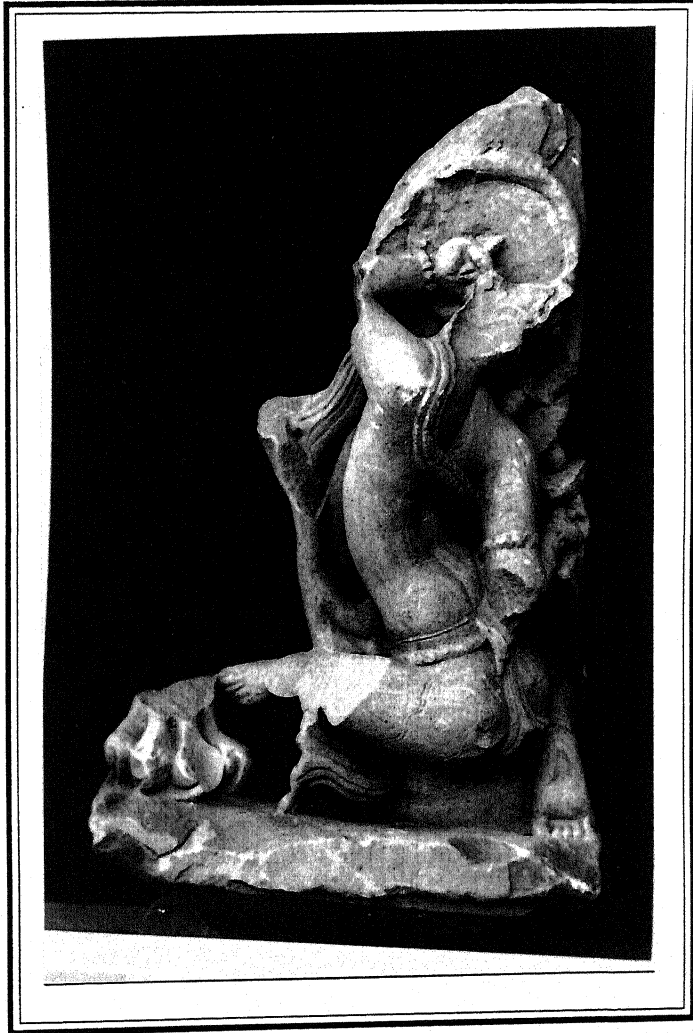
चित्र संख्या 17

चित्र संख्या 18
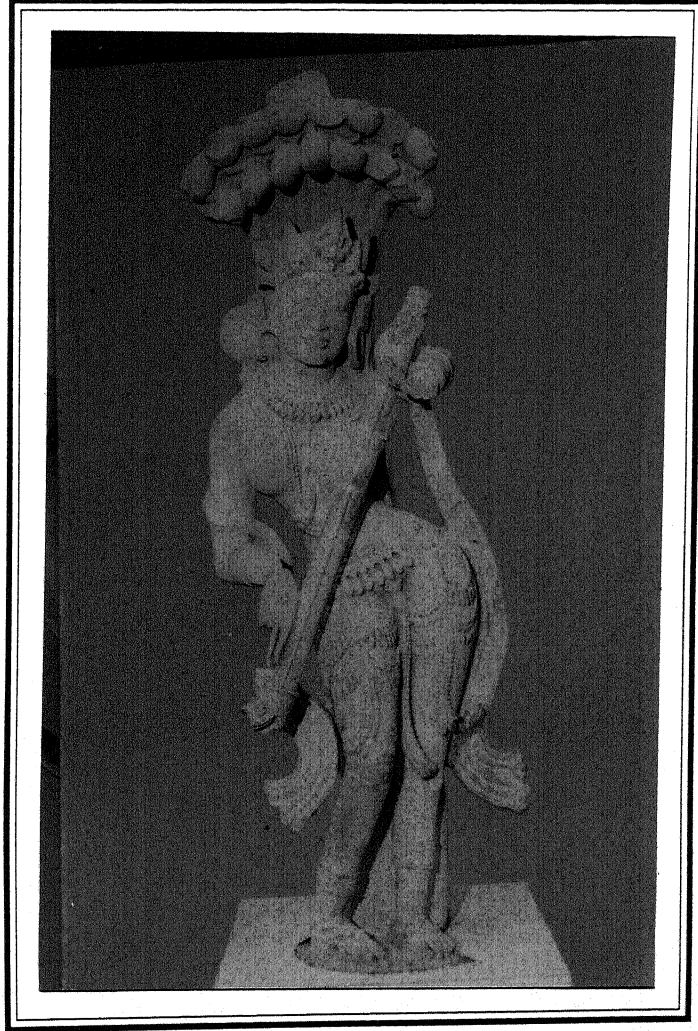
चित्र संख्या 19

चित्र संख्या 20
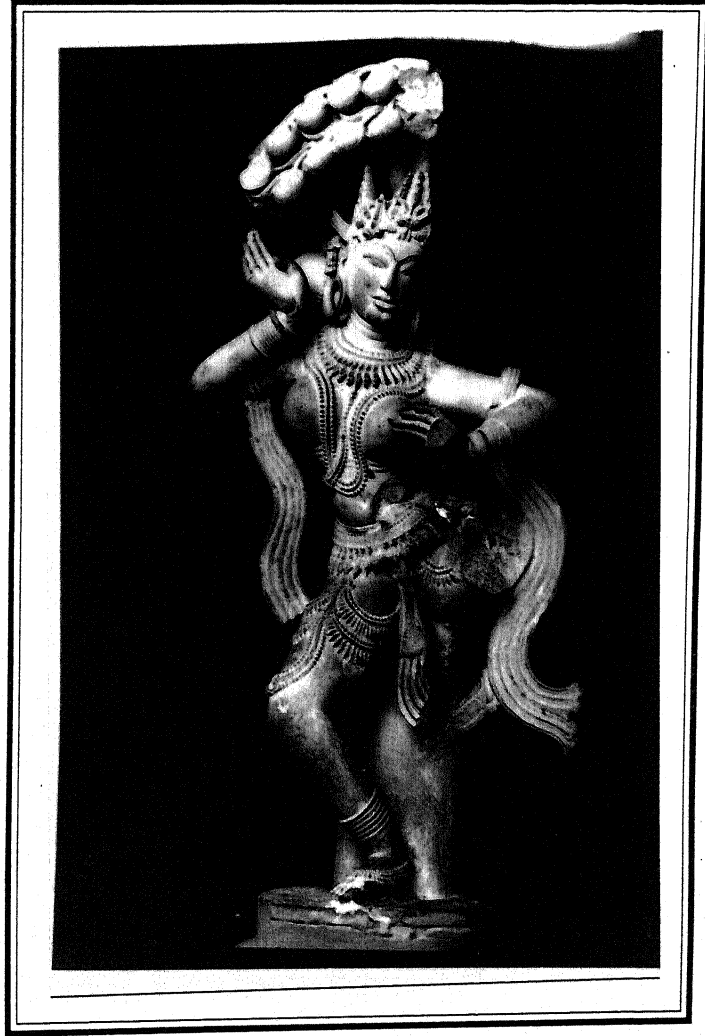
चित्र संख्या 21

चित्र संख्या 22

चित्र संख्या 23

चित्र संख्या 24

चित्र संख्या 25